प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकार कार्यालय
हीराबाग, पो० गिरगाँव, बम्बई ४

चौथी बार
मई, १९५३

मुद्रक
रघुनाथ दिपाजी देसाई,
न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,
६, केळेवाड़ी, गिरगांव, बम्बई ४.

दो शब्द

पाठक पूछ सकते हैं कि 'ग्रामीण समाज' जब सुलभ साहित्यमालामें पहले 'रमा' नाटकके रूपमें प्रकाशित हो चुका है, तो उसे अब उपन्यासके रूपमें निकालनेकी क्या आवश्यकता थी ?

बात यह है कि साहित्यमें नित्य अनगिनती लेखक उदय होते और अस्त होते रहते हैं, परन्तु शरद्बाबू उनसे निराले हैं। वे अब हमारे लिए केवल मनोरञ्जनकी वस्तु ही नहीं रह गये हैं, किन्तु, कलाकारों और आलोचकोंके लिए गम्भीर अध्ययनकी वस्तु बन गये हैं। अब हम केवल यही जानकर सतुष्ट नहीं हो जाते कि वे उपन्यास और कहानी कैसी लिखते थे, बल्कि हम यह भी जानना चाहते हैं कि अगर वे उसी प्लाटपर नाटक लिखते तो कैसा लिखते। जो बात नाटकमें होती है वह उपन्यासमें नहीं आती और जो उपन्यासमें आती है वह नाटकमें नहीं। अगर हम एक एक ही प्लाटको लेकर लिखी हुई एक ही लेखककी दो विभिन्न रचनाओंका अध्ययन करें, तो उस लेखककी कलाके तत्त्वोंके भीतर अधिक अन्तर्दृष्टि पा सकते हैं। आदिकलाकार महामुनि भरतने अपने नाट्य-शास्त्रमें एक 'नेपथ्य-रस' का उल्लेख किया है जिसका आस्वाद हम नाटकोंमें ही पा सकते हैं। और चूँकि उपन्यास एक आधुनिक चीज है, इसलिए हम उसका एक 'उपन्यास-रस' अलग मान सकते हैं। हमें देखना चाहिए कि 'नेपथ्य-रस' और 'उपन्यास-रस' मेंसे किसकी उद्भावना करनेमें शरद्बाबू अधिक सफल हुए हैं।

शरद्बाबूका उपर्युक्त प्रकारका अध्ययन सुलभ करनेके लिए ही हम 'रमा' को उपन्यासके रूपमें फिर पेश कर रहे हैं।

प्रकाशक

ग्रामीण समाज

१

वेणी घोषालने ज्यों ही मुकर्जी महाशयके घरके आँगनमें पैर रक्खा, त्यों ही उन्हें सामने एक प्रौढ़ा स्त्री दिखाई दी। उन्होंने कहा—यह तो मौसी हैं। रमा कहाँ है?

मौसी उस समय पूजा कर रही थीं। उन्होंने रसोईघरकी तरफ इशारा कर दिया। वेणीने वहाँसे चलकर और रसोईघरके दरवाजेके पास पहुँचकर कहा—क्यों रमा, तुमने कुछ निश्चय किया कि क्या करोगी?

जलते हुए चूल्हेपरसे खौलती हुई कड़ाही उतारकर और जमीनपर रखकर रमाने सिर उठाकर देखा और पूछा—बड़े भइया, किस बारेमें?

वेणीने कहा—बहन, वही तारिणी चाचाके श्राद्धके बारेमें। रमेश तो कल यहाँ आ पहुँचा। मालूम होता है कि वह अपने बापका श्राद्ध खूब धूमधामसे करेगा। तुम जाओगी या नहीं?

रमाने चकित होकर आँखें फाड़ते हुए कहा—मैं जाऊँगी तारिणी घोषालके घर?

वेणीने कुछ लज्जित होकर कहा—हाँ बहन, यह तो मैं भी जानता हूँ। और चाहे जो हो, पर तुम लोग किसी तरह वहाँ नहीं जाओगी। लेकिन सुना है कि वह खुद सब लोगोंके यहाँ जा जाकर निमन्त्रण देगा। दुष्ट बुद्धिमें तो वह अपने बापपर ही गया है। अगर वह तुम्हारे यहाँ भी आया, तो तुम क्या कहोगी?

रमाने बिगड़कर उत्तर दिया—मैं कुछ भी न कहूँगी, दरवाजेपर दरबान ही कह देगा।

पूजामें लगी हुई मौसीके कानोंमें ज्यों ही दलबन्दीकी यह रुचिकर आलोचना पहुँची, त्यों ही वह पूजा छोड़कर उठीं और यहाँ आ पहुँचीं। अभी उनकी बहनौतिनकी बात पूरी भी न होने पाई थी कि वह गरमागरम घानकी खीलकी तरह चटककर बोलीं—दरबान क्यों कहने लगा? मैं क्या कहना नहीं

जानती ? उस बदमाशको तो मैं ऐसी ऐसी बातें सुनाऊँगी कि फिर कभी इस घरमें पैर ही न रखेगा। तारिणी घोषालका लड़का निमन्त्रण देने आवेगा हमारे घर ? वेणी माधव, मैं कोई बात भूली नहीं हूँ। तारिणी अपने इसी लड़केके साथ हमारी रमाका व्याह करना चाहता था। तब तक हमारे यतीन्द्रका जन्म नहीं हुआ था। तारिणीने सोचा था कि यह व्याह हो जानेपर यदुनाथ मुकर्जीकी सारी सम्पत्ति हमारी मुट्ठीमें आ जायगी। समझ गये न बेटा वेणी ! लेकिन जब वह व्याह नहीं हुआ, तब इसी भैरव आचार्यसे न जाने कितने जप तप और टोने टोटके कराके उसने मेरी बेटीके भाग्यमें ऐसी आग लगा दी कि छः महीने भी न बीतने पाये कि मेरी बच्चीके हाथकी चूड़ियाँ टूट गईं और माथेका सेंदुर पुँछ गया। छोटी जातिका होकर चाहता था यदु मुकर्जीकी लड़कीको अपनी बहू बनाना ! हरामज़ादेकी मौत भी वैसी ही हुई, लड़केके हाथकी आग तक नसीब न हुई। आग लगे छोटी जातिके मुँहमें !

इतना कहकर मौसी इस तरह हाँफने लगीं कि मानो कुश्ती लड़कर खाली हुई हों। बार बार 'छोटी जाति' 'छोटी जाति' सुनकर वेणीका मुँह उतर गया, क्योंकि तारिणी घोषाल आखिर उसके चाचा ही थे। रमाने यह देखकर मौसीको कुछ फटकारते हुए कहा—क्यों मौसी, तुम किसकी जातिके बारेमें इस तरहकी बातें करती हो ? जाति तो किसीके हाथकी गढ़ी हुई चीज़ नहीं है। जिसका जिस जातिमें जन्म हुआ हो, उसके लिए वही जाति अच्छी है।

वेणीने कुछ लज्जित भावसे मुस्कराते हुए कहा—नहीं रमा, मौसीने जो कुछ कहा है, वह ठीक ही कहा है। बहन, तुम इतने बड़े कुलीनके घरकी लड़की ठहरीं। भला तुम्हें हम लोग अपने घर ला सकते हैं ? छोटे चाचाका इस तरहकी बात जबानपर लाना ही बे-अदबी करना था। और जो टोने-टोटकेकी बात कहती हो, सो वह ठीक ही है। दुनियाका कोई काम ऐसा नहीं जो छोटे चाचा और यह साला भैरव आचार्य न कर सकता हो। यही भैरव आज कल रमेशका मुरब्बी बना हुआ है।

मौसीने कहा—हाँ वेणी, यह तो जानी-समझी बात है। दस-बारह बरससे तो देशमें आया नहीं। आखिर इतने दिनों तक वह था कहाँ ?

वेणीने कहा—मौसी, भला मुझे क्या मालूम ! छोटे चाचाके साथ जिस

तरहका वर्ताव तुम लोगोंका था, उसी तरहका हम लोगोंका था। सुनता हूँ कि इतने दिनों तक वह न जाने बम्बई या और कहीं था। कोई कहता है वह डाक्टरी पास करके आया है और कोई कहता है कि वकील होकर आया है। और कोई कहता है कि यह सब धोखा है। क्योंकि लौंडा बड़ा शराबी है। जब घर आकर पहुँचा, तब उसकी आँखें अड़हुलके फूलकी तरह लाल थी।

मौसीने कहा—यह बात है? तब तो इसे घरमें घुसने देना ही ठीक नहीं।

वेणीने बहुत उत्साहसे जरा सिर हिलाकर कहा—कभी नहीं घुसने देना चाहिए। क्यों रमा, तुम्हें रमेशकी याद तो है न?

अपने दुर्भाग्यका प्रसंग छिड़नेपर रमा मन ही मन लज्जित हो रही थी। उसी सलज्ज भावसे मुस्कराती हुई बोली—याद क्यों नहीं है। मुझसे कुछ बहुत बड़े तो हैं नहीं। और फिर शीतला-तल्लेवाली पाठशालामें हम लोग साथ ही पढ़ा करते थे। लेकिन हाँ, उनकी माँका मरना मुझे बहुत अच्छी तरह याद है। चाची मुझे बहुत मानती थीं।

मौसी फिर एक बार नाचकर बोलीं—आग लगे उसके माननेमें। वह मान-मनाव खाली अपना काम निकालनेके लिए था। उन लोगोंका मतलब ही था, किसी तरह तुम्हें अपने हाथमें करना।

वेणीने खूब जानकारकी तरह हुँकारी भरते हुए कहा—इसमें क्या सन्देह हैं। छोटी चाची भी ..।

लेकिन अभी उसकी बात पूरी भी न होने पाई थी कि रमा अप्रसन्न होकर मौसीसे कह उठी—मौसी, अब उन सब पुरानी बातोंकी जरूरत ही क्या है?

रमेशके पिताके साथ चाहे जितना झगड़ा क्यों न हो, लेकिन उसकी माँके सम्बन्धमें रमाके मनमें कहीं छिपी हुई एक प्रच्छन्न वेदना थी। और वह वेदना अब तक भी पूरी तरहसे नष्ट नहीं हुई थी। वेणीने तुरन्त ही हुँकारी भरते हुए कहा—हाँ हाँ, यह तो ठीक ही है। छोटी चाची बहुत भले घरकी लड़की थीं। आज भी अगर उनकी कोई बात छिड़ती है, तो मेरी माँकी आँखोंसे आँसू निकल पड़ते हैं।

जब वेणीने देखा कि बात कहींकी कहीं पहुँच रही है, तब उन्होंने तुरन्त ही वह प्रसंग दबा दिया और कहा—तो क्यों बहन, फिर यही ठीक रहा न? अब इसमें कुछ इधर इधर तो नहीं होगा न?

रमा हँसी। उसने कहा—भइया, बाबूजी कहा करते थे कि बेटी, आग,

करज और दुश्मनका कुछ भी बाकी नहीं छोड़ना चाहिए। तारिणी घोषाल जब तक जीते थे, तब तक उन्होंने हम लोगोंको कम नहीं सताया। उन्होंने तो हमारे बाबूजी तकको जेल भेजना चाहा था। भइया, मैं कोई बात भूली नहीं हूँ और जब तक जीती रहूँगी, तब तक भूल भी नहीं सकती। रमेश हमारे उसी दुश्मनके ही लड़के हैं न। और फिर मेरा तो किसी तरह जाना हो ही नहीं सकता। बाबूजी हम दोनों भाई-बहनमें जायदाद बाँट तो गये हैं, लेकिन सबका बन्दोबस्त करना तो मेरे ही जिम्मे है। हम लोग तो नहीं ही जायँगे। बल्कि जिन लोगोंके साथ हम लोगोंका कोई सम्बन्ध है, उन्हें भी हम लोग नहीं जाने देंगे। (फिर कुछ सोचकर)—क्यों भइया, तुम कोई ऐसा इन्त-ज़ाम नहीं कर सकते कि कोई ब्राह्मण उनके घर जाय ही नहीं?

वेणी कुछ और आगे खिसक आये और जरा धीमे स्वरसे कहने लगे—बहन, बस इसी बातकी तो मैं चेष्टा कर रहा हूँ। यदि, तुम मेरी सहायतापर रहो, तो फिर मुझे और किसी बातकी चिन्ता नहीं। अगर मैं रमेशको इस कूआँपुर गाँवसे न भगा दूँ तो मेरा नाम वेणी घोषाल नहीं। फिर रह जाऊँगा मैं और यह भैरव आचार्य। अब तारिणी घोषाल तो हैं नहीं। तब देखूँगा कि इस सालेको कौन बचाता है।

रमाने कहा—बचावेंगे रमेश घोषाल। देखो बड़े भइया, मैं कहे देती हूँ, शत्रुता करनेमें ये भी कमी नहीं करेंगे।

वेणी अब कुछ और भी आगे खिसक आये और जरा इधर-उधर देखकर चौखटके ऊपर जमकर बैठ गये। इसके बाद उन्होंने अपना स्वर और भी धीमा करके कहा—अगर तुम बाँसको नवाना चाहती हो तो बस यही समय है। यह मैं तुम्हें बतलाये देता हूँ कि जब वह पक जायगा, तो फिर, कुछ भी न हो सकेगा। अभीतक उसने यह नहीं सीखा है कि धन-दौलत और जमीन-जायदादकी किस तरह रक्षा की जाती है। अब अगर इसी बीचमें शत्रुको निर्मूल न कर दिया जायगा तो फिर आगे चलकर कुछ भी न हो सकेगा। यह बात हम लोगोंको दिन और रात याद रखनी पड़ेगी कि यह और कोई नहीं, तारिणी घोषालका ही लड़का है।

रमाने कहा—बड़े भइया, यह तो मैं अच्छी तरह समझती हूँ।

वेणीने कहा—बहन, भला ऐसी कौन-सी बात है जो तुम न समझती हो। भगवानने तो तुम्हें लड़का बनाते बनाते लड़की बना दिया। हम लोग तो

आपसमें अक्सर यह कहा करते हैं कि समझने-बूझनेमें अच्छे अच्छे जमींदार भी तुम्हारे सामने कोई चीज़ नहीं हैं। अच्छा, तो मैं कल फिर किसी समय आऊँगा। आज देर हो रही है। अब मैं जाता हूँ।

इतना कहकर वेणी घोषाल उठ खड़े हुए। अपनी इस प्रशंसासे रमा बहुत ही प्रसन्न होकर उठ खड़ी हुई और विनयके साथ कुछ प्रतिवाद करना ही चाहती थी कि उसका कलेजा धँकसे हो गया। आँगनके एक तरफ़से किसी अपरिचित व्यक्तिका गम्भीर स्वर सुनाई दिया—अरे, रानी कहाँ है?

जब रमा छोटी थी, तब रमेशकी माँ उसे इसी नामसे पुकारा करती थी। लेकिन इतने दिन बीत जानेपर अब वह स्वयं ही यह बात भूल गई थी। उसने वेणीकी तरफ देखा कि उसके सारे मुखपर कालिमा दौड़ गई है। तुरन्त ही रूखा सिर, नंगे पैर और सिरपर दुपट्टा बाँधे हुए रमेश उसके सामने आ खड़े हुए। वेणीपर निगाह पड़ते ही वह बोले—अरे, यह तो बड़े भइया हैं! आप यहाँ कहाँ? अच्छा, चलिए। आप नहीं रहेंगे तो वहाँके सब काम कौन करेगा? मैं तो गाँव-भरमें आपको ढूँढ़ता फिरता हूँ। रानी कहाँ है?

इतना कहते हुए रमेश किवाड़के सामने आ खड़े हुए। उस समय रमा भाग तो सकती ही न थी, इसलिए सिर झुकाकर चुपचाप खड़ी रही। रमेशने क्षण-भर उसकी तरफ देखकर बहुत ही आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—अरे वाह! तुम तो इतनी बड़ी हो गई! अच्छी तरह तो हो?

रमा सिर झुकाये हुए खड़ी रही। इस प्रकार औचकमें पड़कर वह कुछ भी न कह सकी। रमेशने कुछ हँसते हुए पूछा—पहचानती तो हो न? मैं तुम्हारा रमेश भइया हूँ।

लेकिन रमा अब भी सिर उठाकर उनकी तरफ न देख सकी। हाँ, कोमल स्वरसे उसने पूछा—आप अच्छे हैं?

रमेशने कहा—हाँ, अच्छी तरह हूँ। लेकिन रमा, तुम मुझे 'आप' क्यों कहती हो?

फिर वेणीकी ओर देखकर और कुछ मलिन हँसी हँसते हुए कहा—बड़े भइया, रमाकी वह बात मैं आज तक नहीं भूला। जब माँ मरी थीं, तब तो यह बहुत छोटी थीं। उसी समय इन्होंने मेरे आँसू पोंछकर कहा था, रमेश भइया, तुम रोओ मत। मेरी माँ तो है ही। हम दोनों उसीको आधा आधा

बाँट लेंगे ।—क्यों रमा, तुम्हें तो वह बात याद नहीं होगी? अच्छा, मेरी माकी तो तुम्हें याद है न?

यह बात सुनकर रमाका सिर मानों लज्जासे और भी नीचा हो गया। वह जरा-सा सिर हिलाकर भी यह न जतला सकी कि ताईजीकी सब बातें मुझे खूब अच्छी तरह याद हैं। रमेश विशेष रूपसे रमाको सुनाकर कहने लगे— अब समय बिलकुल नहीं है। बीचमें सिर्फ तीन ही दिन रह गये हैं। जो कुछ करना हो, वह सब कर डालो! जिसे बिलकुल निराश्रय कहते हैं, वही होकर मैं तुम लोगोंके दरवाज़ेपर आया हूँ। तुम लोगोंके बिना गये मैं जरा-सा भी कोई इन्तजाम न कर सकूँगा।

मौसी चुपचाप आकर रमेशके पीछे खड़ी हो गईं। जब वेणी या रमामेंसे किसीने भी रमेशकी किसी बातका कोई जवाब नहीं दिया, तब वह सामनेकी तरफ आ पहुँचीं और रमेशके मुँहकी तरफ देखकर बोलीं—क्यों भइया, तुम तारिणी घोषालके ही लड़के हो न?

रमेशने आजसे पहले कभी मौसीको देखा नहीं था; क्योंकि जब वह गाँव छोड़कर चले गये थे, तब रमाकी माँकी बीमारीके समय वह इस घरमें आई थीं; और तबसे आज तक इस घरके बाहर नहीं निकलीं। रमेश कुछ चकित होकर उनकी तरफ देखने लगे। मौसीने कहा—और नहीं तो ऐसा बेहया भला और कौन होगा? जैसा बाप, वैसा ही बेटा! न कुछ कहना और न कुछ पूछना! एक भले आदमीके घरमें घुसकर इस तरह हल्ला करनेमें तुम्हें शरम भी नहीं आती?

रमेश बुद्धि-भ्रष्टकी तरह काठ होकर देखते रह गये। वेणी यह कहते हुए वहाँसे खिसके—तो अच्छा, अब मैं चलता हूँ।

रमाने कोठरीके अन्दरसे कहा—मौसी, तुम भी क्या बकवाद कर रही हो! तुम अपना काम करो न जाकर।

मौसीने समझा कि वे बहनौतिनका छिपा हुआ इशारा समझ गई हैं, इस-लिए उन्होंने अपने स्वरमें कुछ और भी जहर मिलाकर कहा—देखो रमा, तुम बको मत। जो काम करना ही है, उसके लिए मेरी आँखोंमें तुम लोगोंकी तरह लज्जा नहीं है। भला वेणीको इस तरह डरकर भागनेकी क्या ज़रूरत थी? इतना तो कह जाता कि भइया, हम लोग न तो तुम्हारे नौकर या गुमाश्ते हैं और न तुम्हारी जमींदारीकी प्रजा हैं जो हम तुम्हारे काम-धन्धेवाले घरमें

पानी भरने और आटा मलने आवेंगी। तारिणी मरा तो गाँव-भरका कलेजा ठंडा हुआ। यह बात कहनेका भार मेरे ऊपर न छोडकर आप ही इसके मुँहपर कह जाता तो मरदानगीका काम होता।

रमेश तब भी चुपचाप पत्थरकी मूरतकी तरह खड़े रहे। वास्तवमें इन सब बातोंका उन्हें स्वप्नमें भी ध्यान नहीं था। अन्दरसे रसोईघरके किवाड़की सिकडी झन झन करती हुई हिली, लेकिन किसीने भी उसकी तरफ ध्यान न दिया। मौसीने रमेशके निर्वाक् और अत्यन्त पीले पड़े हुए मुखकी ओर देखकर फिर कहना शुरू किया—जो हो, लेकिन एक ब्राह्मणके लड़केका मैं किसी नौकर या दरबानसे अपमान नहीं कराना चाहती। भइया, तुम जरा होश ठिकाने रखकर काम करो। यहाँसे चले जाओ। तुम कोई नादान बच्चे नहीं हो जो भले आदमियोंके घरमें घुसकर सबको ताव दिखाते फिरते हो। तुम्हारे घर हमारी रमा कभी अपने पैर धोने भी न जायगी, यह मैं तुम्हें अभीसे बतलाये देती हूँ।

रमेश मानों अचानक नींद टूटनेपर जाग पड़े। तुरन्त ही उनके विस्तृत वक्षके अन्दरसे एक ऐसा गम्भीर निश्वास निकल पडा कि उसके शब्दने स्वयं उन्हें भी चकित कर दिया। घरके अन्दरसे किवाडकी आड़से रमाने सर उठाकर देखा। रमेशने पहले तो शायद कुछ इधर उधर किया और तब रसोईघरकी तरफ देखकर कहा—यदि किसी तरहसे जाना हो ही नहीं सकता, तो फिर उपाय ही क्या है। लेकिन मैं तो ये सब बातें जानता नहीं था। रानी, अनजानमें मुझसे जो भूल हो गई, उसके लिए तुम मुझे माफ करना।

इतना कहकर रमेश धीरे धीरे वहाँसे चले गये। कोठरीके अन्दरसे किसी तरहकी कोई आवाज तक न आई। रमेशको इस बातका भी पता न चल सका कि जिससे माफी माँगी थी, वह आडमें खड़ी चुपचाप उनके मुँहकी तरफ देख रही थी। इसके बाद वेणी फिर तुरन्त ही वहाँ आ पहुँचे। वह वहाँसे भागे नहीं थे, बल्कि बाहर छिपकर सिर्फ रमेशके वहाँसे हटनेका आसरा देख रहे थे। मौसीसे आँखें चार होते ही उनका सारा मुख प्रसन्नता और हँसीसे भर गया। उन्होंने आगे बढकर कहा—वाह मौसी, तुमने भी खूब खरी खरी सुनाई! इस तरहकी बातें हम लोगोंके मुँहसे तो कभी निकल ही नहीं सकतीं थीं। रमा, वह क्या कोई नौकर या दरबानका काम था? मैं तो बाहर आडमें खडा खड़ा देख रहा था न। वह लौंडा आषाढ़के मेघकी तरह अपना मुँह बनाकर चला गया। यह बहुत ठीक हुआ।

मौसीने क्षुण्ण अभिमानके स्वरमें कहा—हाँ, यह मैं भी जानती हूँ कि बहुत ठीक हुआ। लेकिन अगर तुम ये सब बातें कहनेका भार हम दो औरतोंपर छोड़कर खिसक न जाते और आप ही ये सब बातें कहते तो और भी अच्छा होता। और अगर तुम खुद ये सब बातें नहीं कह सकते थे तो यहाँ ही खड़े होकर क्यों नहीं सुन गये कि मैंने उससे क्या कहा? तुम्हारा इस तरह यहाँसे खिसक जाना मुनासिब नहीं हुआ।

वेणीके मुँहकी हँसी मौसीकी बातोंके कड़वेपनमें मिलकर हवा हो गई। उनकी समझमे ही न आया कि मैं इस अभियोगमें अपनी क्या सफाई दूँ। लेकिन उन्हें ज्यादा देर तक सोचना नहीं पड़ा। अचानक रमा अन्दरसे मौसीकी बातोंका जवाब दे बैठी। इतनी देर तक वह बिलकुल चुप थी। उसने कहा—मौसी, जब तुमने स्वयं ही सब बातें कह दीं तो यह सबसे अच्छा हुआ। और कोई चाहे कितना ही क्यों न कहता, पर वह तुम्हारी तरह जबानसे इतना ज्यादा जहर तो उगल ही नहीं सकता।

मौसी और वेणी दोनोंको ही इतना अधिक आश्चर्य हुआ जिसका ठिकाना नहीं। मौसीने रसोईघरकी तरफ मुड़कर पूछा—क्या कहा तैंने?

रमाने कहा—कुछ भी नहीं। पूजा करती करतीं तो तुम सात बार उठीं। जाओ, जाकर पूजा तो पूरी कर लो, आज क्या रसोई-उसोई कुछ नहीं होगी?

इतना कहकर रमा आप ही बाहर निकल आई और बिना किसीसे कुछ कहे-सुने बरामदा पार करके उधरवाली कोठरीमें चली गई। वेणीने सूखे हुए मुँहसे बहुत धीरेसे पूछा—मौसी, यह बात क्या है?

मौसीने कहा—भइया, मैं क्या जानूँ। उस राज-रानीका मिजाज समझना क्या हमारी जैसी नौकरानियों और मजदूरनियोंका काम है?

इतना कहते कहते मारे क्रोध और क्षोभके मौसीके चेहरेका रंग काला पड़ गया। वह जाकर फिर पूजाके आसनपर बैठ गईं और शायद मन ही मन भगवानके नामका स्मरण करने लगीं। वेणी भी धीरे धीरे वहाँसे चले गये।

२

इस कुआँपुर गाँवकी जायदादकी कमाईके सम्बन्धमें एक इतिहास है जो यहाँ देना आवश्यक है। प्रायः सौ बरस पहले महाकुलीन बलराम मुकर्जी अपने नामराशि मित्र बलराम घोषालको साथ लेकर विक्रमपुरसे यहाँ आये

थे। मुकर्जी केवल कुलीन ही नहीं थे, बुद्धिवान् भी थे। उन्होंने अपना विवाह करके, सरकारी नौकरी करके और साथमें न जाने और क्या क्या करके यह जायदाद अपने हाथमें की थी। घोषालने भी इसी तरफ अपना व्याह कर लिया, लेकिन, उनमें पितृ-ऋणका परिशोध करनेके सिवा और किसी बातकी क्षमता नहीं थी; इस लिए वे दुःख और कष्टमें ही अपने दिन बिताते रहे। विवाहके सम्बन्धमें ही दोनों नाम-राशियोंमें कुछ मनोमालिन्य हो गया था और अन्तमें वह मनोमालिन्य एक ऐसे विवादके रूपमें परिणत हो गया कि एक ही गाँवमें लगातार बीस बरस तक रहनेपर भी एकने दूसरेका मुँह तक नहीं देखा। यहाँ तक कि जिस दिन बलराम मुकर्जी मरे उस दिन भी घोषालने उनके घरमें पैर नहीं रखा। लेकिन उनके मरनेके दूसरे ही दिन एक बहुत ही विलक्षण बात सुनाई पड़ी—वे अपनी सारी जायदादाके बराबर बराबर दो भाग करके उनमेंसे एक भाग अपने पुत्रको और दूसरा अपने नाम-राशि मित्रके पुत्रोंको दे गये। तभीसे यह कुआँपुरकी जायदाद मुकर्जी और घोषालके वंशोंके अधिकार और भोगमें चली आ रही है। ये लोग स्वयं भी इस बातका अभिमान करते हैं और गाँवके लोग भी इस बातसे इन्कार नहीं करते। हम जिस समयकी बात कह रहे हैं उस समय घोपाल वंश भी दो भागोंमें बँट चुका था। कई दिन हुए, उस वंशकी छोटी शाखाके मालिक तारिणी घोषाल मुकदमेके कामसे जिलेकी कचहरीमें गये थे। वहाँ अदालतमें उनके पाँच-सात छोटे-बड़े मुकदमोंकी तारीखें थीं। लेकिन उन सब मुकदमोंके फैसलोंकी कुछ भी परवाह न करके वे न जाने कहाँकी एक बहुत बड़ी अदालतकी आज्ञा शिरोधार्य करके चुपचाप इस लोकसे चल दिये। उस समय कुआँपुर गाँवमे और उसके बाहर भी चारों तरफ कोहराम मच गया। घोपाल वंशकी बड़ी शाखाके मालिक वेणी घोपाल अपने चाचाकी मृत्युसे प्रसन्न हुए और मन ही मन निश्चिन्तताका निश्वास निकालकर अपने घर लौट आये। फिर अन्दर ही अन्दर दल-बन्दी करके इस बातका प्रयत्न करने लगे कि चाचाके आगामी श्राद्धके दिन विघ्न डाले जायँ और श्राद्ध ठीक तरहसे न होने पावे। इधर दस बरसोंसे चाचा और भतीजेने एक दूसरेका मुँह तक न देखा था। दस बरस पहले तारिणीकी स्त्रीके मर जानेसे उनका घर सूना हो गया था। उसी समय उन्होंने अपने पुत्र रमेशको उसके मामाके घर भेज दिया था और आप अपने घरके अन्दर नौकर-मजदूरनियोंके साथ और बाहर

मामले-मुकदमोंमें लगे रहकर अपने दिन बिताते थे। रमेशको अपने पिताकी मृत्युका दुःखद समाचार रुड़की कालिजमें मिला और वे अपने पिताकी अन्तिम क्रियाएँ सम्पन्न करनेके लिए बहुत दिनोंके बाद कल तीसरे पहर अपने सूने घरमें आ पहुँचे।

काम-धन्धेका घर है। बीचमें सिर्फ दो ही दिन रह गये हैं। बृहस्पतिवारको रमेशके पिताका श्राद्ध है। एक एक दो दो करके आस-पासके गाँवोंके बड़े-बूढे धीरे धीरे आने लगे हैं। लेकिन खुद कुआँपुर गाँवका कोई आदमी नहीं आ रहा है। रमेशने यह बात समझ ली और शायद यह भी समझ लिया कि अन्त तक इस गाँवका कोई आदमी हमारे घर न आवेगा। हाँ केवल भैरव आचार्य और उनके घरके सब लोग आकर काम-धन्धेमें शरीक हो रहे हैं। यद्यपि रमेशको यह आशा नहीं थी कि खुद हमारे गाँवके ब्राह्मणोंके चरणोंकी धूल हमारे घर आकर पड़ेगी, तो भी वे अपने यहाँकी सारी व्यवस्था बड़े आदमियोंकी तरह कर रहे हैं। आज बहुत देरसे रमेश अपने घरके अन्दर ही काम-धन्धोंमें लगे हुए थे। जब वे किसी कामसे बाहर निकले, तब उन्होंने देखा कि बाहरकी बैठकमे दो वृद्ध भले आदमी बिछौनेपर बैठे हुए तमाखू पी रहे हैं। वे उन लोगोंके सामने पहुँचकर विनयपूर्वक कुछ कहना ही चाहते थे कि उन्हें पीछेकी तरफ कुछ शब्द सुनाई पडा। उन्होंने मुडकर देखा कि एक बहुत ही वृद्ध अपने साथ पाँच-छः लड़के-लड़कियोंको लिये खाँसते हुए अन्दर चले आ रहे हैं। उनके कन्धेपर एक मैला दुपट्टा है, नाकपर एक जोड़ी बैंगनोंकी तरह एक बडा चश्मा है जो पीछेकी तरफ डोरीसे बँधा हुआ है। सिरके बाल बिलकुल सफेद हैं। मूछें भी बिलकुल सफेद, लेकिन तमाखूके धूएँसे ताम्बेके रंगकी हो रही हैं। कुछ और 'आगे बढ़कर उन्होंने उसी भीषण चश्मेके अन्दरसे थोड़ी देर तक रमेशके चेहरेकी तरफ देखा और तब बिना कुछ बोले-चाले वे एक दमसे रोने लग पड़े। रमेशने नहीं पहचाना कि ये कौन हैं। लेकिन वे चाहे जो हों, रमेश घबराकर उनकी तरफ बढ़े। ज्यो ही रमेशने उनका हाथ पकड़ा, त्यों ही भर्राई हुई आवाजमें वह कह उठे—नहीं भइया रमेश, मैं तो स्वप्नमें भी यह नहीं जानता था कि तारिणी इस तरह मुझे धोखा देकर चल देंगे। लेकिन मेरा भी ऐसे चटर्जी वंशमें जन्म नही हुआ है जो किसीके डरसे मुँहसे झूठी बात निकाले। मैं यहाँ आते समय तुम्हारे वेणी घोषालके मुँहपर ही कहता आया हूँ कि हमारे रमेश श्राद्धका जैसा आयोजन

कर रहे हैं, वैसा श्राद्ध करना तो भाड़में गया, इस तरफ कभी किसीने आँखसे भी न देखा होगा। कुछ ठहरकर उन्होंने फिर कहा—भइया, मेरे बारेमें बहुत-से साले आ आकर तुमसे तरह तरहकी बातें कहेंगे; लेकिन यह निश्चय जानो कि यह धर्मदास-केवल धर्मका ही दास है, और किसीका नहीं।

इतना कहकर वृद्धने अपने सत्य भाषणका सारा पौरुष आत्मसात् करते हुए गोविन्द गाँगूलीके हाथसे हुक्का छीन लिया और उसका एक कश खींचते ही फिर बहुत प्रबल वेगसे खाँसना शुरू कर दिया।

धर्मदासने कुछ बहुत अधिक अत्युक्ति नहीं की थी। वहाँ श्राद्धका जैसा आयोजन हो रहा था, वैसा आज तक इस तरफ किसीने नहीं किया था। कलकत्तेसे हलवाई आये थे और उन्होंने आँगनमें एक तरफ अपनी भट्टी चढ़ा रखी थी। उसके चारों तरफ महल्लेके बहुतसे लड़कों और लड़कियोंकी भीड़ लगी थी। कंगालोंको कपड़े बाँटे जानेको थे। चंडी-मंडपके उस तरफ बरामदेमें अनुगत भैरव आचार्य थानोंमेंसे धोतियाँ फाड़ फाड़कर और तह करके उनके ढेर लगा रहे थे। उधर भी कई आदमी जमकर बैठे हुए थे और इस अपव्ययका हिसाब लगाकर रमेशको उनकी इस मूर्खतापर मन ही मन गालियाँ दे रहे थे। गरीब और दुखिया लोग खबर पाकर दूर दूरसे चले आ रहे थे। सभी तरहके आदमियोंसे सारा घर भरा हुआ था। कहीं कुछ लोग लड़-झगड़ रहे थे, तो कहीं झूठ-मूठ शोर ही मचा रहे थे। चारों ओर देखनेपर जब धर्मदासको व्ययकी इस अधिकताका पता चला, तब उनकी खाँसी और भी ज्यादा बढ़ गई।

धर्मदासकी बातोंके उत्तरमें रमेश सकुंचित होकर "नहीं नहीं" के सिवा कुछ और भी कहना चाहते थे, लेकिन धर्मदासने हाथके इशारेसे उन्हें रोककर धड़ाधड़ और भी न जाने कितनी बातें कह डालीं। लेकिन खाँसीके जोरके कारण उन बातोंका एक अक्षर भी किसीकी समझमें न आया।

गोविन्द गाँगूली सबसे पहले आये थे। जो बातें धर्मदासने कही थीं; वे सब बातें कहनेका अवसर सबसे पहले गोविन्दको ही मिला था। लेकिन गोविन्दके मुँहसे उस समय वे बातें नहीं निकलीं, इसलिए वे सोचने लगे कि मैंने ऐसी अच्छी बातें कहनेका अवसर व्यर्थ ही गवाँया और यह सोचकर उनके मनमें भारी क्षोभ उत्पन्न हो रहा था। लेकिन अब जो यह दूसरा अवसर मिला था, उसे उन्होंने हाथसे नहीं जाने दिया। उन्होंने धर्मदासको सुनाते हुए जल्दी जल्दी

कहना शुरू किया—कल सवेरे, समझे न भइया धर्मदास, यहाँ आनेके लिए जब मैं घरसे निकला ही था कि लगे वेणी मुझे पुकारने—गोविन्द चाचा, जरा तमाखू तो पीते जाओ। पहले तो मैंने सोचा कि उसके पास जानेकी जरूरत नहीं, फिर मनमें आया कि जरा चलकर मनकी थाह तो ले लेनी चाहिए। भइया रमेश, तुम जानते हो कि वेणीने क्या कहा? उसने कहा कि चाचा, तुम तो रमेशकी मदद करनेके लिए खड़े हो गये हो। लेकिन मैं पूछता हूँ कि क्या और सब लोग भी खाएँ-पीएँगे?

भला, मैं क्यों छोड़ने लगा? तुम बड़े आदमी हो तो हुआ करो। हमारे रमेश भी किसीसे कम नहीं हैं। तुम्हारे घरसे तो किसीको एक मुट्ठी चिड़वे भी मिलनेकी आशा नहीं है। मैंने कहा—वेणी बाबू, यही तो आने-जानेका रास्ता है। जब गरीब और कंगाल विदा होने लगें, तब जग खड़े होकर देखना। रमेश अभी लड़के हैं, तो क्या हुआ। कलेजा इसको कहते हैं! मेरी इतनी उमर हुई, पर आज तक ऐसी तैयारी कभी आँखोंसे भी न देखी। लेकिन मैं यह भी कहता हूँ भइया धर्मदास, कि हम लोगोंके बसमें है ही क्या! जिनका काम है, वही ऊपरसे सब करा रहे हैं। तारिणी भइया अगर शाप-भ्रष्ट दिक्पाल नहीं थे तो और क्या थे?

लेकिन धर्मदासकी खाँसी किसी तरह रुकती ही नहीं थी। वे खाँसते ही रह गये और उनके देखते देखते गाँगूली महाशय इतनी अच्छी अच्छी और इतनी ढेर-सी बातें इस अपरिपक्व तरुण जमींदारके सामने कह गये। यह देखकर धर्मदास उनसे भी और अच्छी बातें कहनेकी चेष्टामें व्याकुल होने लगे।

गाँगूली महाशय फिर कहने लगे—भइया, तुम कोई पराये तो हो नहीं। बिलकुल अपने ही ठहरे। तुम्हारी माँ हमारी सगी फुफेरी बहनकी ममेरी बहन थीं।—राधानगरके बनर्जीका घर।—तारिणी भइया ये सब बातें जानते थे। तभी तो जब कोई काम-धन्धा होता था, मामला मुकदमा होता था, गवाही साखी होती थी, तब बस बुलाओ गोविन्दको!

अब धर्मदासने जी-जान लड़ाकर अपनी खाँसी रोकी और चिढ़कर कहा—गोविन्द, क्यों व्यर्थकी बकवाद करते हो। खक् खक् खक्। मैं कोई आजका तो हूँ ही नहीं। क्या नहीं जानता? उस साल गवाही होनेकी बात चलाने पर तुमने कहा कि मेरे पैरमें जूता नहीं है, मैं नंगे पैर कैसे चलूँगा? खक् खक् खक्। तारिणी भइयाने तुरन्त ढाई रुपये निकालकर एक जोड़ी नया

जूता खरिदवा दिया और फिर तुम वही जूता पहनकर वेणीकी तरफसे गवाही दे आये! खक् खक् खक्।

गोविन्दकी आँखें लाल हो आईं। उसने पूछा—मैंने गवाही दी?

धर्म०—गवाही नहीं दी?

गो०—चल झूठा कहींका।

धर्म०— झूठा होगा तेरा बाप!

गोविन्दने अपना टूटा हुआ छाता हाथमें ले लिया और उछलकर कहा—अच्छा, तो आ साले!

धर्मदासने अपनी बाँसकी लकड़ी ऊपर उठाकर हुंकार किया और तब फिर खूब जोरोंसे खाँसना शुरू कर दिया। रमेश घबराकर दोनोंके बीचमें आ खड़े हुए और स्तंभित हो रहे। धर्मदास अपनी लकड़ी नीचे करके खाँसते हुए बैठ गये और बोले—मैं रिश्तेमें उस सालेका बड़ा भाई होता हूँ कि नहीं, इसीलिए। सालेकी अक्किल तो देखो—

गोविन्द गाँगूली भी अपने हाथका छाता नीचे रखकर यह कहते हुए बैठ गये— हूँ, यह साला मेरा बड़ा भाई है!

शहरके हलवाई अपनी भट्टीका ध्यान छोड़कर यह तमाशा देख रहे थे। चारों तरफ जो लोग काम धन्धेमें लगे हुए थे, वे लोग भी यह हो-हल्ला सुनकर तमाशा देखनेके लिए आ पहुँचे। लड़के-बच्चे खेल छोड़कर लड़ाईका मजा लेने लगे और उन सब लोगोंके सामने रमेश मारे लज्जा और आश्चर्यके हत-बुद्धिकी तरह स्तब्ध होकर चुपचाप खड़े रहे। उनके मुँहसे एक बात भी न निकली। यह क्या हो रहा है! दोनों ही वृद्ध, भले आदमी और ब्राह्मण-सन्तान हैं। ऐसी मामूली-सी बातपर ये लोग नीच जातिके लोगोंकी तरह गाली-गलौज कर सकते हैं! बरामदेमें बैठे हुए भैरव कपड़ोंके थाक लगा रहे थे और ये सब बातें देख और सुन रहे थे। अब वे उठकर वहाँ आ पहुँचे और रमेशसे कहने लगे—कोई चार सौ धोतियाँ तो हो चुकीं। क्या अभी और धोतियोंकी जरूरत होगी?

लेकिन रमेशके मुँहसे हठात् कोई बात ही न निकली। रमेशका यह अभिभूत भाव देखकर भैरवको हँसी आ गई। उन्होंने बहुत ही कोमल स्वरसे समझाते हुए कहा— छीः गाँगूली महाशय! बाबू तो बिलकुल ही अवाक् हो गये हैं। बाबू, आप इन सब बातोंका कुछ खयाल न कीजिएगा। इस तरहकी

बातें तो यहाँ अक्सर होती रहती हैं। बड़े काम-धन्धेके घरमें न जाने कितनी लड़ाइयाँ और कितने झगड़े होते हैं। यहाँ तक कि मार-काट और खून-खराबी भी हो जाती है और फिर सब मिलकर एक हो जाते हैं। अच्छा अब उठिए चटर्जी महाशय, जरा देख लीजिए कि म और धोतियाँ फाड़ूँ या नहीं।

लेकिन धर्मदासके जवाब देनेसे पहले ही गोविन्द गाँगूली बड़े उत्साहसे सिर हिलाते हुए उठकर खड़े हो गये और कहने लगे—हाँ, यह सब तो होता ही रहता है और अक्सर होता है। नहीं तो लोग इसे 'विरद कर्म' क्यो कहते'! शास्त्रमें लिखा है कि जब तक लाख बातें न हों, तब तक व्याह ही नहीं होता। उस सालकी बात क्या तुम्हें याद नहीं है भरव? मुकर्जी महाशयकी लडकी रमाके व्याहका काम जिस दिन शुरू हुआ था, उस दिन राघव भट्टाचार्यमें और हारान चटर्जीमें सिर-फुड़ौअल तक हो गई थी। लेकिन भरव भइया, मैं कहता हूँ कि छोटे भइयाका यह काम अच्छा नहीं हो रहा है। छोटे आदमियोंको धोतियाँ बाँटना और राखमें घी डालना दोनों बराबर हैं। इससे तो अगर ब्राह्मणोंको एक एक जोड़ा धोती और उनके बच्चोंको एक एक धोती दी जाती तो नाम हो जाता। 'म तो कहता हूँ कि छोटे भइयाको यही करना चाहिए। क्यों धर्मदास भइया, तुम्हारी क्या राय है?

धर्मदासने सिर हिलाते हुए कहा—रमेश भइया, गोविन्दने कोई बुरी बात नहीं कही है। उन सालोंको हजार दिया जाय, तो भी कोई नाम होनेकी आशा नहीं। 'और नहीं तो उन्हें छोटे आदमी क्यो कहा गया है? समझे न भइया रमेश!

अब तक रमेश चुपचाप थे। कपड़े बाँटनेकी इस आलोचनासे वे मानों बहुत ही मर्माहत हुए। लेकिन वे उनकी सुयुक्ति या कुयुक्तिके सम्बन्धमें मर्माहत नहीं हुए थे। इस समय तो उनके मनमें सबसे ज्यादा यही बात खटक रही थी कि ये लोग जिन्हें छोटे या नीच आदमी कहते हैं, उन्हीं छोटे और नीच आदमियोंकी हजारों आँखोंके सामने ये लोग एक इतना बड़ा लज्जाजनक काम कर बैठे! और इसके लिए इन लोगोंमेसे किसीके भी मनमें जरा-सा क्षोभ या लज्जाका नाम तक नहीं। जब रमेशने देखा कि भैरव उनके मुँहकी तरफ देख रहे हैं, तब उन्होंने सक्षेपमें कहा—आप और दो सौ धोतियाँ ठीक कर रखिए।

गोविन्द बीचमें ही बोल उठे—हाँ, बिना इतनेके काम कैसे चलेगा! भैरव भइया, चलो मैं भी चलता हूँ। तुम अकेले कहाँ तक करोगे!

इतना कहकर गोविन्द बिना किसीकी सम्मतिकी अपेक्षा किये कपड़ोंके ढेरके पास जा बैठे। रमेश अन्दर जाना ही चाहते थे कि धर्मदास उन्हें बुलाकर एक तरफ ले गये और धीरे धीरे उनके कानमें उन्होंने बहुत-सी बातें कहीं। उत्तरमें रमेशने सिर हिलाकर मानो अपनी सहमति प्रकट की और तब वह अन्दर चले गये। गोविन्द गाँगूलीने कपड़ोंकी तह लगाते हुए कनखियोंसे यह सब देखा।

इतनेमें एक दुबले-पतले वृद्ध ब्राह्मण, जिनकी मूछें मुडी हुई थीं, यह कहते हुए वहाँ आ पहुँचे—भइया कहाँ हैं? रमेश भइया कहाँ हैं?

इन ब्राह्मण देवताके साथ दो-तीन लड़के-लडकियाँ भी थीं। लड़की सबसे बड़ी थी। उसके शरीरपर एक बहुत फटी-पुरानी डोरियेकी धोती थी। दोनों लडकोंकी कमरमें सिर्फ एक एक लँगोटी थी और उसके सिवा वे बिलकुल दिगम्बर थे। वहाँ जो लोग मौजूद थे, उन्होंने सिर उठाकर देखा। गोविन्दने उनकी अभ्यर्थना करते हुए कहा—आओ दीनू भइया, बैठो। हम लोगोंके बड़े भाग्य हैं जो आज आपके चरणोंकी धूल यहाँ पड़ी। लडका अकेला हैरान हुआ जाता है। इसलिए आप लोग...

धर्मदासने गोविन्दकी तरफ कुछ तीखी निगाहसे देखा। लेकिन गोविन्दने उसकी तरफ बिना कुछ ध्यान दिये कहा—आप लोग तो भइया, इस तरफ आवेंगे नहीं—

इतना कहकर गोविन्दने उनके हाथमें हुक्का थमा दिया। दीनू भट्टाचार्यने आसन ग्रहण करके जले हुए हुक्केके व्यर्थ ही दो कश खींचकर कहा—अरे भाई, मैं तो यहाँ था ही नहीं। तुम्हारी बहूको लानेके लिए उसके बापके घर गया था। भइया कहाँ हैं? सुना है कि बहुत बडा आयोजन हो रहा है। रास्तेमें उस गाँवके बाजारसे सुनता आ रहा हूँ कि सबको खिलाने-पिलानेके बाद छोटे-बडे सबके हाथमें सोलह सोलह पूरियाँ और चार चार जोड़ी सन्देश भी दिये जायँगे।

गोविन्दने स्वर कुछ धीमा करके कहा—और इसके सिवा शायद एक एक धोती भी मिलेगी। देखो, यही रमेश हैं। इसीलिए मैंने दीनू भइयासे कहा था कि तुम लोगोंके—चार आदमियोंके—माता-पिताके आशीर्वादसे

सब जोड़ तोड़ एक तरहसे लगाया तो जा रहा है, लेकिन, वेणी बुरी तरहसे पीछे पड़ा है। मेरे ही यहाँ उसने दो बार बुलानेके लिए आदमी भेजा था। लेकिन मेरी बात छोड़ दो, रमेशके साथ मेरा तो खूनका सम्बन्ध ठहरा। लेकिन यह दीनू भइया हुए, धर्मदास भइया हुए, ये लोग क्या तुम्हें यों ही छोड़ सकते हैं? दीनू भइया तो रास्तेमे खबर सुनकर दौड़े हुए यहाँ आये हैं।—अबे ओ षष्ठी-चरण, जरा तमाखू तो भर ला। भइया रमेश, जरा इधर आओ। एक बात कहनी है।

इस प्रकार रमेशको गोविन्द एक किनारे ले गये और धीरेसे उनसे पूछने लगे—क्या अन्दर धर्मदासकी औरत आई है? खबरदार भइया, ऐसा काम मत करना। यह धूर्त्त ब्राह्मण कितना ही क्यों न फुसलावे, पर भइया, तुम धर्मदासकी औरतके हाथमें भंडारकी चाबी-कुंजी कभी मत दे देना। वह घी, आटा, तेल, नमक सब आधा आधा खिसका देगी। तुम्हें चिन्ता ही किस बातकी है? मैं जाते ही तुम्हारी मामीको भेज दूँगा। वह आकर भंडारका सारा भार ले लेगी और तुम्हारा एक तिनका तक नुकसान नहीं होने पावेगा।

रमेश सिर हिलाकर और "जो आज्ञा" कहकर चुप हो गये। परन्तु उनके आश्चर्यका ठिकाना नहीं था। धर्मदासने बहुत ही गुप्त रूपसे कहा था कि भंडारका भार लेनेके लिए हम अपनी स्त्रीको भेज देंगे। लेकिन गोविन्दने यह बात कैसे भाँप ली कि धर्मदासने यही बात कही थी?

दो नंगे लड़के दौड़े हुए आये और दीनू भइयाके कन्धेपर लटककर कहने लगे—बाबा, हम सन्देश खायँगे।

दीनूने एक बार रमेशकी तरफ और एक बार गोविन्दकी तरफ देखकर कहा—अरे, मैं सन्देश कहाँसे लाऊँ?

लड़कोंने यह कहकर हलवाइयोंकी तरफ दिखला दिया कि देखो, वह बन तो रहे हैं।

इतनेमें और भी तीन-चार लड़के-लड़कियाँ रोती हुई वहाँ आ पहुँचीं और "बाबा, हम भी खायँगे" कहकर धर्मदासको चारों तरफसे घेरकर खड़ी हो गईं।

रमेश घबराकर आगे बढ़ आये और कहने लगे—अच्छा अच्छा आचार्यजी, ये सब लड़के तीसरे पहरके घरसे निकले हुए हैं। घरसे खाकर तो आये ही नहीं हैं।—अरे क्या नाम है तुम्हारा? वह थाल इधर तो ले आओ।

हलवाई ज्यों ही सन्देशका थाल लेकर आया, त्यों ही सब लड़के उसपर टूट पड़े। उन्होंने किसीको सन्देश बाँटनेका अवकाश भी न दिया और सबको

परेशान कर दिया। लड़कोंको खाते देखकर दीनानाथकी शुष्क दृष्टि भी सजल और तीव्र हो गई। उन्होंने कहा—अरे मुनियॉ, खा तो रही है; जरा यह भी तो बता कि सन्देश बने कैसे हैं ?

"बहुत बढ़िया बने हैं बाबा।" कहकर मुनियॉ अपना सन्देश फिर खाने लगी। दीनूने मुस्कराकर सिर हिलाते हुए कहा—वाह, तुम लोगोंकी भी कोई पसन्द है! मीठा चाहिए, बस। क्यों जी हलवाई, कढ़ाही क्यों उतार दी? क्यों गोविन्द भइया, अभी तो कुछ दिन बाकी है ?

हलवाईने बिना किसी तरह देखे तुरन्त उत्तर दिया—जी हॉ, है क्यों नहीं, है। अभी तो बहुत समय है। अब भी सन्ध्या-पूजा...।

दीनूने कहा—तो फिर एक ठो गोविन्द भइयाको भी दो। जरा वह भी चखकर देखें कि तुम लोग कलकत्तेके कैसे कारीगर हो। नहीं नहीं, मुझे क्यों दे रहे हो? अच्छा, तो फिर आधा दो। आधेसे ज्यादा मत देना। अरे ओ षष्ठीचरण, जरा पानी तो ले आ। जरा हाथ धो लूँ।

इतनेमें रमेशने पुकारकर कहा—षष्ठीचरण, अन्दरसे तीन चार रिकाबियॉ भी लेते आना।

मालिककी आज्ञा होते ही अन्दरसे तीन चार रिकाबियॉ और पानीके गिलास आ गये और देखते देखते उस बड़े थालकी प्रायः आधी मिठाई उन तीनों बूढ़े और मलेरियासे सूखे हुए सद्ब्राह्मणोंने जलपानमें ही खतम कर डाली। दीनानाथने रुका हुआ निःश्वास छोड़कर कहा—हॉ, ये लोग, हैं कलकत्तेके कारीगर! क्यों धर्मदास भइया ?

धर्मदास भइयाके आगेकी रिकाबी अभी तक खतम नहीं हुई थी। यद्यपि उनका अव्यक्त कंठ-स्वर सन्देशके तालको भेदकर सहजमें उनके मुखसे बाहर न निकल सका, तो भी लोगोंकी समझमें आ गया कि इस विषयमें उनका मत-भेद नहीं है।

"हॉ, यह है उस्तादी हाथ!" कहकर जब गोविन्द सबके अन्तमें हाथ धोनेका उपक्रम करने लगे तब हलवाईने नम्रतापूर्वक अनुरोध किया—पंडितजी महाराज, जब आपने कष्ट ही किया है, तब जरा यह नुकतीका लड्डू भी चख देखिए। जरा इसकी भी परख हो जाय।

गोविन्दने कहा—नुकतीका लड्डू! कहॉ है भइया, जरा लाओ देखें।

नुकतीके लड्डू भी आये। उन लोगोंके द्वारा इतने अधिक सन्देश खाये

जानेके बाद भी इस नई चीज़के इतने अधिक सद्व्यवहारको रमेश देखते ही रह गये। दीनानाथने अपनी लड़कीकी तरफ हाथ फैलाकर कहा—अरे मुनियाँ, ले तो बेटी, नुकतीके ये दो लड्डू।

मुनियाँने कहा—अब मुझसे नहीं खाया जायगा, बाबूजी।

दीनानाथने कहा—अरे, खाया क्यों नहीं जायगा! खाया जायगा। जरा एक घूँट पानी पीकर गला तर कर ले, मुँह आ गया होगा। और अगर न खाया जाय तो आँचलमें गिरह देकर बाँध ले। कल सवेरे खा लीजियो। हाँ भइया, खूब खिलाया। सब चीजें मानो अमृत हैं अमृत। बहुत बढ़िया बनी हैं। मालूम होता है, मिठाई तुमने दो ही तरहकी बनवाई है भैयाजी?

रमेशको उत्तर नहीं देना पड़ा। हलवाईने ही उत्साहपूर्वक कहा—जी नहीं। रसगुल्ला, खीर-मोहन..।

दीनानाथने विस्मित रमेशके मुँहकी ओर देखकर कहा—खीर-मोहन भी है? कहाँ है भइया, वह तो तुमने निकाला ही नहीं! खीर-मोहन खाया था मैंने राधानगरके बोस बाबूके घर। आज तक मानो मुँहमें उसका स्वाद बना हुआ है। भइया, मैं कहूँगा तो तुम विश्वास नहीं करोगे। लेकिन खीर-मोहन मुझे बहुत ही अच्छा लगता है।

रमेशने हँसकर जरा सिर हिला दिया। उन्हें विश्वास करना बहुत कठिन न मालूम हुआ। राखाल किसी कामसे बाहर जा रहा था। रमेशने उसे बुलाकर कहा—अन्दर शायद आचार्यजी हैं। राखाल, जरा जाकर उनसे कहो तो कि कुछ खीर-मोहन लेते आवें।

सन्ध्या हो गई है, लेकिन फिर भी, ब्राह्मण खीर-मोहनकी आशामें उत्सुक होकर बैठे हैं। थोड़ी देरमें राखाल लौट आया और बोला—भइया, अब आज भंडारका ताला नहीं खुलेगा।

रमेश मन ही मन कुछ चिढ़े। उन्होंने कहा—जाओ, जाकर कहो कि मैं मँगवा रहा हूँ।

गोविन्द गाँगूलीने रमेशकी नाराजगी देखकर आँखें नचाते हुए कहा—दीनू भइया, देखो भैरवकी अक्किल! मालूम होता है कि माँसे भी ज्यादा मौसीको दरद है। इसीलिए तो मैं कहता हूँ—

लेकिन उनकी बात बिना सुने ही राखालने कहा—आचार्यजी क्या करें? उस घरसे मालकिनने आकर भंडार बन्द कर दिया है।

धर्मदास ओर गोविन्द दोनों ही चौंक पड़े और बोले—कौन ? मालकिन कौन ? रमेशने चकित होकर पूछा—क्या ताईजी आई हैं ?

राखालने कहा—जी हाँ। उन्होंने आते ही छोटे और बड़े दोनों भंडारोंमें ताला बन्द कर दिया है।

मारे आश्चर्य और आनन्दके रमेशके मुँहसे कोई बात न निकली और वे उठकर जल्दीसे अन्दर चले गये।

३

"ताईजी!"

आवाज सुनते ही विश्वेश्वरी भंडारसे बाहर निकल आईं। यदि वेणीकी अवस्थाके साथ तुलना की जाय तो उनकी माताकी अवस्था पचास बरससे कम न होनी चाहिए, लेकिन, यों देखनेपर वे किसी तरह चालीस बरससे अधिककी नहीं जान पड़ती थीं। रमेश टक लगाकर उनकी तरफ देखते रहे। आज भी उनका वही कच्चे सोनेका-सा रंग है। किसी समय इस तरफ उनके जिस रूपकी बहुत अच्छी प्रसिद्धि थी, उनका वह अनिंद्य सौन्दर्य आज भी उनके साँचेके ढले हुए और हृष्ट-पुष्ट शरीरको छोड़कर जा नहीं सका था। उनके सिरके बाल कटे हुए और छोटे छोटे थे जिनकी कुछ लटें बल खाकर माथेपर आ पड़ी थीं। चिबुक, कपोल, अधर, ललाट, सभी अंग मानो किसी बहुत बड़े कारीगरके बहुत ही यत्न और साधनाके फल थे। और सबसे बढ़कर उनकी दोनों आँखोंकी दृष्टि थी। थोड़ी देर उनकी तरफ देखते रहनेसे मानों सारा अन्तःकरण मोहसे भर जाता है।

यह ताईजी किसी समय रमेश और विशेषतः उसकी परलोकवासिनी मातासे बहुत अधिक प्रेम करती थीं। विवाह हो जानेके बाद जब कुछ समय तक इन दोनोंमेंसे किसीके बच्चे नहीं हुए और सास-ननदकी यंत्रणाओंके मारे जब ये जेठानी और देवरानी छिपकर एक साथ बैठकर रोईं, तभी इस स्नेहका पहले-पहल ग्रंथि-बन्धन हुआ था। इसके बाद घरकी अलगागुजारी, मामले मुकदमे और न जाने कितनी तरहकी लड़ाइयाँ और झगड़े इन दोनों गृहस्थियोंपरसे होकर निकल गये हैं। लड़ाई-झगड़ोंके उत्तापसे वह बन्धन शिथिल जरूर हो गया, लेकिन फिर भी एक दमसे टूट नहीं सका है। बहुत दिनोंके बाद जब आज उसी देवरानीके भंडारमें वह गईं तब उसके हाथके सजाये हुए पुराने बरतन-भाँड़े आदि देखकर ताईजीकी आँखोंसे आँसू बहने लगे। रमेशके

पुकारनेपर जब वह अपनी आँखें पोंछकर बाहर निकलीं, तब उन दोनों लाल और आर्द्र नेत्र-पल्लवोंकी ओर देखकर रमेश कुछ देरके लिए विस्मित हो रहे। ताईजीने भी यह देखा। इसीलिए, जान पड़ता है कि सद्यःपितृहीन रमेशकी ओर दृष्टिपात करते ही उनका हृदय हाहाकार कर उठा, लेकिन उन्होंने उसका लेश भी बाहर प्रकट न होने दिया; बल्कि कुछ हँसते हुए पूछा—रमेश, मुझे पहचान लिया?

उत्तर देनेमें रमेशके होठ काँपने लगे। माँके मरनेके बाद जब तक रमेश अपने मामाके घर नहीं गये थे, तब तक इन्हीं ताईजीने उन्हें कलेजेसे लगाकर रखा था और वह किसी तरह इन्हें छोड़ना ही नहीं चाहती थीं। आज वह बातें भी उन्हें याद आईं और साथ ही यह भी याद आया कि वेणीके घर जानेपर कहा गया कि वह घरपर नहीं हैं, और उनके साथ भेंट तक नहीं थी। इसके बाद जब वेणीके सामने और पीठ पीछे भी उनकी मौसीने उनका अत्यन्त तिरस्कार किया था, तब उन्होंने निश्चित रूपसे समझ लिया था कि अब, इस गाँवमें मेरा अपना कोई नहीं है।

थोड़ी देर तक रमेशके मुखकी ओर देखते रहनेके बाद विश्वेश्वरीने कहा—नहीं बेटा, ऐसे समयमें जी कड़ा करना होता है।

लेकिन उनके स्वरमें मानों कोमलताका कहीं आभास भी न था। रमेशने अपने आपको सँभाल लिया। उसने समझ लिया कि जहाँ रूठनेकी कोई मर्यादा ही नहीं है, वहाँ रूठने या अभिमान प्रकट करनेके समान विडम्बना संसारमें और कोई नहीं। उसने कहा—हाँ ताईजी, मैंने अपना जी बहुत कड़ा कर लिया है। मुझसे जो कुछ हो सकता, वह मैं आप ही कर लेता। फिर तुम क्यों चली आईं?

ताईजी हँस पड़ीं। उन्होंने कहा—रमेश, तुम तो मुझे बुलाकर यहाँ लाये नहीं हो जो मैं तुम्हें इस बातकी कैफियत दूँ। अच्छा सुनो। जब तक सब काम-काज हो नहीं जायगा, तब तक मैं खाने-पीनेकी कोई चीज भण्डारसे निकालने नहीं दूँगी। जब मैं जाने लगूँगी, तब भण्डारकी ताली-कुंजी तुम्हारे हाथमें देती जाऊँगी और फिर कल आकर तुम्हींसे ले लूँगी। देखो, ताली-कुंजी और किसीके हाथमें मत देना। हाँ, यह तो बतलाओ, उस दिन बड़े भइयाके साथ तुम्हारी भेंट हुई थी?

यह प्रश्न सुनकर रमेश बहुत दुविधामें पड गये। उनकी समझमें न आया कि ताईजी अपने पुत्रका व्यवहार जानती हैं या नहीं। उन्होंने कुछ सोचकर कहा—बड़े भइया उस समय तो घरपर नहीं थे।

प्रश्न करते ही ताईजीके मुखपर उद्वेगकी छाया आ पड़ी। रमेशको स्पष्ट दिखाई दिया कि उनके इस उत्तरसे ताईजीका वह भाव बिलकुल दूर हो गया और उनके मुखपर प्रसन्नता आ गई। उन्होंने हँसते हुए स्नेहपूर्वक शिकायतके स्वरमें कहा—वाह रे मेरी तकदीर! अरे, एक बार भेंट नहीं हुई, तो क्या दुबारा नहीं जाना चाहिए? मैं जानती हूँ कि वह तुम लोगोंसे खुश नहीं है। लेकिन तुम्हें तो अपना काम करना ही चाहिए। जाओ, फिर एक बार जाकर उससे अच्छी तरह कहो। वह तुम्हारा बड़ा भाई है। उसके सामने दबनेमें तुम्हें कोई लज्जा नहीं है। और तिसपर बेटा, यह आदमीके लिए ऐसा बुरा समय है कि इसमें सभी लोगोंके हाथ-पैर जोडकर उनसे झगडा मिटा लेनेमें कोई लज्जा नहीं है। मेरे राजा भइया, एक बार जाओ। इस समय मैं समझती हूँ कि वह घरपर ही होगा।

रमेश चुप रहे। ताईजीके इतना अधिक आग्रह करनेका कारण भी स्पष्ट रूपसे उनकी समझमें नहीं आया और उनके मनका सन्देह भी दूर नहीं हुआ। विश्वेश्वरीने कुछ और आगे खिसककर कोमल स्वरमें कहा—बाहर जो लोग बैठे हुए हैं, उन्हें मैं तुमसे बहुत ज्यादा जानती हूँ। तुम उन लोगोंकी बातें मत सुनना। आओ, चलो। तुम जरा मेरे साथ अपने बड़े भइयाके पास चलो।

रमेशने सिर हिलाकर कहा—नहीं ताईजी, यह बात नहीं होगी। और बाहर जो लोग बैठे हैं, वे चाहे जैसे हों, लेकिन इस समय मेरे लिए वही सबसे ज्यादा अपने हैं।

रमेश अभी और भी न जाने क्या क्या कहना चाहते थे, लेकिन ताईजीके मुखकी ओर देखकर उन्हें बहुत अधिक विस्मय हुआ और वे चुप हो गये। उन्हें ऐसा जान पडा कि ताईजीका मुख चारों तरफ फैली हुई सन्ध्यासे भी कहीं बढकर मलिन हो गया है। थोड़ी देर बाद ताईजीने ठंडी साँस लेकर कहा—अच्छा, ऐसा ही सही। जब तुम्हारा किसी तरह उसके पास जाना हो ही नहीं सकता, तब फिर उस बारेमें कुछ कहना ही व्यर्थ है। लेकिन फिर भी बेटा, तुम किसी बातकी चिन्ता मत करना। तुम्हारा कोई काम रुका नहीं रहेगा। मैं कल बहुत सबेरे ही आ जाऊँगी।

इतना कहकर विश्वेश्वरीने अपनी दासीको बुलाया और उसे साथ लेकर वह खिड़कीवाले रास्तेसे चली गईं। उन्होंने समझ लिया था कि इस बीचमें वेणीके साथ रमेशकी भेंट हो चुकी है और कोई बात जरूर हुई है। वह जिस रास्तेसे गईं थीं, उस रास्तेकी तरफ रमेश कुछ देर तक चुपचाप खड़े देखते रहे। इसके बाद जब वह बहुत उदास होकर बाहर निकले, तब गोविन्दने घबराकर पूछा—क्यों भइया, बड़ी माँजी आई थीं न ?

रमेशने सिर हिलाकर कहा—हाँ।

गोविन्दने कहा—मैंने सुना है कि वह भडार बन्द करके चाबी अपने साथ लेती गई हैं।

रमेशने यों ही सिर हिलाकर उसकी बातका जवाब दे दिया, क्योंकि, चलते समय न जाने क्या सोचकर ताईजी भंडारकी चाबी अपने साथ ही लेती गई थीं। गोविन्दने कहा—देखा न भइया धर्मदास, मैंने जो कहा था वही हुआ न। क्यों भइया रमेश, मतलब समझ गये न ?

रमेश मन ही मन बहुत क्रुद्ध हुए। लेकिन अपनी निरुपाय अवस्थाके खयालसे सहन करके चुप रह गये। दरिद्र दीनू भट्टाचार्य अभी तक गये नहीं थे। उनमें कुछ बुद्धि नहीं थी। जिसकी दयासे वे अपने लड़के-लड़कियों सहित भर-पेट सन्देश खा सके थे, उसे बिना दो-चार आन्तरिक आशीर्वाद दिये और सबके सामने उच्च स्वरसे बिना उनके सात पुरखोंकी स्तुति किये वह घर नहीं जा सकते थे। ब्राह्मणने बिलकुल निरीह भावसे कहा—भइया, इसका मतलब समझना कौन मुश्किल है! वह जो ताला बन्द करके चाबी अपने साथ लेती गई हैं; इसका मतलब यही है कि भडार और किसीके हाथमें न जाय! वह सब कुछ तो जानती हैं।

गोविन्द चिढ़ गये थे। मूर्ख दीनूकी इस बातसे जल-भुनकर उन्होंने उसे झिड़कते हुए कहा—जब तुम कोई बात समझते-बूझते ही नहीं हो, तो फिर बीचमें बोल क्यों बैठते हो? तुम इन सब बातोंको क्या समझते हो जो मतलब लगाने बैठ गए?

झिड़की सुनकर दीनूकी निर्बुद्धिता और भी बढ़ गई। उसने भी गरम होकर जवाब दिया—अरे, इसमें समझने-बूझनेकी कौन-सी बात है! सुनते नहीं हो कि मालकिन आप आकर भंडार बन्द करके चाबी अपने साथ लेती गई हैं? इसमें कोई क्या कह सकता है?

गोविन्दने आग-बबूला होकर कहा—अरे भट्टाचार्य, तुम अपने घर जाओ न। जिस कामके लिए दौड़े थे, वह तो हो गया। घर-भरने मिलकर खूब खाया और बाँध भी ले चले। अब क्यों ठहरे हो? जाओ, खीर-मोहन अब परसों खाना। आज अब कुछ नहीं। इस समय जाओ। हम लोगोंको अभी बहुत-से काम हैं।

दीनू लज्जित और संकुचित हो गये। और रमेश उतने ही अधिक कुंठित तथा क्रुद्ध हुए।

गोविन्द अभी और न जाने क्या कहना चाहते थे, लेकिन सहसा रमेशके शान्त, पर साथ ही कठिन कण्ठ-स्वरसे रुक गये—गॉगूलीजी, आपको हो क्या गया है? आप चाहे जिसका इस तरह ख्वामख्वाह अपमान क्यों करते हैं? गोविन्द यह घुड़की सुनकर पहले तो विस्मित हुए। परन्तु तुरन्त ही उन्होंने सूखी हँसी हँसकर कहा—भइया, मैंने अपमान किसका किया? आप इन्हींसे पूछें कि मैंने जो कुछ कहा है, वह ठीक है या नहीं। ये अगर डाल डाल चलते हैं तो मैं पात पात चलता हूँ। देखो न भइया धर्मदास, इस दीनू बाम्हनकी हिमाकत? अच्छा।

यह तो धर्मदास ही जानें कि उन्होंने क्या देखा, लेकिन रमेश इस आदमीकी निर्लज्जता और धृष्टता देखकर अवाक् हो गये। उस समय दीनूने रमेशकी तरफ देखकर आप ही कहा—नहीं भइया, गोविन्द जो कुछ कहते हैं, वह ठीक ही कहते हैं। यह तो सभी लोग जानते हैं कि मैं बहुत गरीब हूँ। इन लोगोंकी तरह मेरे पास जमीन या खेत कुछ नहीं है। किसी तरह माँग-जाँचकर अपने दिन बिताता हूँ। भगवानने मुझे इतना सामर्थ्य तो दिया ही नहीं कि अपने लड़के-बच्चोंको कोई अच्छी चीज खिला सकूँ। इसीलिए जब बड़े आदमियोंके घर कोई काम-काज होता है, तब ये लोग खा-पी जाते हैं। भइयाजी, आप इस बातका कुछ खयाल न करें। जब तारिणी भइया जीते थे, तब हम लोगोंको खिलाना-पिलाना उन्हें बहुत अच्छा लगता था। इसलिए भइया, मैं आपसे निश्चय कहता हूँ कि हम लोगोंने जो जी भरकर खा लिया है, इसे ऊपरसे देखकर वे प्रसन्न ही हुए हैं।

इतना कहते कहते हठात् दीनूके गम्भीर और शुष्क नेत्रोंमें जल भर आया और सबके देखते देखते आँसुओंकी दो-चार बूँदें भी टपाटप गिर पड़ीं। रमेशने मुँह फेर लिया। दीनूने अपने मैले और सैकड़ों जगहोंसे फटे हुए दुपट्टेसे अपनी आँखें पोंछते हुए कहा—भइया, खाली मैं ही नहीं। यहाँ मेरे

जैसे जितने गरीब हैं, उनमेंसे कोई भी कभी तारिणी भइयाके आगे हाथ फैलाकर खाली नहीं लौटा। भला, ये सब बातें कौन जानेगा! वे दाहिने हाथसे जो दान करते थे, उसका पता उनके बाएँ हाथको भी नहीं लगने पाता था। लेकिन अब मैं आप लोगोंको बहुत तंग नहीं करूँगा। तो बेटी मुनियाँ, उठ बेटा हरिधन, चलो, घर चलें। अब फिर कल सबेरे आवेंगे। भइया रमेश, मैं और क्या कहूँ। यही कहता हूँ कि अपने पिताकी तरह होओ और जुगजुग जिओ।

रमेशने उसके साथ साथ रास्तेतक आकर आर्द्र स्वरसे कहा—भट्टाचार्यजी, इधर दो-तीन दिन मुझपर दया रखिएगा और मुझे कहते हुए संकोच होता है कि अगर इस घरमें हरिधनकी माँके चरणोंकी धूल पडे तो मैं अपना बहुत बड़ा भाग्य समझूँगा।

भट्टाचार्यने व्यस्त होकर अपने दोनों हाथोंसे रमेशके दोनों हाथ पकड़ लिये और रोते रोते कहा—भइया रमेश, मैं बहुत ही गरीब और दुखिया हूँ। तुम जो मुझसे इस तरहकी बातें कहते हो, तो मैं मारे लज्जाके मरा जाता हूँ।

अपने लड़के लड़की साथ लेकर वृद्ध ब्राह्मण धीरे धीरे चला गया। रमेश भी लौट आये। गाँगूलीजीसे उन्होंने जो एक कठोर बात कही थी, उसका ध्यान करके वह कुछ कहनेकी चेष्टामें ही थे कि उन्हें रोककर गोविन्दने उद्दीत होकर कहा—भइया रमेश, यह तो हमारा अपना ही काम है। अगर तुम न भी बुलाते तो भी हम लोगोंको आप ही यहाँ आकर सब काम करने पडते। इसीलिए तो मैं आया हूँ। धर्मदास और मैं, दोनों भाई, तुम्हारे बुलानेकी राह ही नहीं देखते।

धर्मदास अभी अभी तमाखू पीकर खाँस रहे थे। वे अपनी लाठीके सहारे उठकर खड़े हो गये और खाँसीके जोरमें आँखें और मुँह लाल करके हाथ नचाकर बोले—भइया रमेश, सुनो। मैं वेणी घोषाल नहीं हूँ। हम लोगोंकी पैदाइशका ठीक-ठिकाना है।

धर्मदासकी इस कुत्सित बातसे रमेश चौंक पडे। लेकिन अब इन्होंने क्रोध नहीं किया। इस बहुत थोड़ी उम्रमें ही उन्होंने समझ लिया था कि ये लोग शिक्षाके अभाव और अभ्यासके दोषसे बिना किसी सकोचके कितनी बड़ी गन्दी बात कह जाते हैं और वह गन्दी है, यह जानते भी नहीं।

ताईजीके स्नेहपूर्ण अनुरोध और व्यथित भावको स्मरण करके रमेश मन

ही मन पीडाका अनुभव कर रहे थे। सबके चले जानेपर वह बड़े भइयाके पास जानेके लिए तैयार हुए। जिस समय वे वेणीके चण्डीमण्डपके बाहर जाकर पहुँचे उस समय रातके आठ बजे थे। अन्दर मानों एक प्रकारकी लड़ाई हो रही थी। गोविन्द गॉगूलीकी चीख-पुकार सबसे अधिक थी। बाहरसे ही उसके कानोंमें आवाज पहुँची, गोविन्द बाजी लगाकर कह रहे हैं,-" अगर यह चार दिनमें जड-मूलसे नष्ट न हो जाय तो तुम लोग मेरा गोविन्द गांगूली नाम बदल देना वेणी बाबू। यह सब नवाबों जैसी तैयारी आपने सुनी न? मैं जानता हूँ कि तारिणी घोषाल एक पैसा भी छोड़कर नहीं मरे हैं। तब फिर इतना लम्बा-चौडा आयोजन क्यों? अरे भाई, हाथमें पैसा हो तो करो। अगर नहीं है, तो जायदाद रेहन रखकर कभी किसीने अपने बापका श्राद्ध इतने ठाठ-से किया हो यह तो भइया मैंने कभी सुना नहीं। वेणीमाधव बाबू, मैं आपसे निश्चयपूर्वक कहता हूँ कि इस लौंडेने नन्दीकी कोठीसे कमसे कम तीन हजार रुपये उधार लिये हैं।

वेणीने उत्साहित होकर कहा—तब तो गोविन्द चाचा, इसका पक्का पता लगा लेना चाहिए।

गोविन्दने स्वर धीमा करके कहा—भइया, जरा सबर तो करो। जरा एक बार मुझे अच्छी तरह वहाँ घुस तो जाने दो। इसके बाद फिर,- अरे बाहर यह कौन खड़ा है? कौन? रमेश?—अरे भइया, हम लोगोंके रहते आप इतनी रातको बाहर क्यों निकले?

लेकिन रमेश बिना इस बातका उत्तर दिये आगे बढ़ आये और बोले—बडे भइया, मैं आपके ही पास आया हूँ।

वेणी बाबू सिटपटा गये और कुछ उत्तर न दे सके। परन्तु गोविन्दने तुरन्त ही कहा—आप आवेंगे क्यों नहीं भइया? सौ बार आवेंगे। यह तो आपका घर है, और फिर बड़े भाई तो पिताके तुल्य हैं। इसीलिए तो हम वेणी बाबूसे कहने आये हैं कि तारिणी भइयाके साथ जो झगडा था वह उनके साथ गया। अब झगडा क्यों? आप दोनों भाई एक हो जायँ और हम लोगोंकी ऑंखें यह देखकर ठण्डी हों।—क्यों हालदार मामा, क्या कहते हो?—लेकिन भइया, आप खडे क्यों हैं?—अरे कौन है? जरा कम्बलका एकाध आसन तो बिछा दे। नहीं वेणी बाबू, आप बडे भाई हैं। आप ही सब कुछ हैं। आपके इस तरह अलग रहनेसे काम नहीं चलेगा। और फिर जब बड़ी मालकिन स्वयं चलकर वहाँ पहुँच गई हैं, तब तो...।

वेणी चौंक पड़े। उन्होंने पूछा—क्या माँ गई थीं?

यह चौंकना देखकर गोविन्द मन ही मन प्रसन्न हुए। लेकिन उन्होंने अपना वह भाव छिपाकर बहुत भले आदमीकी तरह इस खबरका और भी फैलाव करते हुए कहा—खाली जाना ही कैसा, भण्डार-वण्डार, काम-धन्धा जो कुछ है, सब वही तो कर रही हैं। और फिर अगर वह न करें तो करे कौन?

सब लोग चुप थे। गोविन्दने एक लम्बी साँस छोड़ते हुए कहा—कहाँ, गाँव भरमें क्या बड़ी मालकिनकी तरहका कोई और आदमी है? या कभी होगा? नहीं वेणी बाबू, मुँहपर कहना खुशामद समझा जायगा, लेकिन लोग चाहे जो कहें, गाँवमें अगर कोई लक्ष्मी हैं तो वह तुम्हारी माँ हैं। ऐसी माँ क्या सब किसीके होती हैं?

इतना कहकर और फिर एक बार लम्बी साँस छोड़कर वह गम्भीर हो गये। वेणीने कुछ देर तक चुप रहनेके बाद अस्फुट स्वरमें कहा—अच्छा।

गोविन्दने तुरन्त ही उन्हें धर दबाया और कहा—वेणी बाबू, खाली 'अच्छा' कहनेसे काम नहीं चलेगा। आपको वहाँ चलना पड़ेगा और सब काम करना पड़ेगा। सारा भार आपके ही ऊपर है। हाँ, इस समय आप सभी लोग तो यहाँ मौजूद हैं। निमन्त्रण किन किन लोगोंको दिया जायगा, इसकी एक फरद क्यों न तैयार कर ली जाय? क्यों रमेश भइया? हालदार मामा, ठीक है न? धर्मदास भइया, आप चुप क्यों हैं? आप तो सब जानते हैं कि किसे कहना होगा और किसे छोड़ना होगा।

रमेशने खड़े होकर सहज विनीत भावसे कहा—बड़े भइया, अगर आपके चरणोंकी धूल मेरे घर—।

वेणीने गम्भीर होकर कहा—माँ जब वहाँ गई हैं, तब मेरा जाना न जाना—क्यों गोविन्द चाचा?

गोविन्दके कुछ कहनेसे पहले ही रमेशने कहा—बड़े भइया, मैं आपको तंग नहीं करना चाहता। अगर असुविधा न हो, तो जरा एक बार देख सुन आइएगा।

वेणी चुप रहे। गोविन्द कुछ कहना ही चाहते थे कि इतनेमें रमेश उठकर चले गये। उस समय गोविन्दने पहले तो बाहर जाकर और झाँककर देखा और तब धीरेसे कहा—वेणी बाबू, आपने देखा बात-चीतका ढंग?

वेणी अन्यमनस्क होकर कुछ सोच रहे थे, इसलिए उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया।

रास्तेमें आते समय गोविन्दकी बातोंका स्मरण करके रमेशका मन घृणासे परिपूर्ण हो उठा। आधी दूर जानेके बाद वह लौट पड़े और फिर वेणी घोषालके घरके अन्दर जा पहुँचे। उस समय चंडीमंडपमें खूब जोरोंसे तर्कवितर्क चल रहा था और खूब शोर मच रहा था। लेकिन इसे सुननेकी भी उनकी प्रवृत्ति नहीं हुई। उन्होंने सीधे अन्दर पहुँचकर पुकारा—ताईजी!

ताईजी उस समय अपनी कोठरीके सामनेवाले बरामदेमें अँधेरेमें चुपचाप बैठी थीं। इतनी रातको रमेशकी आवाज़ सुनकर उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा—रमेश? क्यों भइया?

रमेश पास जा पहुँचा। ताईजीने घबराकर कहा—जरा ठहरो बेटा, मैं किसीसे दीया लानेके लिए कह दूँ।

रमेशने कहा—ताईजी, दीया लानेकी जरूरत नहीं। आप बैठी रहें।

इतना कहकर रमेश अँधेरेमे ही एक तरफ बैठ गये। उस समय ताईजीने पूछा—इतनी रातको क्यों आये बेटा?

रमेशने कोमल स्वरसे कहा—अभी तक लोगोंको निमन्त्रण नहीं दिया गया है। इसीलिए मैं आपसे पूछने चला आया हूँ।

ताईजीने कहा—भइया, तब तो तुमने मुझे भारी मुश्किलमें डाल दिया। ये लोग क्या कहते हैं? गोविन्द गाँगूली, भट्टाचार्य—

रमेशने उन्हें बीचमेंही रोककर कहा—मैं नहीं जानता कि ये लोग क्या कहते हैं ताईजी, और जानना भी नहीं चाहता। आप जो कहेंगी, वही होगा।

अकस्मात् रमेशकी बातोंमें कुछ उत्ताप देखकर विश्वेश्वरी मन ही मन विस्मित हुई। कुछ देर तक मौन रहनेके बाद उन्होंने कहा—लेकिन रमेश, उस समय तो कहते थे कि ये ही सब तुम्हारे लिए सबसे बढ़कर अपने हैं। सो जो कुछ भी हो; पर हम औरतोंके कहनेसे क्या होगा भइया? इस गाँवमें, और सिर्फ इसी गाँवमें क्यों, सभी गाँवोंमें ऐसा होता है कि ये उनके साथ नहीं खाते और वे इनके साथ नहीं खाते। ज्यों ही कोई काम-काज आ पड़ता है, तो आदमीकी चिन्ताओंका पार नहीं रहता। गाँवमें इससे बढ़कर कठिन काम और कोई नहीं होता कि किसको छोड़ा जाय और किसको रखा जाय।

रमेशको कोई विशेष आश्चर्य नहीं हुआ। कारण, इन दो-चार दिनोंमें ही उन्हें बहुत-सी बातोंका ज्ञान हो गया था। फिर भी पूछा—आखिर ऐसा क्यों होता है ?

विश्वेश्वरीने कहा—बेटा, बहुत-सी बातें हैं। यदि यहाँ रहोगे तो आप ही सब जान लोगे। किसीका तो सचमुच ही कुछ दोष या अपराध होता है और किसीको यों ही झूठ-मूठ अपराध लगा दिया जाता है। और फिर मामले-मुकदमों और झूठी गवाही साखियोंके कारण भी बड़ी बड़ी दलबन्दियाँ होती हैं। रमेश, अगर मैं दो दिन और पहले तुम्हारे यहाँ पहुँच जाती तो तुम्हें कभी इतना अधिक आयोजन न करने देती। अब तो मैं यही सोच रही हूँ कि उस दिन क्या होगा।

इतना कहकर ताईजीने एक ठंढी साँस ले ली। उनके इस साँसका ठीक ठीक मर्म रमेशकी समझमे नहीं आया और वह यह भी निश्चय न कर सके कि किसीका सचमुचका अपराध क्या है और किसीका झूठमूठका अपराध क्या है। बल्कि उन्होंने उत्तेजित होकर कहा—लेकिन मेरे साथ तो इन बातोंका कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं तो एक तरहसे परदेशी ही कहा जा सकता हूँ जिसकी किसीके साथ कोई शत्रुता नहीं है। ताईजी, इसीलिए मैं कहता हूँ यहाँकी दल-बन्दियोंका कोई विचार नहीं करूँगा। सभी ब्राह्मणो और शूद्रोंको निमंत्रण दे डालूँगा। लेकिन बिना आपके हुकुमके तो कुछ कर नहीं सकता। इसलिए आप हुकुम दे दें।

ताईजीने कुछ देर तक चुप रहकर और कुछ सोचकर कहा—लेकिन रमेश, इस तरहका हुकुम मैं नहीं दे सकती। इससे भारी गड़बड़ी मचेगी। लेकिन मैं यह भी नहीं कहती कि तुम्हारा कहना ठीक नहीं है। भइया, यह केवल ठीक और गलतकी बात नहीं है। समाजने जिसे दण्ड देकर अलग कर रखा है, उसे किसी तरह जबरदस्ती बुलाकर नहीं लाया जा सकता। समाज जैसा भी हो, उसे मानना पड़ता है। नहीं तो उसमें भला-बुरा करनेकी कोई शक्ति ही नहीं रह जाती। रमेश, इस तरहसे तो कभी काम ही नहीं चल सकता।

ऐसा नहीं है कि सोचनेपर रमेश इस बातको अस्वीकार कर सकता, लेकिन अभी अभी बाहर इस समाजके शीर्ष-स्थानीय लोगोंका जो षड्यन्त्र और नीचाशयता उसने देखी थी, वह उसके कलेजेमें आगकी तरह जल रही थी। इसीलिए उसने घृणाके आवेशमें चट कह डाला—इस गाँवके समाजमें यही

धर्मदास और गोविन्द आदि ही हैं न ताईजी? अगर ऐसे समाजमें नामको भी कोई सामर्थ्य न रह जाय, तो यही बहुत अच्छा है।

ताईजीने रमेशकी उग्रता देखी, फिर भी शान्त स्वरसे कहा—रमेश, सिर्फ यही लोग नहीं हैं, बल्कि तुम्हारे बड़े भइया वेणी भी इस समाजके एक कर्त्ता-धर्त्ता हैं।

रमेश चुप रहे। ताईजीने फिर कहना शुरू किया—रमेश, इसीलिए मैं कहती हूँ कि तुम इन लोगोंकी राय लेकर काम करो। घरमें पैर रखते ही इन लोगोंके विरुद्ध जाना अच्छा नहीं है।

विश्वेश्वरीने कितनी दूरतक सोच-समझकर यह उपदेश दिया था, तीव्र उत्तेजनाके कारण रमेशने यह नहीं सोचा और कहा—ताईजी, अभी आपने ही कहा है कि नाना कारणोंसे यहाँ दल-बन्दियाँ होती हैं। मैं समझता हूँ कि उन कारणोंमें सबसे बडा कारण व्यक्तिगत द्वेष है। और फिर इसके सिवा जब मैं सच-झूठ किसीके कोई भी दोष-अपराधकी बात नहीं जानता तब किसीको भी बाद करके अपमान करना मेरे लिए अन्याय होगा!

ताईजीने कुछ हँसकर कहा—अरे पागल, मैं तुम्हारी बडी हूँ, तुम्हारी माँकी जगह हूँ। मेरी बात न सुनना भी तो अन्याय है!

रमेशने कहा—ताईजी, मैं क्या करूँ। मैं तो निश्चय कर चुका हूँ कि सभीको निमन्त्रण दूँगा।

रमेशका दृढ़ संकल्प देखकर विश्वेश्वरीका मुख अप्रसन्न हुआ। जान पड़ता है कि मन ही मन वह कुछ चिढ़ीं भी। उन्होंने कहा—तब तो फिर तुम खाली दिखलानेके लिए मेरा हुकुम लेने आये हो।

रमेशने समझ लिया कि ताईजी नाराज हो गई हैं। लेकिन फिर भी वे विचलित नहीं हुए। उन्होंने थोड़ी देर बाद धीरेसे कहा—ताईजी, मैं समझता था कि मेरा जो काम अन्यायपूर्ण न होगा, उसमें आप मुझे प्रसन्न मनसे आशीर्वाद ही देगीं। मेरा—

लेकिन बात समाप्त होनेसे पहले ही विश्वेश्वरीने रोककर कहा—लेकिन रमेश, तुम्हें यह भी तो जानना चाहिए था कि मैं अपनी सन्तानके विरुद्ध नहीं जा सकूँगी।

इस बातसे रमेशके मनपर चोट लगी। कारण, मुँहसे वह चाहे जो कहे, लेकिन न जाने कैसे कलसे ही उसका समस्त अन्तःकरण ताईजीके निकट

सन्तानका ही दावा करने लगा था। लेकिन अब उन्होंने देखा कि इस दावेसे बहुत अधिक ऊँचाईपर स्वयं उनकी सन्तानका दावा जगह बनाये बैठा है, तब वे थोड़ी देरतक चुप रहनेके बाद उठकर खड़े हो गये और दबे हुए रूठनेके स्वरमें बोले—ताईजी, कल तक तो यही समझता था और इसीलिए मैंने आपसे कहा था कि मुझसे जो कुछ हो सकेगा, वह मैं आप ही अकेला कर लूँगा। आप आनेका कष्ट न करें। यहाँ तक कि आपको बुलानेका साहस भी मुझे नहीं हुआ था।

रमेशका यह रूठना ताईजीसे भी छिपा न रहा। लेकिन उन्होंने कोई उत्तर न दिया। वे अँधेरेमें चुपचाप बैठी रहीं। थोड़ी देर बाद जब रमेश जानेका उपक्रम करने लगे, तब बोलीं—तो फिर बेटा, जरा ठहर जाओ, मैं तुम्हारे भंडारकी चाबी ला दूँ।

इतना कहकर ताईजी उठीं और उन्होंने अन्दरसे चाबी लाकर रमेशके पैरोंके आगे फेंक दी। रमेश पहले तो कुछ देरतक बिलकुल निस्तब्ध भावसे खड़े रहे, फिर, एक गहरी साँस लेकर चाबी उठा ली और वे धीरे धीरे वहाँसे चल दिये। अभी कुछ ही घंटों पहले उन्होंने मन ही मन कहा था, "अब मुझे किस बातका डर है! मेरी ताईजी तो हैं।" लेकिन अभी एक रात भी नहीं बीतने पाई थी कि उन्हें फिर लम्बी साँस छोड़कर कहना पड़ा, "नहीं, मेरा कोई नहीं है। ताईजीने भी मुझे त्याग दिया।"

४

बाहर अभी अभी श्राद्ध समाप्त हुआ है। आसनसे उठकर रमेश अभ्यागतोंसे परिचित होनेका प्रयत्न कर रहे हैं। भीतर भोजनके लिए पत्तले बिछानेका आयोजन हो रहा है। उसी समय कुछ शोर-गुल और चीख-पुकार सुनकर रमेश घबराये हुए अन्दर पहुँचे। उनके साथ साथ और भी बहुत-से लोग पहुँच गये। रसोईघरके दरवाजेके एक तरफ पच्चीस छब्बीस बरसकी एक विधवा सिटपिटाई-सी मुँह फेरे हुए खड़ी है और उसके पास ही एक अधेड़ स्त्री मारे क्रोधके अपना मुँह और आँखें लाल किये हुए चिल्ला चिल्ला कर गालियाँ बक रही है। झगड़ा हुआ है पराण हालदारके साथ। रमेशको देखते ही अधेड़ स्त्रीने चिल्लाकर पूछा—क्यों भइया, तुम भी तो गाँवके एक जमींदार हो। मैं पूछती हूँ कि क्या सारा दोष इसी गरीब बाम्हनी खेन्तीकी लड़कीका

ही है ? हम लोगोंके सिरपर कोई नहीं है, इसलिए क्या हमें चाहे जितनी बार दण्ड दिया जायगा ? फिर गोविन्दकी ओर सकेत करके कहा—मुखर्जीके घर वृक्ष-प्रतिष्ठाके समय क्या इन्होंने दस रुपये जुरमाना लगाकर स्कूलके नामसे वह रुपये वसूल नही किये थे ? गॉवकी शीतला-पूजाके लिए क्या दो जोडी खसियोंका दाम हमसे इन्होंने नहीं रखवा लिया था ? तब फिर क्यो ये लोग एक ही बात बार बार उठाकर झगडा खडा करते हैं ?

रमेशकी समझमें कुछ भी न आया कि क्या मामला है। गोविन्द गाँगूली, जो अभीतक बैठे हुए थे, मीमांसा करनेके लिए उठ खडे हुए। उन्होंने पहले रमेशकी ओर और फिर उस अधेड स्त्रीकी तरफ देखकर गम्भीर स्वरसे कहा —खेन्ति मौसी, जब तुमने मेरा नाम लिया है, तब मैं सच बात ही कहूँगा। सारा देश जानता है कि सिर्फ किसीकी खातिर या किसीका मुँह देखकर बात कहनेवाला यह गोविन्द गॉगूली नहीं है। तुम्हारी लडकीका प्रायश्चित्त भी हो चुका है और सामाजिक जुरमाना भी। यह सब मैं मानता हूँ। लेकिन उसको यज्ञमें लकडी देनेका हुकुम तो हम लोगोंने दिया नहीं। अगर वह मर जाय तो उसे श्मशानतक ले जानेके लिए हम लोग कन्धा जरूर लगावेंगे। लेकिन—

खेन्ती मौसी चिल्ला उठीं—जब तुम्हारी लडकी मरे, तब उसे कन्धा लगाकर मसान पहुँचा आना भइया। मेरी लडकीकी चिन्ता तुम मत करो। और गोविन्द, तुम अपनी छातीपर हाथ रखकर क्यों बात नहीं कहते ? मैं पूछती हूँ, तुम्हारी छोटी भावज, जो उस भण्डारमें बैठी हुई पान लगा रही है, पिछले साल डेढ महीनेके लिए कौन-सा काशी-वास करने गई थी और शरीरका रग पीला हल्दी जैसा करके आई थी ? यह शायद बड़े घरोंकी बड़ी बात है ? भइया, मेरे सामने बहुत बढ बढ कर बातें न करना। मैं सारा भण्डा फोड कर रख दूँगी। हमने भी बाल-बच्चे पेटमें रक्खे हैं। हम सब पहचानती हैं। हम लोगोंकी ऑखोंमें कोई धूल नहीं झोंक सकता।

गोविन्द मारे क्रोधके पागल होकर झपटे—आ तो हरामजादी !

लेकिन हरामजादी जरा भी न डरी, बल्कि एक कदम और आगे बढकर हाथ-मुँह नचाती हुई बोली—अरे तू क्या मुझे मारेगा ! मैं कहे देती हूँ कि जो खेन्ती बाम्हनीके मुँह लगोगे, तो एक ठगका पता लगानेमें सारे गॉवके उजाड हो जाने जैसी बात होगी। मेरी लड़कीने रसोईघरके अन्दर पैर तो रखा ही नहीं था, कि हालदार उसका ख्वामख्वाह अपमान कर बैठे। क्या उनकी

समधिनकी जुलाहेके साथ बदनामी नहीं हुई थी ? मैं कोई आजकी तो हूँ ही नहीं। अभी और कुछ कहूँ या इतनेसे ही काम चल जायगा ?

रमेशको तो काठ मार गया। भैरव आचार्य घबराकर और उसका हाथ पकड़कर अनुनयपूर्वक बोले—अरे मौसी, इतना ही बस है। और जरूरत नहीं है। उठो बेटी सकुमारी, उठो ! चलो, मेरे साथ उस कमरेमें जाकर बैठना।

उधर पराण हालदारने अपना दुपट्टा उठाकर कन्धेपर रख लिया और सीधे खड़े होकर कहा—जब तक यह खानगी इस घरसे बाहर नहीं निकाल दी जायगी, तब तक मैं कहे देता हूँ गोविन्द, मैं यहाँ पानी तक नहीं पीऊँगा। कालीचरण, तुम अगर अपने मामाको चाहते हो तो उठ आओ। वेणी घोषालने तो तभी कह दिया था कि मामाजी, वहाँ मत जाना। अगर मैं जानता कि यहाँ इस तरहकी खानगियाँ इकट्ठी होंगीं और इस तरहका बखेडा करेंगी, तो क्या मैं अपनी जाति और धर्मके गँवानेके लिए कभी इस घरमें पैर रखता ?—काली, उठ आओ।

मामाके बार बार बुलानेपर भी कालीचरण सिर नीचा किये चुपचाप बैठा रहा। वह पाटका रोजगार करता है। कोई चार बरस पहले कलकत्तेका रहनेवाला एक बहुत प्रतिष्ठित ग्राहक उसकी छोटी विधवा बहनको भगा ले गया था। यह बात किसीसे छिपी नहीं थी। पहले तो कुछ दिनों तक यह कहकर बात छिपाई गई थी कि वह अपनी ससुराल गई है और फिर वहाँसे तीर्थ-यात्रा करने, आदि आदि। कालीचरण इसी डरसे सिर नहीं उठाता था कि कहीं इस दुर्घटनाका इतिहास इतने दिनों बाद फिर सब लोगोंके सामने न खुलने लगे। लेकिन गोविन्दको जो आग लगी थी वह जरा भी कम नहीं हुई। वह फिर उठकर खड़े हो गये और जोर जोरसे चिल्लाकर कहने लगे—चाहे कोई कुछ भी क्यों न कहे, यहाँके चौधरी हैं वेणी घोषाल, पराण हालदार और यदु मुकर्जीकी लड़की। हम लोग उन्हें किसी तरह नहीं छोड सकते। जब तक रमेश भइया इस बातका जवाब नहीं दे लेंगे कि उन्होंने बिरादरीकी बिना मंजूरीके इन दोनों बदमाश औरतोंको क्यों घरमें आने दिया, तब तक हममेंसे कोई यहाँ पानी तक न पीएगा।

देखते देखते और भी दस-पाँच आदमी कन्धेपर दुपट्टा रख कर खड़े हो गये। ये सब लोग देहाती थे और सामाजिक व्यवहारमें किस समय कौन-सी चाल सबसे अधिक लाभदायक होती है, इस बातको खूब समझते थे।

निमन्त्रित ब्राह्मण सज्जनोंमेंसे जिसके मनमें जो आया वही कहने लगा। भैरव और दीनू भट्टाचार्य तो बिलकुल रोआँसे हो गये। वे कभी तो खेन्ती मौसी और उसकी लड़कीके और कभी गॉगूली और हालदारके हाथ पैर पकड़नेकी कोशिश करने लगे। चारों तरफसे इस अनुष्ठानके बिलकुल खरमंडल होनेके लक्षण प्रकट होने लगे। लेकिन रमेश एक भी बात न कह सके। एक तो भूख-प्याससे उनकी हालत यों ही खराब हो रही थी, तिसपर अचानक यह अन-चेती बात हो गई। उनका रंग पीला पड गया और वे हत-बुद्धिकी तरह बिलकुल स्तब्ध होकर खड़े खडे देखने लगे।

इतनेमें आवाज आई—रमेश!

अचानक क्षण-भरमें ही सब लोगोंकी चकित दृष्टि विश्वेश्वरीके मुखपर जा पड़ी। वह भंडारघरसे बाहर निकलकर दरवाजेके सामने आ खड़ी हुई थीं। उनके सिरपर ऑचल तो था, लेकिन मुँह खुला हुआ था। रमेशने देखा कि ताईजी आप ही न जाने कब आ गई हैं। उन्होंने मुझे छोड नहीं दिया है। बाहरके लोगोंने भी देखा कि यही विश्वेश्वरी हैं और यही घोषालोंके घरकी मालकिन हैं।

गॉवोंमें शहरोंकी तरह कडा परदा नहीं होता। तो भी विश्वेश्वरी चाहे बड़े घरकी स्त्री होनेके कारण ही हो और चाहे किसी और ही कारणसे हो, यथेष्ट अवस्था हो जानेपर भी साधारणतः कभी किसीके सामने नहीं निकलती थीं। इसीलिए आज उन्हें देखकर सब लोगोंको बहुत आश्चर्य हुआ। जिन लोगोंने सिर्फ सुना ही था और कभी ऑखोंसे देखा नहीं था, वे उनकी विलक्षण आँखोंकी तरफ देखकर बिलकुल अवाक् हो गये। सम्भवतः अचानक क्रोध आ जानेके कारण ही वे बाहर आ गई थीं। ज्यों ही सब लोगोंने सिर उठाकर उनकी तरफ देखा, त्यों ही वे खम्भेकी आड़में चली गईं। उनकी स्पष्ट और तीव्र बुलाहट सुनते ही रमेशकी सारी विह्वलता न जाने कहाँ चली गई। वह आगे बढकर उनके पास जा पहुंचे। ताईजीने आडमेंसे उसी स्पष्ट और उच्च स्वरसे कहा—गॉगूली महाशयको मना कर दो कि इस तरह डरावें-धमकावें नहीं। और हालदारजीसे भी मेरा नाम लेकर कह दो कि मैं सभीको आदर-पूर्वक बुलाकर अपने घर लाया हूँ। सुकुमारीका अपमान करनेकी उन्हें कोई जरूरत नहीं थी। हमारे काम-काजके घरमें कोई हो-हल्ला और गाली-गलौज न करे। जिन लोगोंको इसमें असुविधा हो, वह और कहीं जाकर बैठें।

बडी मालकिनका यह कडा हुकुम सभी लोगोंने अपने कानोंसे सुना। रमेशको अपने मुँहसे कुछ भी न कहना पड़ा। यदि उन्हे कहना पडता तो शायद वह कह भी न सकते। इसका जो कुछ फल हुआ, उसे वे 'खड़े होकर देख भी न सके। जब उन्होंने देखा कि ताईजीने सारा भार अपने सिर ले लिया है, तब वे किसी प्रकार अपने नेत्रोंका जल रोककर जल्दीसे एक कोठरीमे जा घुसे। वहाँ उनकी ऑखोंसे झर झर ऑसुओंकी धारा बहने लगी। आज सवेरेसे ही वे अपने कामोंमे बहुत व्यस्त थे, इसलिए, वे इस बातकी भी खोज-खबर न ले सके कि कौन आया है और कौन नहीं आया। और चाहे जो आवे, परन्तु उन्हें इस बातकी दूरतक भी कल्पना नहीं थी कि ताईजी आ सकती हैं। जो लोग उठकर खड़े हो गये थे, वे धीरे धीरे बैठ गये। सिर्फ गोविन्द गॉगूली और पराण हाल्दार जड़ होकर खड़े रहे। उस भीड़मेंसे किसीने अस्फुट स्वरसे कहा—चाचा, बैठ जाओ न। खिला-पिलाकर सोलह सोलह पूरियॉ और चार चार जोड़ी सन्देश भला कौन देता है !

पराण हाल्दार तो धीरे धीरे बाहर हो गये, लेकिन आश्चर्य, गोविन्द गाँगूली सचमुच ही बैठ गये। हॉ, उनका मुँह अवश्य ही अन्ततक भारी ही बना रहा और जब भोजनके लिए पत्तले बिछीं, तब देख-रेखका बहाना करके वे पंक्ति-भोजनमें नहीं बैठे। जिन लोगोंने उनके इस व्यवहारको लक्ष्य किया, उन सबने मन ही मन समझ लिया कि गोविन्द सहजमे किसीको भी न छोड़ेंगे। इसके बाद और कोई गड़बड़ी नहीं हुई। उस दिन ब्राह्मणोंने जो भोजन किया, उसपर बिना ऑखों देखे विश्वास करना बहुत ही कठिन है। सभी लोगोंने अपने घरके मनुआ-बचवा और ललिया-बचिया आदि अनुपस्थित लडकों और लडकियोंके नामसे जो कुछ बॉधा वह भी कुछ कम नहीं था। सन्ध्याके बाद सब काम-धन्धा खतम हो गया। रमेश सदर दरवाजेके बाहर एक अमरूदके पेडके नीचे अन्य-मनस्क भावसे खड़े थे। उनका मन ठिकाने नहीं था। इतनेमे उन्होंने देखा कि दीनू भट्टाचार्य अपने लडके-लडकियोंको साथ लिये, पूरी-मिठाईके भारसे झुके हुए और यथासाध्य सबकी नजर बचाते हुए बाहर निकल रहे हैं। सबसे पहले उनकी लडकी मुनियाकी नजर रमेशपर पड़ी। वह अपराधियोंकी तरह सहम कर खड़ी हो गई और रूखे हुए स्वरसे बोली— बाबा, देखो बाबूजी खड़े हैं।

सभीको मानों काठ मार गया। उस छोटी लडकीकी इस एक बातसे ही

रमेशने सब बातें अच्छी तरह समझ लीं। अगर भागनेकी जगह होती तो शायद वे स्वयं ही उस समय वहाँसे भाग जाते। लेकिन भागनेका कोई रास्ता नहीं था, इसलिए वे स्वयं ही आगे बढ़ आये और हँसते हुए बोले—मुनिया, ये सब चीजें किसके लिए ले जा रही है?

मुनियाके पास जो छोटी-बड़ी बहुत-सी पोटलियाँ थीं, उनके बारेमें वह कोई ठीक उत्तर न दे सकेगी, इस आशंकासे दीनूने स्वयं ही जरा-सी सूखी हँसी हँसकर कहा—भइया, महल्लेमें छोटी जातिके बच्चे भी तो हैं। यह बची-खुची झूठन ले जाऊँगा तो उन्हें थोड़ी-बहुत दे सकूँगा। लेकिन जो हो, भइया, आज मुझे मालूम हुआ कि क्यो देश-भरके लोग उन्हें मालकिन माँ कहते हैं।

रमेश कोई उत्तर न देकर उनके साथ फाटक तक चले आये और सहसा प्रश्न कर बैठे - क्यों भट्टाचार्यजी, आप तो यहाँका सब कुछ जानते हैं। आप बतला सकते हैं कि इस गाँवमें इतना ईर्ष्या-द्वेष क्यों है?

दीनूने अपने मुँहसे कुछ आवाज निकालकर और दो-एक बार गरदन हिलाकर कहा—अरे भइयाजी, हम लोगोंके इस कूआँपुर गाँवमें तो फिर भी बहुत खैरियत है। इधर कई दिन तक मुनियाके मामाके घर रहकर वहाँका जो हाल देख आया हूँ, वह मैं तुमसे क्या कहूँ। वहाँ ब्राह्मणों और कायस्थोंके मुश्किलसे बीस घर होंगे; फिर भी गाँव-भरमें चार दल हैं। हरनाथ विश्वासने सिर्फ इसी बातपर अपने सगे भानजेको जेल भेजकर छोड़ा कि उसने बागमेंसे दो-चार विलायती अमड़े तोड़ लिये थे। भइयाजी, सभी गाँवोंमें ऐसा होता है। इसके सिवाय मामले-मुकदमोंके मारे सबमें सौ सौ छेद हैं। —मुनिया, जरा हरिधनके हाथसे पोटली तो ले ले। वह थक गया होगा।

रमेशने फिर पूछा—क्यों भट्टाचार्यजी, क्या इसका कोई प्रतिकार नहीं हो सकता?

भट्टाचार्यने एक ठंढी साँस लेकर कहा—भइया, इसका प्रतिकार क्या हो सकता है? यह घोर कलजुग जो ठहरा। लेकिन फिर भी भइयाजी, मैं एक बात कह सकता हूँ। मुझे तो भिक्षाके लिए बहुत सी जगहोंमें जाना पड़ता है और मुझपर बहुत-से लोग अनुग्रह भी करते हैं। मैंने खूब देखा है कि आप सरीखे युवकोंमें दया धर्म फिर भी है। अगर नहीं है तो सिर्फ इन साले बुड्ढोंमें। ये लोग जहाँ मौका पाते हैं वहाँ आदमीके गलेपर पैर रखकर खड़े हो जाते हैं; और जब तक उसकी जीभ इस तरह बाहर न निकल आवे, तब तक उसकी जान नहीं छोड़ते।

यह कहकर दीनूने ऐसे ढगसे अपनी जीभ बाहर निकालकर दिखाई कि रमेशको हँसी आ गई। लेकिन दीनू उस हँसीमें शामिल नहीं हुए और बोले—भइयाजी, हँसीकी बात नहीं है, बिलकुल ठीक है। मैं भी अब बहुत बुड्ढा हो गया हूँ; लेकिन—भइयाजी, आप तो अँधेरेमें बहुत दूर बढ़ आये!

रमेशने कहा—कोई चिन्ता नहीं भट्टाचार्यजी, आप कहते चलें।

दीनूने कहा—भइयाजी, मैं और क्या कहूँ! हर गाँव-देहातमें यही हाल है। यह जो गोविन्द गाँगूली है, इस सालेके पापकी बात जबानपर लाऊँ तो प्रायश्चित्त करना पड़े। खेन्ती बाम्हनीने जो कुछ कहा, वह झूठ थोड़े ही कहा था। लेकिन उससे सभी डरते हैं। जाल करनेमें, झूठी गवाही देनेमें, झूठा मुकदमा बनानेमें उसकी जोड़ी नहीं है। लेकिन वेणी बाबू उसकी पीठपर हैं, इसलिए किसीको उसके विरुद्ध एक बात कहनेका भी साहस नहीं होता। बल्कि उलटे यही औरोंको जातसे बाहर करता फिरता है।

रमेश बहुत देरतक और कोई प्रश्न किये बिना चुपचाप दीनूके साथ साथ चलते रहे। मारे क्रोधके उनका सारा शरीर जल रहा था। दीनू आप ही कहने लगे—भइयाजी, आप मेरी बात याद रखिएगा, इस खेन्ती बाम्हनीका सहजमें छुटकारा नहीं होगा। गोविन्द गाँगूली और पराण हालदार,—दो दो बरोंके छत्तोंको छेडना क्या कोई मामूली बात है? लेकिन कुछ भी कहो भइयाजी, उस औरतमें बड़ी हिम्मत है। और फिर हिम्मत क्यो न हो? वह फरवी बेचकर अपना गुजारा करती है। सभी घरोंमें उसका जाना-आना है। सबकी सब बातोंका पता रखती है। मैं कहे देता हूँ कि उसके इस तरह पीछे पड जानेसे इनकी बदनामीकी हद हो जायगी। भला आप ही बतलाइए कि अनाचार किस घरमे नहीं है? वेणी बाबूको भी—

रमेशने इस भयसे कि न जाने यह क्या कहेगा, बीचमें ही रोककर कहा—रहने दीजिए। बड़े भइयाका जिक्र करनेकी जरूरत नहीं है।

दीनूने भी अप्रतिभ होकर कहा—हाँ रहने दो भइयाजी, मैं भी गरीब आदमी हूँ। मुझे किसीकी बातमे पड़नेकी क्या जरूरत! अगर कोई जाकर वेणी बाबूसे कह दे तो वे मेरा घर ही जलवा—

रमेशने फिर रोककर पूछा—क्यो भट्टाचार्यजी, आपका घर क्या और भी दूर है?

दीनूने कहा—नहीं भइया, ज्यादा दूर नहीं। इस बाँधके पास ही मेरी झोपडी है। अगर किसी दिन—

" आऊँगा क्यों नहीं ! जरूर आऊँगा। अभी तो कल सवेरे फिर आपसे भेंट होगी। लेकिन उसके बाद भी बीचमें अपने चरणोंकी धूल दिया कीजिएगा।"

इतना कहकर रमेश वहाँसे लौट पड़े। दीनू भट्टाचार्यने भी उन्हें अपने अन्तःकरणसे आशीर्वाद दिया," भइया, दीर्घजीवी होओ। अपने पिताकी तरह होओ।" और तब वे लड़के-बच्चोंको लिये हुए अपने घरकी तरफ चले गये।

५

इस गाँवमें मोदीकी एक ही दूकान मधुपालकी है जो नदीकी तरफ़ जानेवाले रास्तेपर हाटके एक तरफ है। जब दस-बारह दिन बीत गये और वह अपने बाकी दस रुपये लेने नहीं आया, तब रमेश न जाने क्या सोचकर स्वयं ही एक दिन सवेरे उसकी दूकानपर जानेके लिए घरसे निकल पड़े। मधुपालने बड़े ही आदरके साथ बरामदेमें एक मोढा रखकर उसपर छोटे बाबूको बैठाया। छोटे बाबूके आनेका उद्देश्य सुनकर वह अवाक् हो गया। मधुपालकी इतनी उमर बीत गई थी, लेकिन आज तक उसने न तो कभी अपनी आँखोंसे देखा था, और न सुना ही था कि कोई अपना बाकी रुपया चुकानेके लिए आप ही चलकर आता है ! बातोंमें बहुतसे प्रसंग चले। मधुने कहा—भला बाबूजी, दूकान कैसे चल सकती है ? दो आना, चार आना, एक रुपया, सवा रुपया कर करके प्रायः पचास साठ रुपये लोगोंके यहाँ बाकी पड गये हैं। कह तो जाते हैं कि अभी दाम दिये जाते हैं लेकिन दो दो महीने तक अदा नहीं करते।—कौन ? बैनर्जी हैं क्या ! प्रणाम। कहिए, कब आये ?

बेनर्जीके बाएँ हाथमें एक लोटा था और उनके पैरोंके नाखूनों और एडियोंपर कीचडके दाग थे, कानपर जनेऊ चढ़ा हुआ था और दाहिने हाथमें अरबीके पत्तेमें लपेटी हुई चार छोटी छोटी चिंगडी मछलियाँ थीं। उन्होंने जोरसे एक निःश्वास डालकर कहा— कल रातको आया हूँ। मधु, जरा तमाखू तो पिलाओ।

इतना कहकर बैनर्जीने लोटा हाथसे रख दिया, हाथमेंकी मछलियाँ भी एक तरफ रख दीं और कहा—मधु, तुमने इस लखिया धीबरिनकी अकिल देखी ? उसने टपसे मेरा हाथ पकड लिया। देखो, देखते देखते कैसा जमाना बदल गया है ! अब यह क्या एक पैसेकी चिंगडी है ? भला ब्राह्मणको ठगकर यह बुढ़िया कितने दिन पेट भरेगी ? उसका नाश नहीं हो जायगा ?

मधुने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—क्या उसने आपका हाथ पकड़ लिया?

क्रुद्ध वैनर्जीने एक बार चारों तरफ देखकर और उत्तेजित होकर कहा—सिर्फ ढाई पैसे उसके बाकी हैं। लेकिन क्या इसके लिए वह हाट-भरके सामने हमारा हाथ पकड़ लेगी? भला बताओ, वहाँ कौन ऐसा होगा जिसने न देखा हो! मैंने मैदानसे आकर नदीमें लोटा माँजा, हाथ-पैर धोये और सोचा कि चलो, जरा हाट भी होता चलूँ। वह एक दौरीमें मछली लिये बैठी थी। पर मुझसे निःसंकोच कह उठी—महाराज, अब कुछ नहीं है, जो थीं, सब बिक गईं। लेकिन हमारी आँखोंमें भला, धूल झोंक सकती है? ज्यों ही मैंने दौरी देखनेके लिए उसपरका कपड़ा हटाया, त्यों ही उसने, चटसे मेरा हाथ पकड़ लिया। अरे तेरे पहलेके ढाई पैसे और आजका यह एक पैसा, कुल साढ़े तीन पैसे लेकर क्या मैं गाँव छोड़कर भाग जाऊँगा?—क्यों मधु, क्या कहते हो?

मधुने भी हामी भरते हुए कहा—अरे महाराज, भला ऐसा कहीं हो सकता है!

वैनर्जीने कहा—तब यही कहो न। इस गाँवमें भला कहीं शासन या न्याय रह गया है? नहीं तो उसके घर धोबी, हजाम सबका जाना बन्द कर दिया जाता और उसका छप्पर काटकर घर उजाड़ दिया जाता!

अचानक रमेशकी ओर देखकर पूछा—मधु, यह बाबूजी कौन हैं?

मधुने गर्वपूर्वक कहा—ये हमारे छोटे बाबूके लड़के हैं न। अभी उस दिनके दस रुपये बाकी थे। वही देनेके लिए घरसे चलकर यहाँ तक आये हैं।

वैनर्जीने मछलीवालीका अभियोग भूलकर और आँखें फाड़कर देखते हुए कहा—अरे रमेश भइया हैं, जीते रहो भइया! मैंने आते ही सुना कि आपने वह काम किया जिसे काम कहते हैं। इस तरहका खिलाना-पिलाना इस तरफ आज तक कभी हुआ ही नहीं। पर इस बातका बड़ा दुःख रहा कि मैं अपनी आँखोंसे न देख सका। दो-चार सालके फेरमें पड़कर कलकत्ते नौकरी करने चला गया था, सो इस दुर्दशाको पहुँच गया। अरे राम राम, वहाँ क्या कोई आदमी रह सकता है?

रमेश चुपचाप वैनर्जीके मुँहकी तरफ देखते रहे। लेकिन दूकानपर और जितने आदमी थे, वे सभी उनकी कलकत्तेवाली यात्राका हाल सुननेके लिए बहुत ही उत्सुक हो उठे। तमाखू भरकर मधुने हुक्का वैनर्जीके हाथमें देते हुए पूछा—फिर क्या हुआ? कोई नौकरी-चाकरी मिली?

"मिलेगी क्यों नहीं! क्या मैंने कोदों देकर लिखना-पढ़ना सीखा है?

लेकिन नौकरी मिलनेसे ही क्या होता है! वहाँ रह कौन सकता है! जैसा धूआँ, वैसा ही कीचड़। अगर तुम घरसे बाहर निकलो और गाड़ी-घोड़ेके नीचे न दब जाओ और सही-सलामत घर लौट आओ, तो समझना कि तुम्हारे बापने बड़ा पुण्य किया था!"

मधु कभी कलकत्ते नहीं गया था। केवल एक बार गवाही देनेके लिए मेदिनीपुर अवश्य देख आया था। उसने बहुत ही चकित होकर कहा—अरे यह आप क्या कहते हैं!

बैनर्जीने कुछ हँसकर कहा—जरा अपने रमेश बाबूसे पूछो कि मैं सच कहता हूँ या झूठ। नहीं मधु, अब चाहे मुझे यहाँ खानेतकको न मिले, यहाँ मैं अपने पेटपर हाथ रखकर यों ही पड़ा पड़ा मर जाऊँ सो अच्छा। लेकिन अब कोई परदेस जानेका नाम भी मेरे सामने न ले। अगर मैं कहूँगा तो तुम्हें विश्वास न होगा कि वहाँ सोआ, पालक, धनियाँ, मिर्चे, अमड़ा तक खरीद खरीद कर खाना पड़ता है। भला बतलाओ, तुम खरीदकर खा सकोगे? इस एक ही महीनेमें बिना खाये बीमार चूहेकी तरह हो गया हूँ। दिन-रात पेट गड़ गड़ करता है, कलेजा जलता रहता है, दिल घबराता रहता है। भागकर जब यहाँ आया, तब कहीं जानमें जान आई। नहीं भइया, नहीं, अपने गाँवमें रहकर जो कुछ मिलेगा, एक बार साँझको खा लूँगा और वह भी नहीं मिलेगा तो अपने बाल-बच्चोंको साथ लेकर भीख माँग लूँगा। ब्राह्मणकी औलादके लिए इसमें कोई लज्जाकी बात भी नहीं। लक्ष्मीमाई मेरे सिर आँखोंपर हैं, लेकिन कभी कोई परदेस न जाय!

जब बैनर्जीकी यह कहानी सुनकर सब लोग भयसे अवाक् हो गये, तब वे उठकर वहाँ जा पहुँचे जहाँ दूकानपर तेलका बरतन रखा हुआ था और पली उठाकर बरतनमेंसे कोई छटाक-भर तेल निकालकर बाएँ हाथकी हथेलीपर रखा। फिर उसमेंसे आधेके लगभग नाक और कानोंके गड्ढोंमें डाला, बाकी आधा अपने सिरपर उलटकर मल लिया और तब कहा—बहुत देर हो गई। अब नहाकर घर चलना चाहिए। मधु, एक पैसेका नमक तो दे दो। पैसा तीसरे पहर दे जाऊँगा।

मधु यह कहता हुआ, "फिर वही तीसरे पहर?" अप्रसन्न मुखसे नमक देनेके लिए उठा। बैनर्जीने गर्दन बढ़ाकर देखा और विस्मय तथा अप्रसन्नताके भावसे कहा—मधु, तुम लोगोंको हो क्या गया है? यह तो मुँहपर थप्पड़ मारकर पैसा छीन लेना है। देखूँ?

इतना कहकर बैनर्जीने स्वयं ही आगे बढ़कर एक मुट्ठी नमक और भी उठाकर पुड़ियामें डालकर उसे झपट लिया। इसके बाद लोटा उठाकर रमेशकी ओर देखा और कुछ मुस्कराते हुए कहा—भइयाजी, यह एक ही तो रास्ता है। चलिए, बात-चीत करते चलेंगे।

रमेश भी "चलिए" कहकर उठ खड़े हुए। मधुने कुछ ही दूर खड़े होकर करुण स्वरसे कहा—बैनर्जी महाराज, वह आटेका पाँच आना पैसा क्या—

बैनर्जी बिगड़ पड़े—क्यों जी मधु, अब तो दोनों समय आना-जाना रहेगा, क्या तुम लोगोंकी आँखमें जरा भी लिहाज नहीं रह गया? जब उन सालोंके फेरमें पड़कर कलकत्ते आने-जानेमें पाँच रुपये पानीमें बह गये, तभी तुम्हारे तकादा करनेका समय हुआ? इसीको कहते हैं किसीका सर्वनाश और किसीका पूसमास। देखते हो भइया रमेश, इन लोगोंका व्यवहार!

मधु सकुचित-सा होकर दबी जबानसे बोला—बहुत दिनोंका—

"हो बहुत दिनोंका। अगर इस तरह तुम सभी मिलकर पीछे पड़ जाओगे तब तो फिर गाँवमें रहना ही मुश्किल हो जायगा।"

इतना कहकर एक तरहसे नाराज ही होकर बैनर्जी अपना सामान लेकर चले गये।

रमेश वहाँसे लौटकर अपने मकानके दरवाजेपर पहुँचे ही थे कि एक भले आदमी घबराकर अपने हाथका हुक्का एक तरफ रखकर आगे बढ़े और उन्होंने झुककर प्रणाम किया। फिर उठकर कहा—मेरा नाम बनमाली पाण्डे है। मैं आप लोगोंके स्कूलका हेड मास्टर हूँ। मैं दो बार आ चुका हूँ। पर आपके दर्शन नहीं हुए। इसलिए—

रमेशने आदरपूर्वक उनसे कुरसीपर बैठनेके लिए कहा। लेकिन वह अदब-कायदेसे खड़े ही रहे और बोले—जी, मैं तो आप लोगोंका नौकर हूँ।

एक तो उनकी अवस्था अधिक थी, और फिर वे एक विद्यालयके शिक्षक थे। उनके इस अधिक विनीत और कुण्ठित व्यवहारसे रमेशके मनमें कुछ अश्रद्धाका भाव जाग्रत हुआ। उन्होंने किसी प्रकार आसन ग्रहण करना स्वीकार न किया और खड़े ही खड़े अपना वक्तव्य सुनाना शुरू कर दिया—इस तरफ यही एक बहुत छोटा-सा स्कूल है। मुकर्जी और घोषालके प्रयत्नसे इसकी स्थापना हुई थी। इसमें तीस-चालीस लड़के पढ़ते हैं। कोई कोई दो दो और तीन तीन कोस दूरसे भी आते हैं। थोड़ी बहुत सरकारी सहायता भी मिलती

है। लेकिन फिर भी स्कूल चलना नहीं चाहता। रमेशको याद आया कि लड़कपनमें मैंने भी कुछ दिनों तक इस स्कूलमें पढ़ा था। पाण्डेजीने बतलाया कि अगर छप्पर फिरसे न छाया जायगा तो अगली बरसातमें कोई स्कूलके अन्दर न बैठ सकेगा। लेकिन इसकी चिन्ता तो कुछ बादमें भी की जा सकती है। इस समय सबसे बढ़कर चिन्ताकी बात यह है कि इधर तीन महीनेसे किसी शिक्षकको तनख्वाह नहीं दी गई है। इसलिए अब कोई अपने घरका खाकर जंगलके भैंसे नहीं हाँक सकता।

स्कूलकी बातसे रमेश बिलकुल सजग हो गये। वे हेडमास्टर साहबको अपने साथ लेकर बैठकमें चले गये और वहाँ उनसे एक एक करके सब हाल पूछने लगे। स्कूलमें चार शिक्षक हैं। उन लोगोंने बहुत अधिक परिश्रम करके औसतन दो दो लड़के हर साल माइनर परीक्षामें पास कराये हैं। उनके नाम और पते आदि पाण्डेजी इस तरह सुना गये, मानों कण्ठ कर रक्खे हों। लड़कोंसे जो फीस वसूल होती है, उससे नीचेके दो शिक्षकोंकी तनख्वाहका काम किसी तरह चल जाता है; और सरकारी सहायतासे और एक मास्टरका काम चल जाता है। सिर्फ एक आदमीकी तनख्वाह गाँवके और आसपासके लोगोंसे चन्दा करके इकट्ठा की जाती है। यह चन्दा करनेका भार भी मास्टरोंपर ही है। इधर लगातार चार महीनोंसे घर घर घूमनेपर और एक एक आदमीके यहाँ आठ आठ और दस दस फेरे लगानेपर भी वे सवा सात रुपयेसे अधिक वसूल नहीं कर सके हैं।

यह सुनकर रमेश स्तंम्भित हो गये। वे सोचने लगे कि पाँच छः गाँवोंके बीचमें यही एक स्कूल है और इन पाँच-छः गाँवोमें चार महीने तक घूमनेपर वसूल हुए है सिर्फ सवा सात रुपये! रमेशने पूछा—आपकी तनख्वाह कितनी है?

मास्टर साहबने कहा—रसीद तो छब्बीस रुपयेकी देनी पड़ती है, लेकिन मिलते हैं सिर्फ तेरह रुपये पन्द्रह आने।

रमेशकी समझमें यह पहेली बिलकुल नहीं आई, इसलिए वे मास्टर साहबका मुँह देखने लगे। मास्टर साहबने उनके मनका भाव समझकर कहा—सरकारी हुकुम ही ऐसा है, इसलिए छब्बीस रुपयेकी रसीद लिखकर स्कूलोंके डिप्टी इन्स्पेक्टर साहबको दिखलानी पड़ती है। नहीं तो सरकारी सहायता बन्द हो

जाय ! यह तो सभी जानते हैं । आप किसी भी विद्यार्थीसे पूछकर जान सकेंगे कि मैं झूठ नहीं कह रहा हूँ ।

रमेशने कुछ देर तक चुप रहनेके बाद पूछा—इससे विद्यार्थियोंके सामने आपके सम्मानकी हानि नहीं होती ?

मास्टर साहब लज्जित होकर बोले—क्या करूँ रमेशबाबू, वेणी बाबू तो इतना भी देनेको राजी नहीं हैं ।

रमेशने कहा—मालूम होता है कि वही कर्त्ता-धर्त्ता हैं ।

मास्टर साहबको कुछ दुविधा तो जरूर हुई, लेकिन, वे 'नहीं' तो कर ही न सकते थे । इसलिए उन्होंने धीरे धीरे बतलाया कि वह सेक्रेटरी तो हैं, लेकिन कभी एक पैसा भी अपने पाससे खर्च नहीं करते । हाँ, यदु मुकर्जीकी कन्या बिलकुल लक्ष्मी हैं । यदि उनकी कृपा न होती तो स्कूल कभीका बन्द हो गया होता । पहले तो उन्होंने आशा दिलाई थी कि वे इस साल अपने खर्चसे छप्पर छवा देंगी । लेकिन फिर न जाने क्यों एकाएक उन्होंने हाथ खींच लिया और सारी सहायता बन्द कर दी ।

रमेशने कुतूहल-वश रमाके सम्बन्धमें और भी कई प्रश्न किये और तब अन्तमें पूछा—उनका एक भाई भी तो इस स्कूलमें पढ़ता है ?

मास्टर साहबने कहा—वही यतीन ? हाँ, पढ़ता क्यों नहीं है !

रमेशने कहा—अच्छा, अब आपका स्कूलका समय हो गया है । आज आप जायँ । मैं कल आपके स्कूलमें आऊँगा ।

"जो आज्ञा ।" कहकर हेड मास्टर साहबने फिर एक बार रमेशको प्रणाम किया और वे जबरदस्ती उनके चरणोंकी धूल सिरसे लगाकर चल दिये ।

६

विश्वेश्वरीकी उस दिनकी बात उसी दिन आस-पासके दस-पाँच गाँवोंमें फैल गई थी । वेणी स्वयं किसीके मुँहपर कोई कड़ी बात नहीं कह सकते थे, इसलिए वे जाकर मौसीको बुला लाये थे । सुनते हैं कि किसी जमानेमें तक्षक नागने अपना दाँत गड़ाकर पीपलका एक बहुत बड़ा वृक्ष जलाकर बिलकुल राख कर दिया था । यह मौसी भी उस दिन सवेरे घर आकर जो विष उगल गई, उससे विश्वेश्वरीका रक्त-मांसका शरीर, चाहे इसलिए कि वह काठका नहीं था और चाहे इसलिए कि उस जमानेमें और इस जमानेमें बहुत अन्तर

हो गया है, जलकर राख नहीं हुआ। विश्वेश्वरीने सारा अपमान चुपचाप सहन कर लिया, क्यों कि, यह उनसे छुपा न था कि यह सब उनके पुत्रके द्वारा ही घटित हुआ था। वह सोचती थीं कि अगर मैंने क्रोधमें आकर एक बातका भी जवाब दिया, तो इस स्त्रीके मुँहसे सबसे पहले मेरे लड़केकी ही बात प्रकट हो जायगी और शायद वह रमेशके कानों तक जा पहुँचेगी। इसी लज्जाके मारे विश्वेश्वरी उतनी देरतक बिलकुल काठकी तरह बैठी रहीं।

लेकिन गाँव-देहातमें कोई बात छिपी नहीं रहती। रमेशने भी सुन ली। अपनी ताईके सम्बन्धमें आरम्भसे ही उनके मनमें उत्कण्ठा थी, और उन्हें यह आशंका भी थी कि मेरे कारण माता और पुत्रमें कुछ कलह अवश्य होगी। लेकिन वेणी बाहरसे एक आदमीको अपने घरमें बुलाकर उससे अपनी माँका अपमान और निर्यातन करावेंगे, उन्हें यह बात बहुत ही अनोखी और दुनियासे न्यारी जान पड़ी; और इसके बाद तुरन्त ही उनके क्रोधकी अग्नि मानो उनका ब्रह्म-रन्ध्र भेदकर जलने लगी। सोचा कि मुझे इसी समय उस घरमें पहुँचना चाहिए और वहाँ जो कुछ खरी-खोटी मुँहमें आवें, सब वेणीको सुना आना चाहिए, क्योंकि, जो आदमी इस तरह अपनी माताका अपमान करा सकता है, उसका अपमान करते समय किसी बातका विचार करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन इसके बाद ही खयाल आया कि यह ठीक नहीं, क्योंकि, इससे ताईजीके अपमानकी मात्रा और बढ़ेगी ही, कुछ कम नहीं होगी। उस दिन दीनूसे और कल मास्टर साहबसे रमाके सम्बन्धकी कुछ बातें सुनकर उसके प्रति उनके मनमें श्रद्धाका कुछ भाव उत्पन्न हुआ था। जब उन्हें पूरा विश्वास हो गया कि इस चारों तरफ फैली हुई परिपूर्ण मूढ़ता और कदर्य क्षुद्रतामें एक ताईजीके हृदयको छोड़कर बाकी सारा गाँव ही अन्धकारमें डूबा हुआ है, तब इस मुखर्जीके घरकी तरफ देखकर ही उन्होंने प्रकाशका आभास पाया था, फिर चाहे वह आभास कितना ही तुच्छ और क्षुद्र क्यों न हो। उससे उनके मनमें बहुत आनन्द हुआ था। लेकिन आज फिर इस घटनासे रमाके प्रति उनका सारा मन घृणा और वितृष्णासे भर गया। उनके मनमें इस विषयमें तनिक भी सन्देह नहीं रह गया कि इन दोनों मौसी और बहनौतिनने मिल कर वेणीका साथ दिया है और ताईजीके साथ यह अन्याय किया है। लेकिन बहुत कुछ सोचनेपर भी उनकी समझमें यह न आया कि मैं इन दोनों स्त्रियोंके विरुद्ध अथवा स्वयं वेणीको ही किस प्रकार अथवा क्या दंड दे सकूँगा।

इसी बीचमें एक और घटना हो गई। कई जायदादें अभीतक ऐसी थीं जो मुखर्जी और घोषाल वंशोंमें बँटी नहीं थीं। आचार्योंके घरके पिछवाड़े गड नामका जो ताल था, वह भी इसी प्रकार दोनोंकी साझेकी सम्पत्ति था। किसी समय बहुत बड़ा था, लेकिन मरम्मत और सफाई न होनेके कारण पटता पटता अब एक मामूली-सी गढैयाके रूपमें ही रह गया था। अच्छी मछलियाँ न तो बाहरसे लाकर छोड़ी जाती थीं, और न उसमें थीं। आपसे आप जो एक दो तरहकी मामूली मछलियाँ पैदा होती थीं, वही होती थीं। भैरव हाँफते हाँफते आ पहुँचे। बाहर चंडीमंडपके पास ही घरके कारिन्दे गोपाल सरकार बैठे हुए बही-खाता लिख रहे थे। भैरवने घबराकर कहा—सरकार महाशय, आपने अपने आदमी नहीं भेजे? गड़की मछलियाँ पकड़ी जा रही हैं।

सरकारने कानपर कलम खोंसते हुए सिर उठाकर पूछा--कौन पकड़वा रहा है?

भैरवने कहा—और कौन पकड़वावेगा? वेणी बाबूका नौकर खड़ा है। मुखर्जीका पछैयाँ दरबान भी है। मैं अभी देखता आ रहा हूँ। सिर्फ आपके यहाँका ही आदमी नहीं है। जल्दी किसीको भेजिए।

लेकिन गोपालने बिना कुछ भी चंचलता प्रकट किये कहा—हमारे बाबूजी मांस-मछली नहीं खाते।

गोपालने कहा—हम सब लोग जरूर चाहते हैं। और अगर बड़े बाबू जीते होते तो वह भी जरूर चाहते लेकिन रमेश बाबू कुछ और ही तरहके आदमी हैं।

भैरवने कहा—वह न खायँ तो इससे क्या होता है। लेकिन अपना हिस्सा तो लेना चाहिए।

जब इस बातपर गोपालने भैरवके मुखपर आश्चर्यका चिह्न देखा, तब उन्होंने हँसते हुए और कुछ चुटकी लेते हुए कहा—आचार्यजी, यह तो सड़ी-सी दो-चार मछलियोंकी बात है। उस दिन हाटके उत्तर तरफवाला वह बड़ा इमलीका पेड़ काटा गया था। उन दोनों घरोंने उसे आपसमें मिलकर बाँट लिया और हम लोगोंको उसमेंसे एक छिलका भी न मिला। मैंने तुरन्त ही आकर बाबूजीको सब बातें बतलाईं। वह किताब पढ़ रहे थे। उन्होंने सिर्फ एक बार जरा-सा सिर उठाकर देखा और कुछ मुस्कराकर फिर किताब पढ़ने लग गये। मैंने पूछा भी कि सरकार, क्या करना चाहिए। लेकिन हमारे रमेश बाबूको फिर जरा-सा सिर उठानेकी भी फुरसत न मिली। जब मैंने कई बार जोर देकर कहा, तब उन्होंने किताब मोड़कर रख दी और एक बार

उबासी लेकर कहा—लकड़ीके लिए कहते हो? क्या हमारे यहाँ इमलीका और कोई पेड़ नहीं है?—सुन लिया आपने? मैंने कहा भी कि है क्यों नहीं। लेकिन जो अपना वाजिब हिस्सा है, वह क्यों छोड़ा जाय और कौन इस तरह अपना हिस्सा छोड़ देता है? रमेश बाबूने किताब और भी कुछ मोड़कर रख दी और कोई पाँच मिनिट तक चुप रहनेके बाद कहा—यह तो ठीक है। लेकिन दो-चार तुच्छ लकड़ियोंके लिए झगड़ा नहीं किया जाता।

भैरवने बहुत ही चकित होकर कहा—अरे, आप यह क्या कह रहे हैं!

गोपाल सरकारने मुस्कराकर जरा सिर हिलाकर कहा—आचार्यजी, मैं जो कुछ कहता हूँ, बिलकुल ठीक कहता हूँ। मैंने उसी दिन सब समझ लिया। अब क्यों व्यर्थ बार बार कहा जाय? इस छोटे घरकी लक्ष्मी तो तारिणी घोपालके साथ ही अन्तर्धान हो गई।

भैरवने कुछ देर तक चुप रहनेके बाद कहा—लेकिन वह ताल मेरे घरके पिछवाड़े है। इसलिए मुझे तो यहाँ आकर खबर करनी ही चाहिए।

गोपालने कहा—तो फिर महाराज, अच्छी बात है। आप ही जाकर उन्हें जरा इसकी खबर कर दीजिए। दिन-रात किताबें पढ़ते रहनेसे और पट्टीदारोंसे इस तरह डरनेसे कहीं जमीन-जायदादकी रक्षा होती है? गोविन्द मुकर्जीकी लड़की तो औरत है। लेकिन वह भी इनकी बातें सुनकर हँसती है। उस दिन उसने गोविन्द गाँगूलीको बुलाकर कुछ हँसी उड़ाते हुए कहा था—आप जाकर रमेश बाबूसे कह दीजिए कि वह अपनी सारी जायदाद हमारे हाथ सौंप दें और हमसे कुछ महीना ले लिया करें। भला, इससे बढ़कर लज्जाकी और कौन-सी बात हो सकती है?

इतना कहकर गोपाल सरकार मारे क्रोध और दुःखके मुँह बिचकाकर फिर अपने काममें लग गये।

घरमें कोई स्त्री तो थी ही नहीं, सब जगह खुला दरबार था। भैरवने अन्दर पहुँचकर देखा कि रमेश सामनेवाले बरामदेमें एक टूटी हुई आराम-कुरसीपर लेटे हैं। रमेशको उनके कर्त्तव्य-पालनके लिए उत्तेजित करते हुए भैरवने सम्पत्तिकी रक्षाके सम्बन्धमें एक साधारण-सी भूमिका बाँधकर ज्यों ही असल बात बतलाई, त्यों ही रमेश बन्दूककी गोली खाकर सोये हुए बाघकी तरह गरजकर बोले—क्या रोज रोज हमारे साथ इसी तरहकी चालबाजी हुआ करेगी?—भजुआ!

उनका यह नितान्त अभावनीय और अप्रत्याशित उग्र भाव देखकर भैरव घबरा गये और वे कुछ भी न समझ सके कि यह चालबाजी किसकी है। भजुआ गोरखपुर जिलेका रहनेवाला रमेशका अत्यन्त बलवान् और विश्वासपात्र नौकर था। लाठी चलानेमें वह रमेशका चेला था। रमेशने लाठी चलाना आप भी सीखा था और अपना हाथ पक्का करनेके लिए उन्होंने यह विद्या भजुआको भी सिखलाई थी। भजुआके आते ही रमेशने उसे कड़ा हुकुम सुनाया कि जाकर सब मछलियाँ छीन लाओ। और अगर कोई रोके तो उसे सिरके बाल पकड़कर घसीटते हुए यहाँ ले आओ और अगर यह न हो सके तो कमसे कम उसके दाँतोंका एक जबड़ा तो जरूर ही तोड़ आओ।

भजुआ तो यही चाहता था। वह अपनी तेल-पिलाई लाठी लेनेके लिए चुपचाप अन्दर चला गया। यह देखकर भैरव मारे डरके काँपने लगे। यह बंगालके तेल-पानीके आदमी थे। चीख-पुकार और बक-झकसे तो वे बिलकुल नहीं डरते थे। लेकिन जब वह बलवान् पछैयाँ नौकर बिना कुछ कहे-सुने सिर्फ एक बार सिर हिलाकर चला गया तब मारे चिन्ताके उनका तालु तक सूख गया। उन्हें याद आ गया कि जो कुत्ता भूकता नहीं है, वह जरूर काटता है। भैरव वास्तवमें शुभचिन्तक थे। इसीलिए वह जतलाने आये थे कि अगर ठीक समय मौकेपर पहुँचकर कुल सकार-बकार और चीख-पुकार की जायगी तो कुछ छोटी-मोटी मछलियाँ घर लाई-जा सकेंगी। भैरव स्वयं भी इसमें सहायता करनेकी सोचकर आये थे। लेकिन कहाँ, कुछ भी तो नहीं हुआ। गाली-गलौजके रास्ते कोई गया ही नहीं। बस मालिकने एक बार ललकार दिया और नौकरने जबान तक नहीं हिलाई, वह सीधा लाठी लाने चला गया। भैरव ठहरे गरीब आदमी। फौजदारीमें फँसनेका उनमें साहस नहीं था और इच्छा भी नहीं थी। थोड़ी देर बाद भजुआ हाथमें एक लंबी और मोटी लाठी लिये हुए निकला। पहले तो उसने वह लाठी माथेसे लगाई और तब दूरसे ही रमेशको नमस्कार करके वह चलने लगा। भैरव अचानक रोने लगे और रमेशके दोनों हाथ पकड़कर बोले—अरे भज्जू, रुक जाओ। जाना मत।—भइया रमेश, माफ करो। मैं गरीब आदमी हूँ। मेरी जान नहीं बचेगी।

रमेशने चिढ़कर अपने हाथ छुड़ा लिये। उनके आश्चर्यकी सीमा न रही। भजुआ लौट पड़ा और अवाक होकर खड़ा हो गया। भैरव रुआसे गलेसे

कहने लगे—भइया, यह बात छिपी नहीं रहेगी। अगर वेणी बाबू मुझसे बिगड़ गये तो फिर एक दिनको भी मैं जीता नहीं बचूँगा। मेरा घर बार तक जला डाला जायगा। तब ब्रह्मा और विष्णु भी आकर मेरी रक्षा न कर सकेंगे।

रमेश सिर नीचा करके और स्तब्ध होकर बैठ गये। शोर सुनकर गोपाल सरकार अपना बही-खाता छोड़कर आ पहुँचे। उन्होंने धीरेसे कहा—हाँ भइयाजी, इनका कहना ठीक है।

लेकिन रमेशने उनकी बातका भी कोई उत्तर न दिया। सिर्फ हाथसे उन्होंने भजुआको अपने कामपर जानेका इशारा कर दिया और आप चुपचाप अन्दर चले गये। उनके हृदयमें भैरव आचार्यका यह हद दरजेका डर और उसके कातर वचन भीषण झंझाकी तरह प्रवाहित होने लगे और इसे केवल अन्तर्यामीने ही देखा।

७

"क्यों रे यतीन, खेल रहा है। स्कूल नहीं जायगा?"

"बहन, हमारे यहाँ आज और कल दो दिनकी छुट्टी है।"

मौसीने यह सुनकर अपना कुत्सित मुख और भी विकृत करके कहा—आग लगे ऐसे स्कूलमें जहाँ महीनेमें पन्द्रह दिन छुट्टी हुआ करती है। फिर भी तुम उसके पीछे इतने रुपये खरच करती हो! मैं होती तो आग लगा देती।

इतना कहकर मौसी अपने कामसे चली गई। जो लोग मौसीको सोलह आने मिथ्यावादिनी कहकर चारों तरफ उसकी बदनामी करते फिरते हैं, वे भूल करते हैं। वह इस तरहकी एकाध सच बात भी कह सकती थी और आवश्यकता पड़नेपर दूसरोंसे कहनेमें भी पीछे हटनेवाली नहीं थी। रमाने अपने छोटे भाईको अपने पास खींच लिया और धीरेसे पूछा—क्यों रे यतीन, आज किस बातकी छुट्टी है?

यतीन्द्र अपनी बहनके साथ सटकर खड़ा हो गया और कहने लगा—हमारे स्कूलके ऊपर नया छप्पर जो छाया जा रहा है! इसके बाद सफेदी भी होगी। न जाने कितनी किताबें आई हैं। चार पाँच कुरसियाँ और टेबुल, एक आलमारी और एक बहुत बड़ी घड़ी आई है। बहन, एक दिन तुम भी चलकर देख आओ न।

रमाने बहुत ही चकित होकर कहा—अरे तू क्या कह रहा है !

यतीन्द्रने कहा—हाँ बहन, मैं बिल्कुल ठीक कहता हूँ। रमेश बाबू आये हैं न। वही यह सब कर रहे हैं।

इसके आगे वह बालक अभी कुछ और भी कहना चाहता था कि सामनेसे मौसीको आते देखकर रमा उसे जल्दीसे लेकर अपनी कोठरीके अन्दर चली गई। उसने अपने छोटे भाईको बहुत प्यारसे अपने पास बैठाकर और उससे प्रश्न कर करके रमेश और स्कूलके बारेमें बहुत-सी बातें जान लीं। यह भी सुना कि वे स्वयं भी नित्य आकर घण्टे दो घण्टे पढ़ा जाते हैं। फिर अचानक पूछ बैठी—क्यों यतीन्द्र, वह तुझे पहचानते हैं ?

बालकने सिर हिलाकर कहा—हाँ।

" तू उन्हें क्या कहकर पुकारता है ? "

अब यतीन्द्र कुछ मुश्किलमें पड़ गया। क्योंकि अभी तक इतनी अधिक घनिष्ठताका सौभाग्य और साहस उसे नहीं हुआ था। उनके स्कूलमें आते ही दोर्दण्डप्रताप हेडमास्टर साहब भी जिस प्रकार चुपचाप अलग खड़े हो जाते थे, उसे देखकर छात्रोंके भय और विस्मयकी कोई सीमा नहीं रह जाती थी। पुकारना तो दूर, कोई हिम्मत करके उनके मुँहकी ओर देख भी न सकता था। लेकिन अपनी बड़ी बहनके सामने यह स्वीकार करना भी तो सहज नहीं था। लडकोंने सुना था कि सब मास्टर उन्हें ' छोटे बाबू ' कहते हैं। इसीलिए उसने कुछ बुद्धि खरच करके कहा—हम सब उन्हे ' छोटे बाबू ' कहते हैं।

लेकिन उसके मुखका भाव देखकर कोई बात रमाके समझनेसे बाकी न रह गई। उसने अपने भाईको और भी अपनी गोदकी तरफ खींचकर हँसते हुए कहा—'छोटे बाबू' क्या होता है रे ! वह तो तेरे भइया होते हैं। जिस तरह वेणी बाबूको तू 'बड़े भइया' कहकर पुकारता है, उसी तरह उन्हें ' छोटे भइया ' कहकर क्यों नहीं बुलाता ?

बालक मारे विस्मय और आनन्दसे चंचल होकर बोला—वे हमारे भइया होते हैं ? सच कहती हो बहन ?

" हाँ, भइया तो होते ही हैं ! "

इतना कहकर रमा कुछ हँसी। लेकिन अब यतीन्द्रको रोक रखना मुश्किल हो गया। वह चाहता था जितनी जल्दी हो सके, मैं यह खबर अपने सभी संगी-साथियों तक पहुँचा दूँ। लेकिन स्कूल तो बन्द है, दो दिन उसे जैसे-तैसे

धैर्य धारण करना ही पड़ेगा। तो भी जो लड़के आस-पास रहते हैं, उन सबको खबर दिये बिना कैसे रहे? उसने फिर निकलनेके लिए छटपटाकर कहा—तो अब जाऊँ बहन?

लेकिन रमाने यह कहकर उसे रोक रखा कि इस समय तू कहाँ जायगा! तब यतीन्द्र जा न सका, तब कुछ देर तक तो अप्रसन्न मुखसे चुप बैठा रहा, फिर पूछा—वह इतने दिनों तक कहाँ थे?

रमाने प्रेमपूर्ण स्वरमें कहा—इतने दिनों तक वे पढ़नेके लिए पर-देस गये थे। बड़े हो जाओगे, तब तुम्हें भी इसी तरह पढ़नेके लिए पर-देस जाकर रहना पड़ेगा। तुम मुझे छोड़कर अकेले पर-देसमें रह सकोगे यतीन?

इतना कहकर रमाने फिर अपने भाईको खींचकर गलेसे लगा लिया। बालक होनेपर भी अपनी बहनके स्वरमें एक प्रकारके परिवर्तनका अनुभव करके वह आश्चर्यपूर्वक उसके मुँहकी ओर देखता रह गया। बात यह थी कि रमा यद्यपि अपने भाईको प्राणोंसे भी बढ़कर चाहती थी, तो भी उसकी बातों और व्यवहारमें इस प्रकारका आवेग-उच्छ्वास पहले कभी प्रकट नहीं होता था।

यतीन्द्रने पूछा—क्यों बहन, छोटे भइयाकी सारी पढ़ाई पूरी हो गई है?

रमाने भी उसी प्रकारके स्नेहपूर्ण स्वरमें उत्तर दिया—हाँ, वह अपनी सारी पढ़ाई खतम करके आये हैं।

यतीन्द्रने फिर पूछा—तुमने कैसे जाना?

उत्तरमें रमाने सिर्फ एक ठण्ढी साँस लेकर सिर हिला दिया। वास्तवमें इस सम्बन्धमें वह अथवा गाँवका और कोई आदमी कुछ भी नहीं जानता था। यह बात भी नहीं थी कि उसका अनुमान बिलकुल ठीक ही हो। लेकिन फिर भी किसी प्रकार उसे यह निश्चय मालूम हो गया था कि जो आदमी दूसरोंके लड़कोंको पढ़ाने-लिखानेके लिए इतनी छोटी अवस्थामें ही इतना अधिक सचेतन हो गया है, वह स्वयं किसी तरह मूर्ख नहीं हो सकता।

लेकिन यतीन्द्रने इस बारेमें कोई जिरह नहीं की। इसी बीच उसके मनमें एक और प्रश्न उठा और उसने चटसे पूछा—क्यों बहन, छोटे भइया हमारे यहाँ क्यों नहीं आते? बड़े भइया तो रोज आते हैं।

यह प्रश्न एक आकस्मिक तीव्र व्यथाके समान रमाके सारे शरीरमें विद्युत्के वेगसे प्रवाहित हो गया। फिर भी उसने हँसकर कहा—तुम उन्हें अपने घर बुलाकर नहीं ला सकते?

"तो अभी चला जाऊँ बहन ?" इतना कहकर यतीन तुरन्त उठकर खड़ा हो गया।

"अरे, तू भी निरा पगला है।" कहकर रमाने अपने भयसे व्याकुल दोनों हाथ बढ़ाकर उसे जोरसे पकड़ लिया। उसने यह कहते हुए उसे प्राणपणसे अपने कलेजेसे चिपटा लिया—खबरदार यतीन्द्र, कभी ऐसा काम मत करना !

यतीन्द्र यद्यपि अभी बालक था, फिर भी जब उसने स्पष्ट अनुभव किया कि बहनका कलेजा धड़क रहा है, तब वह बहुत आश्चर्यसे उसके मुखकी ओर देखकर चुप हो गया। एक तो उसने पहले कभी बहनको ऐसा करते देखा नहीं था; तिसपर यह जानकर कि छोटे बाबू हमारे छोटे भइया हैं जब उसके मनकी गति पूर्ण रूपसे किसी और ही तरफ हो गई थी तब उसकी समझमें यह बात किसी तरह आई ही नहीं कि बहन क्यों उन्हे इतना डरती है। इसी समय मौसीकी तीक्ष्ण पुकार कानोंमे पड़ते ही यतीन्द्रको छोडकर रमा जल्दीसे उठकर खडी हो गई। थोड़ी ही देरमें मौसी आप आकर दरवाजेपर खड़ी हो गई और कहने लगी—मैं तो समझती थी कि रमा घाटपर नहाने गई है। आज एकादशी है, इसलिए क्या इतना दिन चढ़ आनेपर भी माथेमें तेल जल नहीं पड़ेगा ? मुँह सूखकर बिलकुल काला हो गया है।

रमाने कुछ जोर लगाकर हँसते हुए कहा—मौसी, तुम जाओ। मैं अभी जाती हूँ।

"और कब जाओगी ? बाहर आकर तो देखो, मछलीका हिस्सा बाँट करनेके लिए वेणी आया है।"

मछलीका नाम सुनते ही यतीन्द्र वहाँसे भागा। रमाने आँचलसे इस तरह अपना मुँह पोंछ लिया कि मौसीको कुछ भी पता न चला और तब वह भी पीछे पीछे चलकर बाहर आ पहुँची। आँगनमें खूब कोलाहल मचा हुआ था। मछलियाँ कुछ कम नहीं पकड़ी गई थीं। एक बडा दौरा भरा हुआ था। उसका हिस्सा-बाँट करनेके लिए वेणी बाबू खुद ही आकर हाजिर हो गये थे। महल्लेके लडकी लडके साथ साथ आकर चारों तरफसे घेरकर हल्ला मचा रहे थे।

इतनेमें किसीके खाँसनेका शब्द सुनाई पडा और उसके बाद ही धर्मदास लाठी टेकते हुए और यह कहते हुए आ पहुँचे—वेणी, क्या आज मछलियाँ पकड़ी गई हैं ?

वेणीने अप्रसन्नतासे कहा—ज्यादा कहाँ पकड़ी गई! और फिर धीवरको पुकारकर कहा—अब देर क्यों कर रहा है रे, जल्दीसे दो हिस्से कर डाल।

धीवर हिस्से लगाने लगा। इतनेमें गोविन्द गाँगूली यह कहते हुए वहाँ आ पहुँचे—क्या हो रहा है रमा, इधर कई दिनोंसे आ नहीं सका। सोचा कि चलकर जरा बेटीकी खबर लेता जाऊँ।

रमाने मुस्कराकर कर कहा—आइए।

गाँगूली यह कहते हुए आगे बढ़े, 'अरे आज इतनी भीड़ क्यों लगी है?' और फिर अचानक मानों आश्चर्य प्रकट करते हुए बोले—ओह, यह बात है! मछलियाँ तो कुछ कम नहीं पकड़ी गई। जान पडता है बड़े तालमें जाल डाला गया था?

उनके इन सब प्रश्नोंका उत्तर देना रमीने व्यर्थ समझा और वे मछलियोंके बटवारेमें लगे रहे। थोड़ी देरमें वह निबट गया। वेणीने अपने हिस्सेकी प्रायः सभी मछलियाँ एक दौरीमें रखवाकर अपने नौकरके सिरपर उठवा दीं और धीवरको आँखसे कुछ इशारा करके वहाँसे चलनेका उपक्रम किया। लेकिन रमाको तो उतनी ज्यादा मछलियोंकी जरूरत थी नहीं, इसलिए उसके हिस्सेमेंसे सभी उपस्थित लोगोंने अपनी अपनी योग्यताके अनुसार कुछ कुछ मछलियाँ ले लीं और वे भी घर चलनेका विचार करने लगे। इतनेमें सब लोगोंने बडे आश्चर्यसे देखा कि रमेश घोषालका वही पछैयाँ नौकर अपने सिरके बराबर ऊँची लाठी हाथमें लिये आँगनके बीचमें आकर खड़ा हो गया है। इस आदमीका चेहरा ही ऐसा भीषण था कि सबसे पहले उसीपर निगाह जा पडती; और एक बार पडनेपर सदा याद रहती। गाँवके छोटे-बड़े सभी उसे पहचान गये थे। यहाँ तक कि उसके सम्बन्धमें धीरे-धीरे अनेक प्रकारकी अद्भुत बातें फैलानी शुरू कर दी थीं। इतने आदमियोंके बीचमें उसने रमाको ही कैसे मालकिन समझकर पहचान लिया, यह तो वही जाने, पर उसने दूरसे ही 'माँजी' कहकर एक लम्बा सलाम किया और पास आकर खड़ा हो गया। उसका चेहरा जैसा भी हो, कण्ठ-स्वर सचमुच ही भयानक, अत्यन्त भारी और फटा हुआ था। उसने बँगला मिली हुई हिन्दीमें संक्षेपमें बतलाया कि मैं रमेशबाबूका नौकर हूँ और मछलियोंके तीन हिस्सोंमेंसे एक हिस्सा लेने आया हूँ। चाहे विस्मयके प्रभावके कारण हो और चाहे उसकी संगत प्रार्थनाके विरुद्ध कोई उत्तर समझमें न आनेके कारण ही हो, रमा सहसा

उसकी बातका कोई उत्तर न दे सकी। भजुआने आश्चर्यसे गरदन घुमाकर वेणी बाबूके नौकरसे गंभीर गलेसे कहा—अरे, अभी जाना मत।

नौकर मारे डरके चार कदम पीछे लौटकर खड़ा हो गया। आध मिनट तक किसीके मुँहसे एक शब्द भी न निकला। उस समय वेणी बाबूने कुछ साहस किया। वह जहाँ खड़े थे, वहींसे बोले—कैसा हिस्सा?

भजुआने तुरन्त ही उन्हें भी सलाम करके आदरपूर्वक कहा—बाबूजी, मैंने आपसे नहीं पूछा।

मौसीने बहुत दूर दालानमेंसे कहा—अरे बापरे! तू क्या मारेगा?

भजुआ पहले तो थोड़ी देर तक मौसीकी तरफ देखता रहा। इसके बाद उसके फटे गलेकी हँसीसे सारा मकान गूँज गया। थोड़ी देर बाद हँसी रोककर और कुछ लज्जित होकर उसने फिर रमाकी तरफ देखकर कहा—माँजी!

भजुआकी बातों और व्यवहारमें अतिशय आदरके अन्दर भी मानों अवज्ञा छिपी हुई थी। यही कल्पना करके रमा मन ही मन चिढ़ गई थी। पूछा—तुम्हारे बाबू क्या चाहते हैं?

रमाकी नाराजगी देखकर भजुआ मानो कुछ कुण्ठित हो गया। इसलिए उसने जहाँ तक हो सका, अपने कर्कश स्वरको कोमल करके अपनी प्रार्थना दोहरा दी। लेकिन अब क्या होता था! मछलियोंका हिस्सा हो चुका था और वे ठिकाने भी लग चुकी थीं। इतने आदमियोंके सामने वह हीन भी नहीं हो सकती थी। इस लिए उसने कड़े कण्ठसे कहा—तुम्हारे बाबूका इसमें कोई हिस्सा नहीं है। जाकर उनसे कह दो कि उन्हें जो कुछ करना हो वह कर लें।

"बहुत अच्छा माँजी।" कहकर भजुआने फिर एक लम्बा सलाम किया, वेणीके नौकरसे हाथके इशारेसे चले जानेके लिए कह दिया; और बिना कुछ कहे-सुने वह आप भी वहाँसे चलने लगा। जिस समय उसके इस व्यवहारसे घरके सभी लोग अत्यन्त चकित हो रहे थे, उस समय वह अचानक फिर लौट पड़ा और रमाकी ओर देखकर उसने अपनी हिन्दी और बँगला मिली हुई बोलीमें अपने कठोर कंण्ठ-स्वरके लिए क्षमा माँगी और कहा, "माँजी, लोगोंकी बातें सुनकर पहले बाबूजीने मुझे ताल परसे मछलियाँ छीन लानेका हुक्म दिया था। हमारे बाबूजी माँस-मछली छूते भी नहीं और मैं भी यह सब कुछ नहीं खाता। लेकिन—" इतना कहकर उसने अपने प्रशस्त वक्षःस्थलपर

हाथ रखकर कहा, "बाबूजीके हुक्मसे आज तालके किनारे ही शायद यह जान चली जाती। लेकिन रामजीने बड़ी खैरियत कर दी कि बाबूजीका गुस्सा ठण्डा हो गया। उन्होंने मुझे बुलाकर कहा,—भजुआ, जा, माँजीसे पूछ आ कि इस तालमें हमारा भी हिस्सा है या नहीं।"

इसके बाद उसने बहुत ही आदरपूर्वक लाठीसहित अपने दोनों हाथ उठाकर मस्तकसे लगाये और रमाको नमस्कार करते हुए कहा—बाबूजीने कह दिया कि भजुआ, और कोई चाहे जो कहे, पर मैं निश्चयसे जानता हूँ कि माँजीकी जबानसे कभी झूठ बात नहीं निकलेगी।—वह कभी पराई चीज नहीं छूएँगीं।

इतना कहकर वह हार्दिक सम्मानपूर्वक बार बार नमस्कार करता हुआ चल दिया।

उसके जाते ही वेणीने उछलकर औरतोंकी तरह महीन आवाजसे कहा—बस, इसी तरह वह अपनी सम्पत्तिकी रक्षा करेगा! मैं तुम लोगोंके सामने प्रतिज्ञा करता हूँ कि आजसे तालाबका एक घोंघा भी उसके हाथ न लगने दूँगा। समझ गई न रमा!

इतना कहकर वेणी मारे प्रसन्नताके फूलकर ही ही ही करके हँसने लगे। लेकिन रमाके कानोंमें उनके एक शब्दने भी प्रवेश न किया। बार बार उसके कानोंमें भजुआके यही शब्द लाखों तालियोंकी एकत्र तडतड़ाहटके समान गूँज रहे थे कि माँजीकी जबानसे कभी झूठ बात न निकलेगी और उसके दिमागको परेशान कर रहे थे। उसका गोरा गोरा मुख क्षण-भरके लिए लाल होकर उसके बाद तुरन्त ही इतना सफेद हो गया कि मालूम होता था कि उसमें कहीं एक बूँद भी रक्त नहीं है। उस समय उसे केवल इतना ही ज्ञान रह गया था कि मेरे इस चेहरेपर किसीकी आँख न पड़े। इसी लिए उसने अपने सिरपरका आँचल कुछ और आगे खींच लिया और जल्दीसे अदृश्य हो गई।

८

"ताईजी।"

"कौन? रमेश! आओ बेटा, अन्दर चले आओ।"

विश्वेश्वरीने जल्दीसे एक चटाई बिछा दी। घरमें पैर रखते ही रमेश चौंक पड़े, क्योंकि, ताईजीके पास जो स्त्री बैठी हुई थी, उसका मुँह यद्यपि उन्हें

दिखाई नहीं दिया, तो भी उन्होंने समझ लिया कि यह रमा है। वे जल उठे कि ये लोग मौसीको बीचमें डालकर अपमान करनेमें भी कमी नहीं करतीं और बिल्कुल निर्लज्जाके समान एकान्तमें पास आकर भी बैठती हैं। और रमेशके अचानक आ जानेसे रमा भी कुछ मामूली संकटमें नहीं पड़ी। इसका कारण केवल यही नहीं था कि वह गाँवकी थी। पर रमेशके साथ उसका सम्बन्ध ही कुछ इस प्रकारका था कि नितान्त अपरिचिताकी तरह घूँघट करनेमें भी उसे लज्जा आती थी और बिना घूँघटके भी वह चैन नहीं पाती थी। इसके सिवा उस दिन मछलियोंके बारेमें वह झगड़ा हो गया था। इसीलिए सब बातोंका बचाव करते हुए, जहाँ तक हो सकता था, वह कुछ घूमकर बैठी थी। रमेशने फिर उसकी तरफ नहीं देखा और कोठरीमें और भी कोई है इसकी जरा भी परवा न करके आरामसे चटाईपर बैठकर कहा—ताईजी!

ताईजीने कहा—क्यों रमेश, अचानक इस दो-पहरके समय कैसे आ गये?

रमेशने कहा—अगर दो-पहरको न आऊँ तो फिर और किसी समय तुम्हारे पास बैठनेका मौका ही नहीं मिलता। तुम्हें काम भी तो कम नहीं रहते!

ताईजी इस बातका कोई प्रतिवाद न करके जरा हँसकर रह गईं। रमेशने मुस्कराते हुए कहा—बहुत दिन हुए, जब मैं बहुत छोटा था, तब एक बार आकर तुमसे विदा लेकर गया था। अब आज फिर उसी तरह विदा होने आया हूँ। और ताईजी, यह शायद मेरी आखिरी विदाई होगी।

यद्यपि रमेशके मुँहपर कुछ मुस्कराहट थी, फिर भी उनके स्वरसे उनके भाराक्रान्त हृदयका एक ऐसा गम्भीर अवसाद प्रकट हुआ कि दोनों ही सुननेवालियाँ विस्मय और व्यथासे चौंक पड़ीं।

"तुम जुग जुग जियो बेटा। यह कैसी बात कह रहे हो!"

कहते कहते विश्वेश्वरीकी दोनों आँखें छलछला आईं। रमेश केवल मुस्कराकर रह गये। विश्वेश्वरीने स्नेहपूर्ण स्वरसे पूछा—क्यों बेटा, क्या यहाँ शरीर ठीक नहीं रहता?

रमेशने अपने हृष्टपुष्ट और अत्यन्त बलवान् शरीरकी ओर एक-दो बार देखकर कहा—ताईजी, यह पश्चिमका दाल-रोटीका पला हुआ शरीर है। भला यह क्या इतनी जल्दी खराब हो सकता है? नहीं, मेरा शरीर तो खूब अच्छा है। लेकिन अब यहाँ मुझसे क्षण-भर भी नहीं रहा जाता। रह रहकर मेरा दम-सा निकलने लगता है।

जब विश्वेश्वरीको यह मालूम हो गया कि शरीर अच्छा रहता है, तब उसने निश्चिन्त होकर हँसते हुए पूछा—यह तो तुम्हारा जन्म-स्थान है। फिर यहाँ तुमसे क्यों नहीं रहा जाता ?

रमेशने सिर हिलाकर कहा—यह मैं नहीं कहना चाहता। मैं समझता हूँ कि तुम अवश्य ही सब जानती हो।

विश्वेश्वरीने थोडी देर तक चुप रहनेके बाद गम्भीर होकर कहा—सब नहीं, फिर भी बहुत कुछ जानती हूँ। लेकिन रमेश, इसीलिए तो कहती हूँ कि और कहीं जानेसे तुम्हारा काम नहीं चलेगा।

रमेशने कहा—क्यों ताईजी, क्यो न चलेगा ? कोई भी तो यहाँ मुझे चाहता नहीं।

ताईजीने कहा—कोई चाहता नहीं, इसीलिए तो मैं तुम्हे कहीं भागने नहीं दूँगी। अभी जो तुम अपने दाल रोटीसे पले इस शरीरकी बडाई कर रहे थे, सो क्या वह यहाँसे भाग जानेके लिए है ?

रमेश चुप रहे। आज क्यो उनका सारा हृदय इस गाँवके प्रति विद्रोहकी आगसे जल रहा था, इसका एक विशेष कारण था। गाँवसे जो रास्ता सीधा स्टेशनको जाता था, वह आठ-दस बरस पहले एक जगह बरसाती पानीके बहावके कारण टूट गया था। तबसे वह गढा क्रम क्रमसे और भी बडा और गहरा होता गया। वहाँ अक्सर पानी जमा हो जाता है और उसे पार करनेमें सभी लोगोंको दुर्भावनामें पडना पडता है। और दिनोंमें तो किसी तरह सँभाल सँभालके पैर रखते हुए, बहुत सावधानीसे लोग पार भी हो जाते हैं लेकिन बरसातमें तो कष्टकी सीमा नहीं रहती। किसी किसी साल दो-चार बाँस डालकर और किसी किसी साल ताडका टूटा हुआ डोंगा औंधा डालकर उसकी सहायतासे जैसे तैसे गिरते पडते और हाथ पैर तोडते हुए लोग उस पार पहुँचा करते हैं। लेकिन इतना अधिक कष्ट होनेपर भी आज तक गाँववालोंने उसे ठीक करनेका कोई प्रयत्न नहीं किया। मरम्मत करनेमें कुछ रुपया पैसा खर्च होता। यह रुपया-पैसा रमेशने अपने पाससे न देकर चंदा करनेकी चेष्टा की और इसके लिए आठ-दस दिन तक परिश्रम भी किया, लेकिन, आठ-दस पैसे भी वे किसीसे वसूल नहीं कर सके। सिर्फ यही नहीं, आज सवेरे जब वह टहलकर लौट रहे थे, तब रास्तेमें एक जगह सुनारकी दूकानके अन्दर कुछ आदमियोंको उन्होंने इसी बारेमें बातें करते देखा। बाहर खड़े होकर

सुननेपर उन्हें मालूम हुआ कि एक आदमी किसी दूसरेसे हँसकर कह रहा है—तुम लोग एक पैसा भी मत देना। देखते नहीं हो कि उन्हे आप ही मरम्मतकी सबसे ज्यादा गरज है। अगर तुम लोग नहीं दोगे तो देख लेना, वह आप ही अपने पाससे मरम्मत करा देंगे। उन्हें जूता मचमचाते हुए चलना है न! और फिर जब इतने दिनोंतक वह यहाँ नहीं थे, तब क्या हम लोगोंका स्टेशन आना-जाना रुका हुआ था?

इसपर किसी और आदमीने कहा—अरे, जरा सब्र करो भाई। चैटर्जी कह रहे थे कि रमेशकी पीठपर जरा-सा हाथ फेरकर उनसे शीतलाजीका मन्दिर ठीक करा लिया जायगा। जहाँ ज़रा-सी उनकी खुशामद की और उन्हें बाबू बाबू कहा, कि बस सब काम बन गया।

बस यही दोनों बातें आज सवेरेसे ही रमेशको आगकी तरह जला रही थीं। ताईजीने भी ठीक उसी स्थानपर आघात किया। उन्होंने पूछा—तुम जो वह सड़क ठीक कराना चाहते थे, उसका क्या हुआ?

रमेशने चिढ़कर कहा—अब वह सड़क ठीक नहीं होगी। कोई एक पैसा भी चन्दा न देगा।

विश्वेश्वरीने हँसकर कहा—नहीं देगा, कह देनेसे कैसे काम चलेगा? तुम्हें तो अपने बाबूजीसे बहुतसे रुपये मिले हैं बेटा। ये थोड़ेसे रुपये तो तुम खुद ही दे सकते हो।

रमेशने एकदमसे आग होकर कहा—मैं क्यों देने लगा? मुझे तो इसी बातका बहुत अधिक दुःख हो रहा है कि मैंने बहुत-से रुपये बिना समझे बूझे इन लोगोंके स्कूलके लिए क्यों खरच कर डाले! इस गाँवके किसी आदमीके लिए कुछ भी नहीं करना चाहिए।

फिर एक बार रमाकी तरफ तिरछी नजरसे देखकर कहा—इन लोगोंको अगर कुछ दान दिया जाय तो ये देनेवालेको बेवकूफ समझते हैं। अगर कोई इनकी भलाई करे तो ये लोग समझते हैं कि वह अपनी गरजसे करता है। इन्हें तो क्षमा करना भी महापाप है। सोचते हैं कि डरकर पीछे हट गया।

ताईजी खूब हँस पड़ीं, लेकिन रमाकी आँखें और मुख एकदमसे लाल हो गया। रमेशने नाराज होकर पूछा—क्यों ताईजी, तुम हँसी क्यों?

ताईजीने कहा, "बेटा, हँसूँ न तो और क्या करूँ! (फिर एक ठंडी साँस लेकर) लेकिन मैं तो कहूँगी कि यहाँ ही तुम्हारे रहनेकी सबसे ज्यादा जरूरत

है। रमेश, यदि तुम नाराज होकर अपनी जन्म-भूमि छोड़कर चले जाना चाहते हो, तो मैं तुम्हींसे पूछती हूँ कि क्या ये लोग इस योग्य हैं कि तुम इनपर नाराज होओ?" फिर कुछ ठहरकर वे मानों आप ही आप कहने लगीं, "रमेश, अगर तुम जानते होते कि ये लोग कितने गरीब और कितने दुर्बल हैं, तो इनके ऊपर क्रोध करनेमें तुम्हें आप ही लज्जा आती। भइया, जब भगवानने दया करके तुम्हें यहाँ भेज दिया है, तब तुम इन्हीं लोगोंके बीचमें रहो।"

रमेशने कहा—लेकिन ताईजी, ये लोग मुझे चाहते जो नहीं हैं।

ताईजीने कहा—तब इतनेसे ही क्या तुम्हारी समझमें नहीं आता कि ये लोग तुम्हारे क्रोध करने और रूठनेके कितने अयोग्य हैं? और फिर सिर्फ यहीं क्यों, तुम चाहे जिस गाँवमें घूम आओ, सब जगह एक-सा ही हाल देखोगे। इसके बाद उन्होंने सहसा रमाकी ओर देखकर कहा—और क्यों बेटी, तुम तबसे ही इस तरह सिर झुकाये क्यों बैठी हो?—क्यों रमेश, तुम दोनों भाई-बहनोंमें क्या बातचीत नहीं होती?—बेटी, ऐसा मत करो। इसके बापके साथ तुम लोगोंका जो लड़ाई-झगड़ा था, वह तो उनकी मृत्युके साथ ही खतम हो गया। उसे लेकर अब तुम लोग आपसमें मन-मुटाव रखोगे तो काम नहीं चलेगा।

रमाने सिर नीचा किये हुए धीरेसे कहा—ताईजी, मैं तो कुछ भी मन-मुटाव नहीं रखना चाहती। रमेश भइया—

अकस्मात् रमाका कोमल स्वर रमेशके गम्भीर और उत्तप्त स्वरसे दब गया। वह उठकर खड़े हो गये और बोले—ताईजी, तुम इस बीचमें मत पड़ो। उस दिन इनकी मौसीके हाथोंसे बड़ी मुश्किलोंसे जान बची थी। आज कहीं ये फिर जाकर उन्हें भेज दें तो वह आकर तुम्हें चबा खाये बिना घर न लौटेगी।

इसके बाद बिना किसी वाद-प्रतिवादकी प्रतीक्षा किये वे जल्दीसे बाहर निकल गये।

विश्वेश्वरीने पुकारकर कहा—जाओ मत रमेश, जरा बात सुने जाओ।

रमेशने दरवाजेके बाहरसे ही कहा—नहीं ताईजी, जो लोग मारे अहंकारके तुम्हें भी पैरों तले रौंदते जाते हैं, उनकी तरफसे तुम कुछ भी मत कहो।

इतना कहकर विश्वेश्वरीके दोबारा अनुरोध करनेके पहले ही वह वहाँसे चल दिये। रमा विह्वलकी तरह कुछ देर तक विश्वेश्वरीके मुखकी ओर देखती रही और फिर रो पड़ी। उसने कहा—ताईजी, आखिर यह कलंक मुझपर क्यों मढ़ा जा रहा है? क्या मैं मौसीको सिखला देती हूँ या उनकी बातोंके लिए मैं जिम्मेदार हूँ?

ताईजीने उसका हाथ पकड़कर अपने हाथमें ले लिया और स्नेहपूर्वक अपने पास खींचकर कहा—यह तो ठीक है कि सिखलाती नहीं हो। लेकिन बेटी, मौसीकी बातोंके लिए तुम्हें कुछ जिम्मेदार तो होना ही होगा।

रमाने दूसरे हाथसे अपनी आँखें पोंछते पोंछते रुद्ध अभिमानसे तेजीके साथ अस्वीकृत करते हुए कहा—मैं जिम्मेदार क्यों होने लगी? कभी नहीं। ताईजी, मैं तो इस बारेमें कुछ भी नहीं जानती।' तब फिर वे क्यों मुझपर झूठा दोष लगाकर अपमान कर गये?

विश्वेश्वरीने इसे लेकर और तर्क वितर्क नहीं किया और धीरतासे कहा—बेटी, सब लोग अन्दरका हाल तो जान नहीं सकते। लेकिन यह बात मैं तुम्हें निश्चयपूर्वक बतला देती हूँ कि तुम्हारा अपमान करनेकी इच्छा उसे कभी नहीं हो सकती। तुम तो जानती नहीं बेटी, पर गोपाल सरकारके मुँहसे मुझे पता चला है कि वह तुमपर कितनी अधिक श्रद्धा और कितना अधिक विश्वास रखता है। उस दिन इमलीका पेड़ कटवाकर जब तुम दोनोंने आपसमें बाँट लिया, तब उसने किसीके भी कहनेपर ध्यान नहीं दिया कि उसमें उसका भी हिस्सा था। सब लोगोंके सामने उसने हँसकर कह दिया था कि चिन्ताकी कोई बात नहीं है। जब रमा मौजूद है, तब मेरा वाजिब हिस्सा मुझे जरूर मिल जायगा। वह कभी पराई चीज हजम नहीं करेगी। बेटी, मैं बहुत अच्छी तरह जानती हूँ कि इतने लड़ाई-झगड़ेके बाद भी तुमपर उसका पहलेकी ही तरह विश्वास बना हुआ था। अगर उस दिन तालाबकी मछलियों—

इतना कहकर विश्वेश्वरी अचानक रुक गईं और उन्होंने थोड़ी देर तक टक लगाकर रमाके सूखे हुए मुखकी ओर देखकर कहा—बेटी रमा, आज मैं तुमसे एक बात कहती हूँ। जमीन-जायदादकी रक्षाका मूल्य चाहे जितना अधिक क्यों न हो लेकिन इस रमेशके प्राणोंका मूल्य उससे कहीं अधिक है। इसलिए किसीकी बातोंमें आकर, किसी भी वस्तुके लोभमें पड़कर चारों तरफसे आघात कर करके बेटी, उसे नष्ट न कर डालना। मैं तुमसे निश्चित रूपसे

कहती हूँ कि इससे देशकी जो हानि होगी, उसकी फिर और किसी तरहसे पूर्ति न हो सकेगी।

रमा चुपचाप बैठी रही। उसने एक भी बातका प्रतिवाद न किया। विश्वेश्वरी भी फिर कुछ न बोलीं। थोड़ी देर बाद रमाने अस्पष्ट कोमल स्वरसे कहा—ताईजी, बहुत देर हो गई। अब मैं घर जाती हूँ।

इतना कहकर और ताईजीको प्रणाम करके वह वहाँसे चली गई।

९

ताईजीके यहाँसे रमेश चाहे कितने ही नाराज होकर क्यों न चले आये हों, परन्तु घर पहुँचते पहुँचते उनका सारा उत्ताप मानों जल हो गया। वह रह रहकर अपने मनमे सोचने लगे—यह सीधी-सी बात न समझनेके कारण मैं कितना कष्ट पा रहा था! वास्तवमें क्रोध किसके ऊपर करूँ? जो इतने अधिक संकीर्ण रूपसे स्वार्थपर हैं कि आँखें खोलकर यह भी नहीं देख सकते कि हमारा वास्तविक मंगल किस बातमें है, शिक्षाके अभावके कारण इतने अन्धे हैं कि अपने पड़ोसियोंके बलका नाश करनेको ही अपने बल संचयका सबसे श्रेष्ठ उपाय समझते हैं, भलाई करते देखकर भी सशयसे कंटकित हो जाते हैं, उन लोगोंके ऊपर क्रोध करने या चिढ़नेसे बढ़कर भ्रम भला और क्या हो सकता है। उन्हें याद आया कि देहातोंसे बहुत दूर, शहरमें रहकर, किताबें पढ़कर, लोगोंसे सुनकर और कल्पनाएँ करके मैंने न जाने कितनी बार सोचा है कि हमारी बंगाली जातिके पास चाहे और कुछ भी न हो, पर एकान्तमें बसे हुए गाँवोंकी वह शान्ति और स्वच्छन्दता तो है जो बहुजनाकीर्ण शहरोंमे नहीं है। बहुत थोड़ेमे सन्तुष्ट रहनेवाले ये गाँवोंके निवासी सहानुभूतिसे पिघल जाते हैं; एक आदमीके ऊपर दुःख पड़ता है तो दूसरा आदमी अपनी छाती लगा देता है; और अगर एक आदमी कुछ सुखी होता है तो दूसरा उसके यहाँ बिना बुलाये ही पहुँचकर आनन्द मनाने लगता है। सिर्फ वहीं और उन्हीं सब हृदयोंमें बंगालियोंका वास्तविक ऐश्वर्य अक्षय्य हो रहा है। लेकिन हायरे, वह मेरी कितनी बड़ी भ्रान्ति थी! आपसका इतना अधिक विरोध और दूसरोंके प्रति ईर्ष्याका इतना अधिक भाव तो मुझे शहरोंमें भी नहीं दिखाई दिया। आज उस बातका स्मरण करके मानों उनके शरीरपर असंख्य सरीसृप चलते-फिरतेसे जान पड़ने लगे। नगरके सजीव चंचल मार्गपर जब कभी

पापका कोई चिह्न उन्हें दिखाई पड़ गया है, तभी उन्होंने सोचा है कि अगर मैं किसी तरह अपनी जन्मभूमिवाले छोटेसे गाँवमें पहुँच जाऊँ तो ये सब दृश्य देखनेसे सदाके लिए बच जाऊँ। वह समझते थे कि वहाँपर संसारमें जो सबसे बडा है वह धर्म है, और सामाजिक चरित्र भी आज वहीं अक्षुण्ण होकर विराज रहा है। परन्तु हे भगवान, कहाँ है वह चरित्र? और कहाँ है वह जीता-जागता धर्म हमारे इन सारे प्राचीन एकान्त ग्रामोंमे? और यदि तुमने धर्मके प्राण ही खींच लिये हैं, तो फिर उसका मृत शरीर क्यों इस प्रकार डाल रक्खा है? धर्मके इसी विवर्ण और विकृत शवको इस अभागे ग्राम्य समाजने वास्तविक धर्म समझकर खूब कसकर पकड़ रखा है और उसीकी विषाक्त और दुर्गन्धमय फिसलनपर दिन रात फिसलता हुआ यह अधःपतनकी ओर बढ़ता जा रहा है। और सबसे बढ़कर धर्मपर आघात करनेवाले परिहासकी बात यह है कि शहरवालोंके प्रति ये लोग यह समझकर हदसे ज्यादा अवज्ञा और अश्रद्धाका भाव रखते हैं कि उनमें जाति-धर्म नहीं रह गया है!

रमेशने अपने घरके अन्दर पैर रखते ही देखा कि आँगनमें एक तरफ जो एक प्रौढ़ा स्त्री ग्यारह-बारह बरसके एक लड़केको लिये हुए सिकुड़ी हुई बैठी थी, वह उठकर खड़ी हो गई। बिना कोई बात जाने सिर्फ उस लड़केका मुँह देखकर ही रमेशको अन्दरसे मानों रुलाई आने लगी। गोपाल सरकार चण्डी-मण्डपवाले बरामदेमे बैठे हुए कुछ लिख-पढ़ रहे थे। उन्होंने आकर कहा—यह दक्षिण पाडे (मुहल्ला) के द्वारिका पण्डितका लड़का है। आपके पास कुछ भिक्षा माँगनेके लिए आया है।

भिक्षाका नाम सुनते ही रमेशने जलकर कहा—क्या मैं सिर्फ भिक्षा देनेके लिए ही घर आया हूँ? क्या गाँवमें और लोग नहीं हैं?

गोपाल सरकारने कुछ अप्रतिभ होकर कहा—हाँ बाबूजी, यह बात तो ठीक है। पर बड़े बाबूके समय यहाँसे कोई ख़ाली हाथ नहीं लौटता था। इसीलिए लोग लाचारीकी हालतमें यहाँ दौड़े आते हैं। फिर लड़केकी तरफ देखकर उस प्रौढ़ा स्त्रीसे कहा—कामिनीकी माँ,- इन लोगोंका दोष भी तो कुछ कम नहीं है। जब वह जीता था, तब तो इन लोगोंने उसका प्रायश्चित्त नहीं कराया और अब जब मुरदा नहीं उठ रहा है, तब रुपयेके लिए दौड़ते फिरते हैं। क्या इसके थाली-लोटा भी नहीं है?

कामिनीकी माँ जातिकी सद्गोप थी और उस लड़केकी पड़ोसिन। उसने सिर हिलाकर कहा—भइया, विश्वास न हो तो आप चलकर देख लें। अगर घरमें कुछ भी होता तो क्या मैं इसके मरे हुए बापको घरमें छोड़कर इसे भीख मँगानेके लिए लाती? तुमने आँखोंसे नहीं देखा है। मेरे पास जो कुछ था, इन छः महीनोंमें इन्हीं लोगोंके लिए खर्च कर डाला है। सोचती थी कि कहीं पड़ोसमें ब्राह्मणके बच्चे अन्न बिना भूखों न मर जायँ!

अब मानों रमेश इस सम्बन्धकी बहुत-सी बातोंका अनुमान कर सके। गोपाल सरकारने समझाते हुए कहा—इस लड़केके बाप द्वारिका चक्रवर्ती छह महीनेसे दमेकी बीमारीके मारे खाटपर पड़े थे। आज सवेरे वह मर गये। उनका प्रायश्चित्त * नहीं हुआ था, इसलिए कोई उनकी लाश नहीं छूना चाहता। इस समय वह करना बहुत आवश्यक है। कामिनीकी माँ छह महीनेसे बराबर इस गरीब ब्राह्मण-परिवारकी सहायता करती आ रही है और इसीमें वह अपना सर्वस्व लगा चुकी है। अब उसके पास भी कुछ बच नहीं रहा है। इसीलिए वह इस लड़केको लेकर आपके पास आई है।

रमेशने कुछ देर तक चुप रहकर पूछा—अब तो दो बज रहे हैं। अगर प्रायश्चित्त न हुआ तो क्या मुरदा पड़ा ही रहेगा?

सरकारने हँसकर कहा—बाबूजी, और उपाय ही क्या है! शास्त्रके विरुद्ध तो काम हो ही नहीं सकता। और फिर इसमें गाँवके लोगोंको ही क्या दोष दिया जा सकता है! जो हो, मुरदा पड़ा नहीं रहेगा; जिस तरहसे हो, इन लोगोंको काम करना ही पड़ेगा। इसीलिए तो भीख...कामिनीकी माँ, और कहीं भी गई थीं?

लड़केने मुट्ठी खोलकर एक चवन्नी और चार पैसे दिखला दिये। कामिनीकी माँने कहा—चवन्नी तो मुकर्जीके यहाँसे मिली है और चार पैसे हालदारने दिये हैं। लेकिन नौ चवन्नियोंसे कममें तो काम चल ही नहीं सकता। इसीलिए बाबूजी अगर—

रमेशने जल्दीसे कहा—अच्छा, तुम लोग घर जाओ। अब और कहीं जानेकी ज़रूरत नहीं। मैं अभी सब इन्तजाम करके आदमी भेजता हूँ।

---

* बंगालमें दमे आदि कई रोगोंके रोगियोंसे प्रायश्चित्त करानेकी प्रथा है।

रमेशने उन लोगोंको विदा करके गोपाल सरकारके मुँहकी ओर बहुत ही व्यथित दृष्टिसे देखकर पूछा—आप जानते हैं कि इस गाँवमें इस तरहके और कितने गरीब घर हैं ?

सरकारने कहा, "दो ही तीन घर हैं, ज्यादा नहीं हैं। इन लोगोंके यहाँ भी खाने-पहननेकी कमी नहीं थी। लेकिन एक पेड़के मामलेमें द्वारिका चक्रवर्ती और सनातन हाजरामें खूब मुकदमेबाजी हुई जिसमें, पाँच बरस हुए, दोनों ही घर तबाह हो गये।" इसके बाद उन्होंने गला कुछ धीमा करके कहा, "बाबूजी, यहाँ तक नौबत न आती। लेकिन हमारे बड़े बाबू और गोविन्द गाँगूलीने दोनों आदमियोंको बढ़ावा दे देकर यह हालत करा दी।"

रमेशने कहा—उसके बाद ?

सरकारने कहा—उसके बाद हमारे बड़े बाबूके यहाँ ही दोनों आदमियोंके पास जो कुछ था, सब रेहन हो गया। अभी परसाल उन्होंनेअसल और सूद सब मिलाकर जितना जो कुछ था, वह सब खरीद लिया। पर धन्य है इस बेचारी कामिनीकी माँको। इसने ऐसी विपत्तिके समय उस ब्राह्मणकी जो सहायता की, वह कहीं देखनेमें नहीं आती।

रमेश एक लम्बी साँस छोड़कर चुप हो गये। थोड़ी देर बाद उन्होंने गोपाल सरकारको वहाँका सब बन्दोबस्त करनेके लिए भेज दिया और मन ही मन कहा—ताईजी, आपकी आज्ञा ही मैं शिरोधार्य करता हूँ। अगर यहाँ मर भी जाऊँ तो अच्छा। लेकिन इस अभागे गाँवको छोड़कर अब कहीं नहीं जाऊँगा।

१०

कोई तीन महीने बाद एक दिन सवेरेके समय रमेशका तारकेश्वरके उस तालाबकी सीढ़ियोंपर, जिसे दूध-सागर कहते हैं, एक स्त्रीसे अचानक आमना सामना हो गया। थोड़ी देरके लिए वे ऐसे अभिभूत हो गये और उसके खुले हुए मुखकी ओर ऐसी अभद्रतासे टक लगाकर खड़े देखते रह गये कि उन्हें खयाल ही न रहा कि मुझे रास्ता छोड़कर हट जाना चाहिए। उस स्त्रीकी अवस्था शायद बीस वर्षसे अधिक न होगी। वह स्नान करके ऊपर आ रही थी। उसने जल्दीसे हाथमेंका जलसे भरा हुआ घड़ा जमीनपर रखकर गीली

धोतीके नीचे दोनों बाहें छातीके ऊपर समेटकर सिर नीचा करके कोमल स्वरसे पूछा—आप यहाँ कैसे ?

रमेशके आश्चर्यकी सीमा न रही। लेकिन, उनकी विह्वलता अब दूर हो गई। एक तरफ हटकर उन्होंने पूछा—क्या आप मुझे पहचानती हैं ?

उस स्त्रीने कहा—हाँ, पहचानती हूँ। आप यहाँ कब आये ?

रमेशने कहा—आज ही सवेरे। मेरे मामाके घरसे औरतोंके आनेकी बात थी लेकिन वह लोग आईं नहीं।

स्त्रीने पूछा—यहाँ कहाँ ठहरे हैं ?

रमेशने कहा—कहीं नहीं। मैं पहले यहाँ आया नहीं। लेकिन आजके दिन तो जैसे तैसे उनकी प्रतीक्षामें कहीं रहना ही पडेगा और इसलिए कहीं न कहीं कोई स्थान ढूँढ़ लूँगा।

"साथमें नौकर तो है न ?"

"नहीं, मैं अकेला ही आया हूँ।"

"अच्छी बात है।" कहकर ज्यों ही उस स्त्रीने हँसकर सिर उठाया, त्यों ही फिर दोनोंकी आँखें चार हो गईं। लेकिन उस स्त्रीने फिर तुरन्त ही आँखें नीची कर लीं और मन ही मन कुछ इधर उधर करके अन्तमें कहा—अच्छा, तो फिर आप मेरे साथ आइए।

यह कहकर स्त्रीने अपना घडा उठा लिया और वह चलनेको तैयार हो गई। रमेश बहुत ही सकटमें पड गये। बोले—मैं चल तो सकता हूँ, क्योंकि इसमें अगर कोई दोष होता तो आप मुझसे चलनेके लिए कहती ही नहीं। और यह बात भी नहीं है कि मैं आपको पहचानता न होऊँ। लेकिन फिर भी मुझे याद नहीं आता कि आप कौन हैं। आप अपना परिचय दें।

"अच्छा तो आप थोड़ी देर यहीं ठहरें। मैं पूजा कर लूँ। रास्तेमें चलते चलते अपना परिचय दूँगी।"

इतना कहकर वह स्त्री मन्दिरकी तरफ चली गई। रमेश मुग्धकी तरह देखते रह गये। वह सोचने लगे कि कैसी विकट और उद्दाम यौवनश्री उसकी गीली धोतीको भेदकर बाहर निकलना चाहती थी। उसका मुख, गठन और चलनेका ढँग सब कुछ रमेशके लिए परिचित था। लेकिन उनकी स्मृतिके जो किवाड इधर बहुत दिनोंसे बन्द थे, वह किसी तरह खुलते ही न थे और उसका परिचय होने ही नहीं देते थे। कोई आध घण्टे बाद जब वह पूजा करके बाहर

आई, तब रमेशने फिर एक बार उसका मुख देखा। लेकिन अब भी वे पहलेकी ही तरह अपरिचयके दुर्भेद्य प्राकारके बाहर ही खड़े रहे। रास्तेमें चलते समय रमेशने पूछा—क्या आपके साथ आपका कोई आत्मीय नहीं है?

स्त्रीने उत्तर दिया—नहीं। दासी है, वह घरपर काम कर रही है। मैं अक्सर यहाँ आया करती हूँ। यहाँका सब कुछ परिचित है।

रमेशने पूछा—लेकिन आप मुझे अपने साथ क्यों ले चल रही हैं।

कुछ देरतक चुपचाप और आगे बढ़नेके बाद उसने कहा—यों आपको खाने-पीनेका बहुत कष्ट होगा। मैं रमा हूँ।

* * *

रमाने सामने बैठकर रमेशको भोजन कराया और पान खिलाया। फिर उनके विश्राम करनेके लिए अपने हाथसे एक दरी बिछाकर वह दूसरे कमरेमें चली गई। रमेश उस दरीपर आँखें बन्द करके पड़ गये। उन्हें खयाल आया कि मेरा यह तेईस वर्षका जीवन इस एक ही बेलामें एकदमसे बदल गया है। लड़कपनसे अब तकका सारा जीवन उन्होंने विदेशमें दूसरोंके आश्रयमें बिताया है। वह जानते ही न थे कि खाने-पीनेमें सिवाय भूख मिटानेके और भी कोई बात किसी भी अवस्थामें हो सकती है। इसी लिए आजकी इस अचिन्तनीय परितृप्तिसे उनका सारा मन विस्मय और माधुर्यमें बिल्कुल डूब गया। रमा यहाँ उनके खाने-पीनेके लिए कुछ भी संग्रह न कर सकी थी। खाने-पीनेकी बहुत ही साधारण चीजें उसने उनके सामने रखी थीं। इसलिए उसे बड़ी चिन्ता थी कि कहीं ऐसा न हो कि इनका पेट न भरे और परायेके निकट मेरी निन्दा हो। हायरे पराये! और हायरी उनकी निन्दा! वह पेट न भरनेकी चिन्ता उसकी खुदकी ही कितनी अपनी थी, और उसने अपने अन्तःकरणके अन्तरतम गह्वरसे अकस्मात् जाग्रत होकर उसकी सारी दुविधाएँ और सारे संकोच जबर-दस्ती छीनकर उसे इस खानेके स्थानपर ठेल दिया था, इस बातको आज वह अपने आपसे किस तरह छिपा रक्खे! आज तो लज्जाकी कोई बाधा उसे दूर न रख सकी! भोजनकी स्वल्पताकी यह त्रुटि केवल यत्नसे ही पूरी करनेके लिए वह उनके सामने आकर बैठी। भोजनके निर्विघ्न समाप्त हो जानेपर गम्भीर परितृप्तिका जो निःश्वास रमाके अन्तकरणसे निकला वह स्वयं रमेशके निःश्वाससे कितना बढ़कर था, यह बात चाहे और किसीको न मालूम हुई हो, परन्तु जो सब कुछ जानते हैं, उनसे तो छिपी न रही।

रमेशको दिनके समय सोनेकी आदत नहीं थी। उनके सामने जो छोटी खिडकी थी, उसके बाहर नव-वर्षाके धूसर श्यामल मेघ दोपहरके आकाशमे भर उठे थे। अध-खुली ऑखोंसे वे वही देख रहे थे। उनकी जो रिश्तेदार स्त्रियॉ आनेवाली थीं, उनके आने या न आनेका उन्हे इस समय कोई खयाल ही नहीं था। अचानक रमाका कोमल स्वर उनके कानोंमे सुनाई दिया। वह दरवाजेके बाहर खड़ी होकर कह रही थी—आज जब आपको घर नहीं जाना है, तो फिर यहीं क्यों न रहें ?

रमेश जल्दीसे उठकर बैठ गये और बोले—लेकिन जिनका यह मकान है उन्हें तो मैं अभी तक देख ही नहीं सका। जब तक वे न कहें, तब तक कैसे रहा जा सकता है ?

रमाने वहीसे खड़े खड़े उत्तर दिया—वे ही ठहरनेके लिए कहते हैं। यह मकान मेरा ही है।

रमेशने चकित होकर पूछा—यहाँ मकान क्यों ले रक्खा है ?

रमाने कहा—यह स्थान मुझे बहुत अच्छा लगता है। मैं अक्सर आया करती हूँ। अवश्य ही आज-कल यहॉ कोई नहीं है, पर समय समयपर यहॉ पैर फैलानेको भी जगह नहीं रह जाती।

रमेशने कहा— तो वैसे समय न आया करो।

रमा मुस्कराकर चुप रह गई।

"मैं समझता हूँ कि तारकनाथ बाबापर तुम्हारी बहुत भक्ति है। है न ?"

"भला मुझसे वैसी भक्ति कहॉ हो सकती है ! लेकिन जब तक जीती हूँ चेष्टा तो करनी ही चाहिए।"

रमेशने फिर कोई प्रश्न नहीं किया। रमा वही चौखटके साथ सटकर बैठ गई और दूसरी बात छेड दी। पूछा—रातको आप क्या खाते हैं ?

रमेशने हॅसते हुए कहा — जो कुछ मिल जाता है, वही खा लेता हूँ। खानेको बैठनेके क्षण-भर पहले तक भी मै खानेके सम्बन्धमें कोई विचार नहीं करता। अपने रसोइयाकी विवेचनापर ही मुझे सन्तुष्ट रहना पडता है।

रमाने पूछा—आखिर इतना वैराग्य क्यो ?

रमेशकी समझमें नहीं आया कि इसमें मेरा छिपा हुआ उपहास है या रमाने साधारण हॅसी की है। उसने सक्षेपमें उत्तर दिया—नहीं, यह केवल आलस्य है।

रमाने कहा—लेकिन दूसरोंके काममें तो आपको कभी आलस्य करते हुए नहीं देखती !

रमेशने कहा—उसका कारण है। दूसरोंके काममें आलस्य किया जाय तो उसके लिए भगवानके सामने जवाब देना पड़ता है। संभव है, अपने कामोंमें भी देना पड़ता हो, पर निश्चय ही उतना तो नहीं देना पड़ता होगा।

रमाने कुछ देर तक चुप रहनेके बाद कहा—आपके पास रुपया है, इसीलिए आप दूसरोंके कामोंमें मन लगा सकते हैं। लेकिन जिन लोगोंके पास नहीं है ?

रमेशने कहा—रमा, मैं उन लोगोंकी बात नहीं जानता। क्योंकि रुपये होनेका भी कोई परिमाण नहीं है और मन लगानेका भी कोई निश्चित माप-तौल नहीं है। रुपये होने न होनेका हिसाब भी वही जानते हैं जिन्होंने इह-काल और पर-कालका भार ले रखा है।'

रमाने थोड़ी देर तक चुप रहनेके बाद कहा—लेकिन अभी आपकी वह उमर तो आई ही नहीं जिसमें पर-कालकी चिन्ता की जाती है। आप मुझसे सिर्फ तीन ही बरस तो बड़े हैं !

रमेशने हँसकर कहा—तो इसका मतलब यह हुआ कि तुम्हारी उमर तो और भी अभी पर-कालकी चिन्ता करनेके योग्य नहीं हुई है। भगवान ऐसा ही करें। तुम दीर्घजीवी होओ। लेकिन अपने बारेमें मैंने कभी यह नहीं सोचा कि आजका दिन ही मेरा अन्तिम दिन नहीं है।

रमेशकी इस बातमें जो थोड़ा-सा छिपा हुआ आघात था वह शायद व्यर्थ नहीं गया। रमाने कुछ देर तक स्थिर रहकर सहसा पूछा—आपको सन्ध्या-पूजा तो करते देखा नहीं। मन्दिरमें क्या है, क्या नहीं, यह न देखा तो न सही। लेकिन भोजनके लिए बैठते समय आचमन करना भी क्या भूल गये ?

रमेशने मन ही मन हँसकर कहा—भूला तो नहीं हूँ, पर समझता हूँ कि अगर भूल भी जाऊँ तो कोई हर्ज नहीं। लेकिन आखिर यह क्यों पूछती हो ?

रमाने कहा—आपको पर-कालकी चिन्ता बहुत अधिक है न, इसीसे पूछती हूँ।

रमेशने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। इसके बाद कुछ देर तक दोनों ही चुप रहे। फिर रमाने धीरेसे कहा—देखिए, मुझे दीर्घजीवी होनेके लिए कहना शाप देनेके बराबर है। हम हिन्दुओंके घरमें कभी किसी विधवाके लिए उसका कोई आत्मीय दीर्घजीवी होनेकी कामना नहीं करता। थोड़ी देर

तक चुप रहनेके बाद फिर कहा—यह बात तो सत्य नहीं है कि मैं मरनेके लिए बिलकुल पैर बढ़ाये खड़ी हूँ, लेकिन अधिक दिनों तक जीते रहनेका खयाल आनेसे भी मुझे भय लगता है। लेकिन आपके बारेमें तो यह बात है नहीं, आपसे जोर देकर कोई बात कहना तो मेरे लिए ढिठाई है। लेकिन संसारमें प्रवेश करनेपर जब दूसरोंके लिए माथा-पच्ची करना स्वयं आपको ही बिलकुल लड़कपन जान पड़े, तब आप मेरी यह बात याद कीजिएगा।

इसके उत्तरमें रमेशने सिर्फ एक निःश्वास छोड़ दिया। थोड़ी देर बाद उन्होंने रमाकी ही तरह धीरेसे कहा—लेकिन, मैं तुमसे खूब याद करके कहता हूँ कि इस समय तो यह बात मुझे किसी तरह भी याद नहीं आती। रमा, मैं तो तुम्हारा कोई नहीं हूँ, बल्कि तुम्हारे रास्तेका काँटा हूँ। तो भी सिर्फ एक पड़ोसीके नाते आज तुमने मेरी जितनी खातिर की है, उतनी खातिर संसारमें प्रवेश करके जो लोग अपने आदमीसे नित्य पाते हैं, मैं तो समझता हूँ कि वे दूसरोंके दुःख और कष्ट देखकर पागल होकर दौड़ पड़ते होंगे। अभी मैं अकेला बैठा बैठा चुपचाप यही सोच रहा था कि तुमने मेरा सारा जीवन एक ही बारमें आदिसे अन्त तक बदल दिया। आज तक किसीने मुझसे इस तरह खानेके लिए नहीं कहा और न कभी किसीने आज तक मुझे इतने आदर-प्रेमसे खिलाया ही। रमा, आज पहले-पहल मुझे तुम्हारे निकट यह मालूम हुआ कि खानेमें भी इतना आनन्द है!

यह बात सुनकर रमाका सारा शरीर रोमाञ्चित होकर बार-बार सिहर उठा। लेकिन उसने तुरन्त ही स्थिर होकर कहा—लेकिन, इसे भूलनेमें आपको अधिक दिन नहीं लगेंगे। और फिर कभी याद भी आयगा, तो बहुत ही तुच्छ रूपमें।

रमेशने कोई उत्तर नहीं दिया। रमाने कहा—घर जाकर यदि आप निन्दा न करें, तो इसे ही मैं अपना भाग्य समझूँगी।

रमेशने फिर एक निःश्वास डाल कर धीरेसे कहा—नहीं रमा, निन्दा नहीं करूँगा और तारीफ भी नहीं करता फिरूँगा। मेरा आजका दिन निन्दा और तारीफ दोनोंके बाहर है।

रमाने कोई उत्तर नहीं दिया। पहले तो वह थोड़ी देर तक चुपचाप बैठी रही और तब उठकर अपने कमरेमें चली गई। वहाँ उस निर्जन स्थानमें उसकी आँखोंसे बड़ी बड़ी बूँदें गिरने लगीं।

११

दो दिन लगातार पानी बरसनेके बाद आज तीसरे पहर आसमान कुछ साफ हुआ था। चण्डीमण्डपमें गोपाल सरकारके पास बैठकर रमेश अपनी जमींदारीका हिसाब-किताब देख रहे थे। अचानक कोई बीस खेतिहर रोते हुए आकर कहने लगे—छोटे बाबू, इस बार हमें बचा लीजिए। अगर आपने नहीं बचाया तो हम लोगोंको अपने बाल-बच्चोंके हाथ पकड़कर गली गली भीख माँगनी पड़ेगी।

रमेशने अवाक् होकर पूछा—बात क्या है ?

खेतिहरोंने कहा—हम लोगोंकी सौ बीघे जमीन पानीमें डूब गई। अगर पानी नहीं निकाला जायगा तो सारा धान नष्ट हो जायगा बाबू। गाँवका एक भी घर भूखे मरे बिना न रहेगा।

रमेश कुछ समझे नहीं। गोपाल सरकारने उन लोगोंसे एक-दो प्रश्न करके सारी बातें रमेशको समझा दीं। इस सौ बीघेके कृषि-क्षेत्रका ही सारे गाँवको भरोसा है। सभी खेतिहरोंकी कुछ न कुछ जमीन उसमें है। उसके पूरबमें बहुत बड़ा सरकारी बाँध है और पच्छिम तथा उत्तरकी तरफ ऊँचा गाँव है। सिर्फ दक्षिणकी तरफ घोषाल और मुकर्जीका बाँध है। उसी तरफसे जल निकाला जा सकता है; लेकिन उस बाँधसे लगा हुआ एक तालाब-सा है। उसमेंसे हर साल कोई दो सौ रुपयेकी मछलियाँ निकाली जाकर बेची जाती हैं। इसीलिए जमींदार वेणी बाबूने वहाँ कड़ा पहरा लगा रखा है। ये सब लोग आज सवेरेसे ही उनके यहाँ धरना देकर बैठे थे। अभी अभी वहाँसे उठकर रोते रोते यहाँ आये हैं। रमेशने और कुछ सुननेकी अपेक्षा न की, वे जल्दीसे उठकर चल पड़े। जब वह वेणीके यहाँ पहुँचे तब सन्ध्या हो चुकी थी। वेणी बाबू एक तकियेके सहारे बैठे हुए तमाखू पी रहे थे। उनके पास ही हालदार बैठे थे। शायद इसी बारेमें बात-चीत हो रही थी।

रमेशने बिना कोई भूमिका बाँधे कहा—तालाबका बाँध रोक रखनेसे तो अब काम नहीं चलेगा। इसी समय उसे तोड़ देना होगा।

वेणीने हुक्का हालदारके हाथमें दे दिया और सिर उठाकर पूछा—कौन-सा बाँध ?—

रमेश उत्तेजित होकर तो आये ही थे। उन्होंने क्रुद्ध होकर कहा—

बड़े भइया, तालाबके बाँध और कितने हैं? यह बाँध अगर न काटा जायगा तो सारा धान सड़ जायगा। आप पानी निकाल देनेकी आज्ञा दे दीजिए।

वेणीने कहा—तुम्हें यह भी खबर है कि उस पानीके साथ ही साथ दो-तीन सौ रुपयेकी मछलियाँ भी निकल जायँगी? ये रुपये कौन देगा? किसान देंगे या तुम?

रमेशने क्रोध रोककर कहा—किसान लोग गरीब हैं। वे तो दे ही नहीं सकते, रह गया मैं, सो मैं क्यों दूँ, यह समझमें नहीं आता।

वेणीने उत्तर दिया—तो फिर मेरी समझमें भी यह नहीं आता कि आखिर मैं ही अपना इतना नुकसान क्यों करूँ? इसके बाद उन्होंने हालदारकी तरफ देखकर कहा—चाचा, बस इसी तरह हमारे भाई जमींदारीकी रक्षा करेंगे। रमेश, वे सब हरामजादे आज सवेरेसे ही यहाँ पड़े पड़े रो रहे थे। मैं सब जानता हूँ। क्या तुम्हारे यहाँ कोई दरबान नहीं था? या उसके पैरोंमें चमरौधा जूता नहीं था? जाओ, घर जाकर इसका इन्तजाम करो। पानी आपसे आप निकल जायगा।

वेणी बाबू इतना कहकर और हालदारके साथ मिलकर ही ही करके अपने इस मज़ाकपर आप ही हँसने लगे। रमेशसे अब सहा नहीं गया। लेकिन फिर भी उन्होंने बहुत कठिनतासे अपने आपको रोककर विनीत भावसे कहा—बड़े भइया, आप जरा अच्छी तरह समझ लें। अगर हम तीनों घर अपने दो सौ रुपयोंका नुकसान बचावेंगे, तो इन गरीबोंका साल-भरका अनाज मारा जायगा और इस तरह उनका पाँच सात हजार रुपयोंका नुकसान हो जायगा।

वेणीने हाथ पलटकर कहा—होगा तो हुआ करे। चाहे उनका पाँच हजारका नुकसान हो और चाहे पचास हजारका। मेरा सारा सदर खोदनेसे भी तो दो पैसे बाहर निकलेंगे नहीं, फिर मैं उन सालोंके लिए दो सौ रुपयोंका नुकसान कर दूँ?

रमेशने अन्तिम चेष्टा करते हुए कहा—आखिर ये लोग साल-भर खायेंगे क्या?

रमेशने मानो यह कोई बहुत बड़ी हँसीको बात कही हो, इस तरह वेणी बाबूने एक बार इधर और एक बार उधर हिल-डुलकर, सिर हिलाकर, हँसकर, थूककर और अन्तमें स्थिर होकर कहा—खायेंगे क्या? देख लेना, सब साले हमारे ही पास अपनी ज़मीन रेहन रखकर रुपये उधार लेनेके लिए दौड़े

आवेंगे। भाई, ज़रा अपना दिमाग ठंडा करके काम करो। बड़े-बूढ़े इसी तरहसे तो जोड़-बटोरकर यह एकाध जूठा टुकडा हम लोगोंके लिए छोड गये हैं। और यही हम लोगोंको बढ़ाकर, सँभालकर, खा-पीकर फिर अपने बाल-बच्चोंके लिए छोड़ जाना होगा। पूछते हो, वह खायँगे क्या? खायँगे उधार लेकर। नहीं तो ये साले छोटी जातके क्यों कहलाते?

मारे घृणा, लज्जा, क्रोध और क्षोभके रमेशका मुँह और आँखें लाल हो गईं। लेकिन फिर भी उन्होंने अपना स्वर शान्त रखकर कहा—जब आपने निश्चय ही कर लिया है कि इन लोगोंके लिए कुछ भी नहीं करेंगे, तो फिर यहाँ खडे रहकर तर्क करनेसे कोई लाभ नहीं। मैं अब रमाके पास जाता हूँ। अगर वह मान गई तो फिर अकेले आपके न माननेसे कुछ न होगा।

वेणीका मुख गम्भीर हो गया। उन्होंने कहा—अच्छी बात है। जाकर देख लो। उसकी राय मुझसे भिन्न नहीं है। भाई, वह साधारण लड़की नहीं है। उसे भुलाना सहज नहीं है। और तुम तो अभी लडके हो, तुम्हारे बाप तकको उसने नाकों चने चबवाकर छोड़ा था।—क्यों चाचा?

चाचाके मतामतके लिए रमेशके मनमें कोई कुतूहल नहीं था; और वेणीकी उस अत्यन्त अपमानजनक बातका उत्तर देनेकी भी उनकी प्रवृत्ति नहीं हुई। वे उत्तर दिये बिना ही बाहर निकल गये।

रमाने तुलसीके चौरेके आगे दीपक जलाकर और प्रणाम करके सिर उठाया ही था कि वह मारे आश्चर्यके अवाक् हो गई। ठीक सामने रमेश खड़े हुए थे। वह अपने सिरपरका आँचल अपने गलेमें लपेटे हुए थी। ऐसा मालूम हुआ कि उसने मानो अभी रमेशको ही प्रणाम करके सिर उठाया हो। उस समय रमेशको क्रोधकी उत्तेजना और उत्कण्ठाके कारण यह स्मरण नहीं रह गया था कि उस दिन मौसीने यहाँ आनेसे मना कर दिया था। इसीलिए वे सीधे अन्दर जा पहुँचे थे और रमाको उस अवस्थामें देखकर चुपचाप खड़े प्रतीक्षा कर रहे थे। दोनोंकी यह कोई महीने-भर बाद भेंट हुई थी।

रमेशने कहा—निश्चय ही तुम सब बातें सुन चुकी होगी। मैं बाँधका पानी बाहर निकाल देनेके लिए तुम्हारी स्वीकृति लेने आया हूँ।

अब रमाका आश्चर्य दूर हो गया। उसने सिरपर आँचल खींचकर कहा—भला यह कैसे होगा? और फिर बडे भइयाकी राय नहीं है।

"जानता हूँ, नहीं है, परन्तु अकेले उनकी राय न होनेसे कुछ नहीं हो सकता।"

रमाने कुछ देर तक सोचकर कहा—यह तो ठीक है कि बाँधका पानी निकाल दिया जाना चाहिए। लेकिन मछलियोंको रोक रखनेका क्या उपाय होगा?

रमेशने कहा—इतने पानीमें कोई उपाय नहीं हो सकता। इस साल रुपयोंका जो नुकसान होगा, वह हम लोगोंको सहना ही पड़ेगा। नहीं तो सारा गाँव मारा जायगा।

रमा चुप रही। रमेशने फिर कहा—तो फिर तुम मंजूरी देती हो न?

रमाने कोमल स्वरसे कहा—नहीं। मैं इतने रुपयोंका नुकसान नहीं कर सकूँगी।

रमेश मारे आश्चर्यके हत-बुद्धि हो गये। वह कभी ऐसे उत्तरकी आशा नहीं रखते थे। बल्कि न जाने किस तरह उनके मनमें यह निश्चित धारणा हो चुकी थी कि मेरे अनुरोध करनेपर रमा किसी तरह इन्कार न कर सकेगी। शायद रमाने बिना सिर उठाये ही रमेशके मनकी अवस्थाका अनुभव किया। उसने कहा—इसके सिवा यह सारी सम्पत्ति मेरे भाईकी है। मैं तो केवल अभिभाविका हूँ।

रमेशने कहा—नहीं, उसमें आधा हिस्सा तुम्हारा भी है।

रमाने कहा—खाली नामके लिए। बाबूजी निश्चय जानते थे कि सारी सम्पत्ति अन्तमें यतीन्द्रको ही मिलेगी। इसीलिए वे आधी सम्पत्ति मेरे नाम लिख गये हैं।

फिर भी रमेशने विनीत स्वरमें कहा—रमा, ये कितने-से रुपये हैं? इस तरफ तुम्हारी अवस्था सभी लोगोंसे अच्छी गिनी जाती है। तुम्हारे लिए यह नुकसान कोई नुकसान ही नहीं है। मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ रमा, इसके लिए तुम इतने लोगोंको भूखों मत मारो। मैं तुमसे बिलकुल ठीक कहता हूँ कि मैंने स्वप्नमें भी यह नहीं सोचा है कि तुम इतनी निष्ठुर हो सकती हो।

रमाने उसी प्रकार कोमल भावसे उत्तर दिया—अपना नुकसान नहीं कर सकती हूँ, इसके लिए अगर मैं निष्ठुर हूँ तो निष्ठुर ही सही। आपको यदि इतनी ही दया है तो आप ही वह नुकसान पूरा कर दीजिए न?

इसके इस कोमल स्वरमें उपहासकी कल्पना करके रमेश जल उठे और बोले—आदमी खरा है कि नहीं, यह रुपयेके सम्पर्कमें आनेपर ही पहिचाना जाता है। इस जगह प्रतारणा नहीं चलती, इसलिए यहाँ मनुष्यका वास्तविक रूप प्रकट हो जाता है। आज तुम्हारा भी वही रूप प्रकट हो गया। लेकिन मैंने कभी ऐसा नहीं सोचा था। सदासे यही सोचता आया हूँ कि तुम

इसकी अपेक्षा ऊँची, बहुत ही ऊँची हो। लेकिन तुम वह नहीं हो। तुम्हें निष्ठुर कहना भी भूल है। तुम बहुत ही नीच, बहुत ही छोटी हो।

असह्य विस्मयसे आँखें फाड़कर रमाने कहा—मैं क्या हूँ?

रमेशने कहा—तुम अत्यन्त हीन और नीच हो। मैं कितना व्याकुल हो उठा हूँ, यह तुमने जान लिया है। इसीलिए तुमने मुझसे नुकसान पूरा करनेके लिए कहा। बड़े भइया भी अपने मुँहसे यह बात नहीं कह सके। जो बात पुरुष होनेपर भी उनके मुँहसे नहीं निकल सकी, स्त्री होनेपर भी तुम्हें उसे कहनेमें सकोच नहीं हुआ। मैं इससे भी कहीं ज्यादा नुकसान पूरा कर सकता हूँ। लेकिन रमा, आज मैं एक बात तुमसे कहे जाता हूँ। संसारमें जितने पाप हैं, उन सबसे बढ़कर पाप मनुष्यकी दयाके ऊपर अत्याचार करना है। आज तुमने वही करके मुझसे रुपये वसूल करनेकी चेष्टा की है।

रमा विह्वल हत-बुद्धिकी तरह आँखें फाड़े देखती रह गई। उसके मुँहसे एक बात भी न निकली। रमेशने फिर उसी प्रकार शान्त परन्तु दृढ़ स्वरसे कहा—यह ठीक है कि तुमसे यह बात छिपी नहीं है कि मेरी दुर्बलता किस जगह है। लेकिन मैं कहे जाता हूँ कि उस जगह मसलनेसे अब एक बूँद भी रस नहीं पा सकोगी। इसीके साथ तुम्हें यह भी बतलाये जाता हूँ कि मैं क्या करूँगा। मैं अभी जाकर जबरदस्ती बाँध तोड़ दूँगा। तुम लोगोंसे हो सके, तो रोकनेकी कोशिश कर देखो।

रमेशको यह कहकर चले जाते देख रमाने पुकारा और बुलाहट सुनकर जब वे पास आकर खड़े हो गये तब कहा—मेरे ही घरमें खड़े होकर आपने मेरा जो इतना अपमान किया, उसका मैं कोई उत्तर नहीं देना चाहती। लेकिन आप यह काम किसी तरह भी करनेकी चेष्टा न करें।

रमेशने पूछा—क्यों?

रमाने कहा—कारण आपके इतना अधिक अपमान करनेपर भी आपके साथ झगड़ा करनेकी मेरी इच्छा नहीं है।

यह बात कहते समय रमाके चेहरेका रंग कैसा अस्वाभाविक रूपमें पीला पड़ गया और बात कहते कहते किस तरह उसके होंठ काँप उठे, उसे सन्ध्याका अन्धकार होनेपर भी रमेशने देख लिया। लेकिन उस समय रमेशके पास न तो मनोविज्ञानकी आलोचना करनेको अवकाश था और न ऐसा करनेकी उस समय उनकी प्रवृत्ति ही थी। इसलिए उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया—लड़ाई-

झगड़ा मैं भी नहीं करना चाहता। लेकिन अब मेरे निकट तुम्हारे इस सद्भावका कोई मूल्य भी नहीं रह गया है। जो हो, अब वाग्वितण्डाकी आवश्यकता नहीं है। जाता हूँ।

मौसी ऊपर ठाकुरजीवाली कोठरीमें थी, इसलिए इन सब बातोंका उसे कुछ भी पता नहीं चला। नीचे आकर उसने देखा कि रमा अपने साथ दासीको लेकर बाहर जा रही है। उसने आश्चर्यसे पूछा—रमा, इस कीचड़-पानीमें रातके समय कहाँ जा रही हो?

रमाने कहा—मौसी, जरा मैं बड़े भइयाके यहाँ जाती हूँ।

दासीने कहा—मौसी, अब तो रास्तेमें कीचड़का कहीं नाम भी नहीं है। छोटे बाबूने ऐसा बढ़िया रास्ता बनवा दिया है कि अगर सेन्दुर भी गिर पड़े तो उठा लिया जाय। भगवान उन्हें जीता रखे, साँपोंसे गरीब-दुखियोंकी जानोंकी रक्षा हुई।

* * * *

उस समय रातके करीब ग्यारह बज गये थे। वेणीके चण्डी-मण्डपसे बहुतसे लोगोंके दबे हुए गलेकी आवाज आ रही थी। आकाशसे बहुतसे बादल छँट गये थे और त्रयोदशीकी चाँदनी आकर बरामदेपर पड़ रही थी। वहीं एक खम्भेके सहारे भीषण आकृतिवाला एक प्रौढ़ मुसलमान आँखें बन्द किये हुए बैठा था। उसके सारे मुँहपर ताजा खून जमा हुआ था। उसके शरीरके कपड़े भी खूनसे तर थे। लेकिन वह चुपचाप था। वेणी बहुत ही दबे हुए स्वरसे अनुनय कर रहे थे—अकबर, मेरी बात मानो। थाने चले चलो। अगर मैं सात बरसोंके लिए उसे जेल न भेज दूँ तो घोषाल वंशका लड़का नहीं। (पीछेकी तरफ देखकर) रमा, एक बार तुम भी कहो न, चुप क्यों हो?

लेकिन रमा ज्योंकी त्यों काठकी तरह बैठी रही। अब अकबरअली आँखें खोलकर जरा तनकर बैठ गया और बोला—शाबाश! जरूर छोटे बाबूने अपनी माँका दूध पिया है। लाठी चलाना खूब जानते हैं।

वेणीने कुछ घबराकर और कुछ क्रुद्ध होकर कहा—अकबर, यही बात कहनेके लिए तो मैं तुम्हें समझा रहा हूँ। किसकी लाठीकी चोटसे तुम जख्मी हुए? उसी लौंडेकी लाठीसे या उसके पछैयाँ नौकरकी लाठीसे? अकबरके ओठोंपर कुछ मुस्कराहट आ गई। उसने कहा—उस ठिंगने पछैयाँकी लाठीसे? बड़े बाबू, वह साला लाठी चलाना क्या जाने? क्यों गौहर, तुम्हारी तो पहली चोटसे ही वह बैठ गया था न!

अकबरके दोनों लड़के थोडी दूरपर बिलकुल सिमटे हुए बैठे थे। वे भी घायल हुए थे। गौहरने सिर्फ सिर हिलाकर हुँकारी भर दी, मुँहसे कुछ नही कहा। अकबर कहने लगा—अगर मेरे हाथकी चोट बैठती तो वह साला जीता भी न बचता। वह तो गौहरकी लाठीस ही 'बाप रे बाप' कहके बैठ गया बड़े बाबू!

रमा उठकर उन लोगोंके पास आ खड़ी हुई। अकबर उन लोगोके पीरपुर गाँवकी प्रजा था। पिछले दिनो लाठीके जोरसे उसने इन लोगोकी बहुत-सी जायदादपर कब्जा करा दिया था। इसीलिए आज सन्ध्याके बाद मारे क्रोध और अभिमानके पागल होकर रमाने उसे बुलवा भेजा था और बाँधपर पहरा देनेके लिए भेज दिया था। उसने एक बार अच्छी तरह देख लेना चाहा था कि रमेश उस पछैयाँ नौकरके बलपर क्या करते हैं। लेकिन उसने स्वप्नमे भी कल्पना नही की थी कि वे स्वयं कितने जबर्दस्त लठैत हैं।

अकबरने रमाकी तरफ देखकर कहा—मालिकिन, उस समय छोटे बाबूने उस सालेकी लाठी उठा ली और वह आप जाकर बाँधको रोककर खडे हो गये। हम तीनो बाप-बेटे मिलकर भी उन्हे वहाँसे न हटा सके। अँधेरेमें उनकी आँखे बाघकी तरह चमकने लगी। उन्होने कहा—अकबर, तुम बूढे आदमी हो। हट जाओ। अगर बाँध नहीं काटा जायगा तो सारे गाँवके आदमी भूखो मर जायँगे, इसलिए वह जरूर काटा जायगा। अपने गाँवमे तुम लोगोंकी भी तो जमीन है। अब तुम्हीं समझ देखो कि अगर तुम्हारा सब कुछ बरबाद हो जाय तो तुम्हें कैसा लगेगा? मैंने सलाम करके कहा—छोटे बाबू, अल्लाहकी कसम, तुम एक बार बीचमेसे हट जाओ। तुम्हारी आडमें खड़े होकर मुँहपर कपड़ा लपेटे जो ये लोग धड़ाधड़ कुदाल चला रहे हैं, मै उन लोगोंके सिर तोड दूँ।

वेणी अपना क्रोध न सँभाल सकनेके कारण बीचमें ही चिल्लाकर बोले—बेईमान साला उसको सलाम बजा कर आया है और यहाँ शेखी मार रहा है।

तीनो बाप-बेटोंने एक साथ हाथ उठा लिये। अकबरने कर्कश स्वरसे कहा—खबरदार बड़े बाबू, बेईमान मत कहना। हम लोग मुसलमान हैं। सब कुछ सह सकते हैं पर यह बात नहीं सहेंगे।

इसके बाद अकबरने अपने हाथसे सिरपरका कुछ रक्त पोछकर और रमाकी तरफ देखकर कहा—मालिकिन, यह बेईमान कहते हैं! बाबू यहाँ

घरमें बैठे हुए बेईमान कहते हैं, अगर वहाँ अपनी आँखोंसे देखते, तो इन्हें मालूम होता कि छोटे बाबू क्या चीज़ हैं।

वेणी बाबूने मुँह बिगाड़कर कहा—तो, थानेपर चलकर ही बतला आओ न कि छोटे बाबू क्या चीज हैं! बस कह देना कि हम बाँधपर पहरा दे रहे थे। छोटे बाबू चढ़ आये और हमें मारा।

अकबरने दाँतोंसे जीभ दबाकर कहा—तोबा तोबा! बड़े बाबू, आप दिनको रात बतानेके लिए कहते हैं?

वेणीने कहा—अच्छा, तो फिर और कोई बात कह देना। आज जाकर पहले अपने घाव तो दिखला आओ। कल वारंट निकलवा कर उसे हवालतमें बन्द करा दूँगा। रमा, जरा तुम भी इसे अच्छी तरह समझाओ। ऐसा अच्छा मौका फिर कब मिलेगा!

रमाने कोई उत्तर नहीं दिया, सिर्फ एक बार अकबरके मुँहकी तरफ देख लिया। अकबरने सिर हिलाकर कहा—नहीं मालिकिन, मुझसे यह नहीं होगा।

वेणीने धमकाकर कहा—होगा क्यों नहीं?

अबकी अकबरने भी चिल्लाकर कहा—बड़े बाबू, आप भी क्या कहते हैं! क्या मुझे शरम-हया नहीं है? मुझे चार गाँवोंके आदमी क्या सरदार नहीं कहते हैं? मालिकिन, अगर आपका हुकुम हो तो मैं मुजरिम बनकर जेलखाना काट सकता हूँ। लेकिन फरियादी किस मुँहसे बनकर जाऊँ?'

रमाने कोमल स्वरसे केवल एक बार पूछा—तो क्यों अकबर, थाने नहीं जा सकोगे?

अकबरने जोरसे सिर हिलाकर कहा—नहीं मालिकिन, और सब कुछ कर सकता हूँ, पर सदरमें जाकर अपने बदनके घाव नहीं दिखला सकता। उठो गौहर, चलो, घर चलें। हम लोगोंसे नालिश-फरियाद नहीं हो सकेगी।

इतना कहकर वे सब लोग उठनेका उपक्रम करने लगे। वेणी क्रुद्ध निराशासे उन लोगोंकी तरफ देखकर आँखोंसे अग्निकी वर्षा करते हुए मन ही मन अकथ्य गाली-गलौज करने लगे और रमाकी एकान्त निरुद्यम स्तब्धताका कुछ भी अर्थ न समझ सकनेके कारण भूसेकी आगमें जलने लगे। जब सब प्रकारके अनुनय-विनय, डाँट-डपट और क्रोध आदिकी उपेक्षा करके अकबरअली अपने लड़कोंको लेकर चला गया, तब रमाका हृदय भेदकर एक

गम्भीर और दीर्घ निःश्वास निकल पड़ा और अकारण ही उसकी आँखोंमें आँसू भर आये। आज इतना बड़ा अपमान, इतनी बड़ी पराजय, और ऐसी निष्फलता मिलनेपर भी उसे ऐसा मालूम होने लगा कि उसके हृदयपरसे एक बहुत भारी पत्थर हट गया है। पर ऐसा क्यों हुआ, इसका कारण वह किसी तरह न समझ सकी। सारी रात उसे नींद नहीं आई। उस दिन उसने तारकेश्वरमें सामने बैठकर रमेशको जो भोजन कराया था, उसीका दृश्य उसकी आँखोंके ऊपर तैरने लगा। ज्यों ज्यों उसे खयाल आने लगा कि उस सुन्दर और सुकुमार शरीरके भीतर इतनी अधिक माया और इतना अधिक तेज किस प्रकार ऐसी स्वच्छन्दतामें वास करते हैं, त्यों त्यों आँखोंके जलसे उसका सारा मुँह प्लावित होने लगा।

रमेशने लड़कपनमें किसी समय रमाको प्यार किया था। इसमें सन्देह नहीं कि वह प्यार बिलकुल लड़कपनका था। लेकिन वह कितना गहरा था, इसका अनुभव वे पहले-पहल तारकेश्वरमें कर सके थे। और वह और भी कितना गम्भीर था, इसका उस दिन सबसे अधिक पता लगा था जिस दिन सन्ध्याके अन्धकारमें वे रमाका सारा सम्बन्ध बिल्कुल ही मिट्टीमें मिलाकर उसके घरसे चले आये थे। तत्पश्चात् उस रोजकी रातवाली दुर्घटनाके बादसे रमाकी दिशा ही रमेशके निकट महा मरुभूमिके समान शून्यमें दहकती-सी दिखती थी। किन्तु रमेशने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि इससे मेरे सब काम-धन्धे, सोना-बैठना, यहाँ तक कि चिंतन और अध्ययन भी इतना बे-स्वाद और फीका हो जायगा। इस गृह-विच्छेद और सर्वव्यापी अनात्मीयताके कारण अब वह क्षण-भरके लिए भी इस गाँवमें नहीं रहना चाहते थे। लेकिन उसी समय एक और घटना हो गई जिससे वे फिर मानो सीधे तनकर बैठ गये।

तालके उस पार पीरपुरगाँवमें ही इन लोगोंकी जमींदारी थी। वहाँ मुसलमानोंकी ही बस्ती अधिक है। एक दिन वे लोग दल बाँध कर रमेशके पास आये। उन्होंने यह फरियाद पेश की कि हैं तो हम लोग आपकी प्रजा ही, फिर भी हमारे लड़के बच्चोंको सिर्फ मुसलमान होनेके कारण इस गाँवके स्कूलमें भर्ती नहीं होने दिया जाता। हम लोगोंने कई बार चेष्टा की, पर हमें विफल-मनोरथ होना पड़ा। मास्टर किसी तरह हम लोगोंके लड़कोंको नहीं लेते! रमेशने विस्मित और क्रुद्ध होकर कहा—इस तरहका अन्याय और

अत्याचार तो मैंने कभी नहीं सुना। तुम अपने लड़कोंको आज ही ले चलो। मैं खुद चलकर और वहाँ खड़ा होकर अपने सामने तुम्हारे लड़कोंको भरती करा दूँगा।

उन लोगोंने कहा—यद्यपि हम लोग आपकी प्रजा हैं, पर लगान देकर ही जमीन जोतते-बोते हैं, इसलिए हिन्दुओंकी तरह जमींदारसे नहीं डरते। पर इस विषयमें विवाद करनेसे कोई लाभ नहीं, क्योंकि इसमें झगड़ा ही बढ़ेगा, कोई वास्तविक लाभ नहीं होगा। इससे हम लोग अपने यहाँ ही एक छोटा-सा स्कूल कायम करना चाहते हैं। यदि आप थोड़ी सहायता कर दें, तो सब काम हो जाय।

रमेश खुद भी लड़ाई-झगड़ोंसे तंग आ गये थे, इसलिए उन्हें उन लोगोंकी झगड़ा न बढ़ानेकी राय ही ठीक मालूम हुई। उन्होंने हामी भर ली और उसी समयसे वे एक नये स्कूलकी स्थापनाके प्रयत्नमें लग गये। इन लोगोंके सम्पर्कमें आकर रमेशने केवल अपनेको स्वस्थ ही न समझा, बल्कि इधर साल-भरसे उनका जो बल क्षीण हो रहा था, उसकी भी मानों धीरे धीरे पूर्ति होने लगी। रमेशने देखा कि ये लोग अपने कूआँपुरके हिन्दू पड़ोसियोंकी तरह बात-बातमें लड़ाई-झगड़ा नहीं करते। और करते भी हैं तो उसका निपटारा करनेके लिए सीधे सदर पहुँचकर दावा नहीं दायर कर देते। बल्कि अपने मुखियोंका निर्णय ही, चाहे सन्तुष्ट होकर और चाहे असन्तुष्ट होकर, मान लेते हैं। विशेषतः किसी विपत्तिके समय ये लोग जिस तरह जी जानसे एक दूसरेकी सहायता करनेके लिए पहुँच जाते हैं उस तरह रमेशने इस गाँवके न तो हिन्दू भले आदमियोंको और न छोटी जातिके लोगोंको ही एक दूसरेकी सहायता करते कभी देखा था।

एक तो जाति-भेदपर रमेशको यों ही कभी श्रद्धा नहीं थी। तिसपर पास ही पासके इन दो गाँवोंकी जब उन्होंने आपसमें तुलना की, तब उनकी वह अश्रद्धा बढ़कर सौ गुनी हो गई। उन्होंने निश्चय कर लिया कि हिन्दुओंका धर्म और उनकी सामाजिक विषमता ही इस ईर्ष्या और द्वेषका कारण है। मुसलमान लोग धर्मके विषयमें एक दूसरेके बराबर होते हैं, इसलिए एकताका जैसा बन्धन उन लोगोंमें है, वैसा हिन्दुओंमें नहीं है और हो भी नहीं सकता। और जब जाति-भेद दूर करनेका कोई उपाय नहीं है, यहाँतक कि गाँवोंमें उसका प्रसंग छेड़ना भी एक प्रकारसे असम्भव है, तब उनके आपसके

लड़ाई-झगड़े घटाकर उनमें मेल और प्रेम स्थापित करनेका प्रयत्न भी व्यर्थका परिश्रम है। इधर कुछ बरसोंसे वे अपने गाँवमें इस कामके लिए जो व्यर्थ प्रयत्न कर रहे थे, उसके लिए उन्हें बहुत अधिक पछतावा होने लगा। उन्हें निश्चित रूपसे यह विश्वास हो गया कि इन लोगोंने हमेशासे इसी तरह खाँव खाँव करते दिन बताये हैं और आगे भी इसी तरह बितानेके लिए विवश हैं। इन लोगोंका कभी किसी तरहसे भला नहीं हो सकता। लेकिन फिर भी उन्होंने सोचा कि यह बात पक्की तो कर लेनी चाहिए। कई कारणोंसे इधर कुछ दिनोंसे ताईजीके साथ उनकी भेंट नहीं हुई थी। उस दिनकी मार-पीटके बाद एक तरहसे जान बूझकर ही वे उस ओर नहीं गये थे। आज तड़के ही उठकर वह सीधे उनके दरवाजेपर पहुँचे। ताईजीकी बुद्धिमत्ता और अभिज्ञतापर उनको इतना अधिक विश्वास है, इस बातको वे स्वयं भी नहीं जानते थे। रमेशने कुछ आश्चर्यसे देखा कि ताईजी इतने सवेरे ही स्नान आदि करके सब कामोंसे छुट्टी पा चुकी हैं और उस अस्पष्ट प्रकाशमें भी अपनी कोठरीमें जमीनपर बैठीं आँखोंपर चश्मा लगाये एक किताब पढ रही हैं। ताईजी भी कम विस्मित नहीं हुईं। उन्होंने किताब बन्द कर दी, रमेशको आदरपूर्वक अन्दर बुलाकर बैठाया और मुँहकी ओर देखकर पूछा—अरे, आज इतने सवेरे?

रमेशने कहा—ताईजी इधर बहुत दिनोंसे मैंने तुम्हें देखा नहीं था। मैं पीरपुरमें एक स्कूल खोल रहा हूँ।

विश्वेश्वरीने कहा—हाँ, मैंने भी सुना है। लेकिन आज-कल हम लोगोंके स्कूलमें पढ़ाने क्यों नहीं जाते?

रमेशने कहा—ताईजी मैं वही तो बतलानेके लिए आया हूँ। इन लोगोंके कल्याणकी चेष्टा करना बिलकुल व्यर्थ है। जो कभी किसीकी भलाई नहीं देख सकते और जिनमें अभिमान और अहंकार इतना अधिक है, उन लोगोंके लिए परिश्रम करके जान देनेसे कुछ भी लाभ नहीं है। उलटे ये लोग और भी दुश्मन हो जाते हैं। अब तो जिन लोगोंकी भलाई करनेमें सचमुच कुछ भलाई हो सकती है, मैं उन्हींके लिए परिश्रम करूँगा।

ताईजीने कहा—यह बात तो कोई नई नहीं है रमेश। इस संसारमें भलाई करनेका भार जिस किसीने अपने ऊपर लिया है, उसके शत्रुओंकी संख्या सदा ही बढ़ती रही है। केवल इसी भयसे जो लोग पीछे हट जाते हैं, अगर उन्हीं लोगोंके दलमें तुम भी जाकर मिल जाओगे, तो बेटा, कैसे काम चलेगा?

भगवानने यह भारी भार तुम्हीको दिया है और तुम्हीको इसे अपने सिरपर उठाना होगा। और क्यों रमेश, क्या तुम उन लोगोंके हाथका पानी पीते हो?

रमेशने हँसते हुए कहा—देख लो ताईजी, इतनेमें ही यह बात तुम्हारे कानों तक आ पहुँची न! अब तक तो मैंने उन लोगोंके हाथका पानी नहीं पीया है, लेकिन, पीनेमें कोई दोष भी नहीं समझता। मैं जाति-भेद नहीं मानता।

ताईजीने चकित होकर पूछा—जाति-भेद नहीं मानते? यह क्या कोई झूठी बात है? या जाति-भेद है नहीं, जो तुम नहीं मानोगे?

रमेशने कहा—ताईजी, ठीक यही बात पूछनेके लिए मैं आज तुम्हारे पास आया हूँ। यह मानता हूँ कि जाति-भेद है, पर यह नहीं मानता कि वह अच्छा है।

"क्यों?"

रमेशने सहसा कुछ उत्तेजित होकर कहा—क्या यह भी तुम्हें बतलाना पड़ेगा? क्या तुम नहीं जानतीं कि इसीके कारण यह सारा मनोमालिन्य और सारे लड़ाई-झगडे होते हैं? समाजमें जिन लोगोंको छोटी जातिका बनाकर रखा गया है, उनके लिए यह बिलकुल स्वाभाविक है कि वे बड़ी जातिवालोंसे ईर्ष्या करें, अपने छोटे होनेके विरुद्ध विद्रोह करें और अपनी नीचतासे मुक्त होना चाहें। हिन्दू लोग संग्रह करना नहीं जानते, जानते हैं केवल अपचय करना,—गँवाना। अपने आपकी और अपनी जातिकी रक्षा करने और उसे बढ़ानेका जो एक सासारिक नियम है, हम लोग उसे स्वीकृत ही नहीं करते, और इसीलिए दिनपर दिन क्षय होते जा रहे हैं। यह जो मनुष्य-गणना हुआ करती है, यदि उसका फलाफल एक बार पढ़ लेतीं ताईजी, तो तुम डर जातीं। और तुम्हें पता चल जाता कि मनुष्यको छोटा मानकर उसका जो अपमान किया जाता है, हाथों-हाथ उसका कैसा बदला हम लोगोको मिल रहा है! तुम्हें मालूम हो जाता कि किस प्रकार हिन्दू दिनपर दिन कम होते जा रहे हैं और मुसलमानोंकी संख्या किस प्रकार बढती चली जा रही है। लेकिन इतनेपर भी हिन्दुओंको होश नहीं होता।

विश्वेश्वरीने हँसकर कहा—रमेश, तुम्हारी इतनी बातें सुनकर अब भी तो मुझे होश नहीं होता। जो लोग तुम्हारे आदमियोंको गिनते फिरते हैं, वे यदि गिनकर बतला सकें कि छोटी जातिके इतने आदमी सिर्फ इसी भयसे अपनी जाति और धर्म छोड बैठे हैं कि लोग उन्हें छोटी जातिका समझते हैं तो

शायद मुझे होश हो जाय। मैं यह मानती हूँ कि हिन्दू दिन-पर-दिन कम होते जा रहे हैं; लेकिन इसका कारण कुछ और ही है। वह भी समाजका दोष अवश्य है; लेकिन छोटी जातिके लोगोंका अपनी जाति छोड़छाड देना उसका कारण नहीं है। कोई हिन्दू कभी सिर्फ इसलिए अपनी जाति और धर्म नहीं गॅवाता कि लोग उसे छोटी जातिका समझते हैं।

रमेशने सन्दिग्ध भावसे कहा—लेकिन ताईजी, पंडित लोग तो यही अनुमान करते हैं।

ताईजीने कहा—भइया, अनुमानके विरुद्ध तो कोई तर्क चल नहीं सकता। लेकिन अगर कोई यह बतला सके कि अमुक गॉवके इतने आदमियोंने इस साल सिर्फ इसी लिए अपना धर्म और जाति छोड दी है कि लोग उन्हें छोटी जातिका समझते थे, तो शायद पण्डितोंकी बात मानी जा सके। लेकिन मैं निश्चयपूर्वक जानती हूँ कि कोई यह नहीं बतला सकता।

रमेशने फिर भी तर्क करते हुए कहा—लेकिन ताईजी, यह बात तो मुझे बिलकुल ठीक मालूम होती है कि जो लोग छोटी जातिके हैं, वे बड़ी या ऊँची जातिके लोगोंके साथ अवश्य ईर्ष्या करेंगे।

रमेशकी इस तीव्र उत्तेजनापूर्ण बातपर विश्वेश्वरी फिर हँस पड़ीं और बोलीं —ठीक नहीं है, जरा भी ठीक नहीं है। भइया, यह तुम लोगोंका शहर नहीं है। गाँव-देहातमें कोई इस बातकी फिकर नहीं करता कि यह छोटी जातिका है और वह ऊँची जातिका। जिस तरह छोटे भाईके मनमें बड़े भाईके प्रति ईर्ष्या नहीं और इस बातके लिए उसके मनमे कोई क्षोभ नहीं होता कि मेरा जन्म बड़े भाईसे साल दो साल बाद क्यों हुआ, उसी तरह गाँव-देहातके लोगोंका भी हाल है। यहाँ कायस्थोंको इस बातका जरा भी दुःख नहीं होता कि हम ब्राह्मण नहीं हुए; और कैवर्त्त (कहार) भी कायस्थके समान होनेकी कोई चेष्टा नहीं करते। जिस प्रकार बड़े भाईको प्रणाम करनेमें छोटे भाईको कोई लज्जा नहीं होती, उसी प्रकार कायस्थ भी ब्राह्मणोंके चरणोंकी धूल लेनेमें तनिक भी कुण्ठित नहीं होते। बेटा, यह जाति-भेद इस ईर्ष्या-द्वेषका कारण नहीं है, कमसे कम बंगालियोंकी जो मेरु-दंड है, उस देहातमें तो नहीं।

रमेशने मन ही मन आश्चर्य करके कहा—तो फिर ताईजी, ऐसा क्यों होता है? उस गॉवमें मुसलमानोंके इतने घर हैं, उनमें तो इस तरहके लड़ाई-झगड़े नहीं होते। वहाँ तो जब किसीके ऊपर कोई विपत्ति आती है,

तब उसे कोई यहाँवालोंकी तरह घर दबाना नहीं चाहता। यह तो तुम जानती ही हो कि उस दिन द्वारिका पंडितका मृत शरीर कोई छूनेतकके लिए नहीं गया, क्योंकि उनका प्रायश्चित्त नहीं हुआ था।

विश्वेश्वरीने कहा—हाँ बेटा, जानती हूँ, सब जानती हूँ। लेकिन उसका कारण जाति-भेद नहीं है। कारण यही है कि मुसलमानोंमें अब भी सचमुचका धर्म है, और हम लोगोंमें वह नहीं है। जिसे वास्तवमें धर्म कहते हैं, वह गाँव-देहातमेंसे बिलकुल लुप्त हो गया है। रह गये हैं सिर्फ कितने ही आचार-विचार और कुसंस्कार, और उनसे होनेवाली दलबन्दियाँ।

रमेशने हताश भावसे एक निःश्वास डालकर कहा—ताईजी, क्या इसके प्रतिकारका कोई उपाय नहीं है?

विश्वेश्वरीने कहा—है क्यों नहीं बेटा? इसका प्रतिकार केवल ज्ञानसे ही हो सकता है। जिस रास्तेपर तुमने पैर रखा है, सिर्फ वही एक रास्ता है। इसीलिए तो मैं तुमसे बराबर कहती हूँ कि तुम अपनी इस जन्म-भूमिको किसी तरह भी छोड़कर न जाना।

इसके उत्तरमें रमेश कुछ कहना ही चाहते थे कि विश्वेश्वरीने उन्हें बीचमें ही रोककर कहा—तुम कहोगे कि मुसलमानोंमें भी तो अज्ञान बहुत अधिक है। जरूर है, लेकिन उन लोगोंके सजीव धर्मने उन्हें सब तरफसे बचा रखा है। रमेश, मैं एक बात कहती हूँ। पीरपुर गाँवमें ही तुम पता लगाओगे तो तुम्हें मालूम हो जायगा कि वहाँ जाफर नामका एक बड़ा आदमी है जिसे सब लोगोंने मिलकर जातिसे बाहर कर रखा है, क्योंकि, वह अपनी विधवा सौतेली माँको खानेको नहीं देता। लेकिन हमारे इन गोविन्द गाँगूलीने अपनी विधवा बड़ी भोजाईको उस दिन अपने हाथसे मारते मारते अधमरा कर दिया, लेकिन समाजकी तरफसे उन्हें उसका दण्ड मिलना तो चूल्हेमें गया, वह आप ही समाजके सिरपर चढे मुखिया बने बैठे हैं। हम लोगोंमें इस प्रकारके सब अपराध केवल व्यक्तिगत पाप-पुण्य मान लिये गये हैं। इनकी सजा भगवान अगर चाहेंगे तो देंगे और न चाहेंगे तो न देंगे, पर हमारा ग्रामीण समाज उनकी तरफ भ्रूक्षेप भी नहीं करेगा।

यह नई बात सुनकर एक ओर तो रमेश अवाक् हो गये पर दूसरी ओर उनका मन इसे ही स्थिर सत्यके रूपमें ग्रहण करनेमें संकोच करने लगा। विश्वेश्वरीने उनके मनका भाव समझकर कहा—बेटा, तुम फलको ही उपाय

समझकर भूल मत कर बैठना ! जिस कारण तुम्हारे मनका सन्देह दूर नहीं होना चाहता, उस जातिकी छोटाई-बड़ाईको लेकर झगड़ा करना उन्नतिका एक लक्षण मात्र है—कारण नहीं। तुम अगर यह समझकर कि सबसे पहले उसके हुए बिना काम न चलेगा, इसीके लिए प्रयत्न करने जाओगे तो उससे दोनों ही तरफ खराबी होगी। अगर इस बातकी जाँच करना चाहते हो कि मेरा कहना ठीक है या नहीं, तो तुम किसी शहरके आसपासके दो-चार गाँवोंमें घूम आओ और फिर उन गाँवोंके साथ अपने कुआँपुर गाँवकी तुलना कर देखो। तुम्हे आप ही सब बातें मालूम हो जायँगी।

कलकत्तेके बहुत पासके एकाध गाँवके साथ रमेशका घनिष्ठ परिचय था। उस गाँवके स्थूल रूपको मन ही मन देख लेनेकी चेष्टा करते ही मानों अकस्मात् उनकी आँखोंके ऊपरसे एक काला परदा हट गया। वे गम्भीर सम्भ्रम तथा विस्मयसे विश्वेश्वरीके मुखकी ओर देखने लगे। लेकिन वे उस ओर कुछ भी खयाल न करके अपनी बातका सिलसिला जारी रखते हुए धीरे-धीरे कहने लगीं—बेटा, इसीलिए मैं तुमसे बार बार कहती हूँ कि तुम अपनी जन्मभूमिको छोड़कर न जाना। तुम्हारी तरह बाहर रहकर जो लोग बड़े हो गये हैं, वे यदि तुम्हारी ही तरह गाँवमें लौट आते, गाँवोंके साथ सारा सम्बन्ध तोड़कर चले न जाते, तो उनकी यह दुर्दशा न होने पाती। वे कभी गोविन्द गाँगूलीको सिरपर उठाकर तुम्हें दूर कर देनेका प्रयत्न न करते।

अब रमेशको रमाकी बात याद आई। इसलिए उन्होंने फिर रूठनेके स्वरमें कहा—ताईजी, दूर चले जानेमें मुझे भी दुःख नहीं है।

विश्वेश्वरीका ध्यान उसके इस स्वरपर तो अवश्य गया, परन्तु वे कारण नहीं समझीं। बोलीं—नहीं रमेश, ऐसा किसी तरह नहीं हो सकेगा। जब तुम यहाँ आ गये हो और काम शुरू कर दिया है, तब अगर उसे बीचमें ही छोड़ दोगे, तो तुम्हारी जन्म-भूमि तुम्हे इसके लिए कभी क्षमा नहीं करेगी।

"क्यों ताईजी, जन्म-भूमि मेरे अकेलेकी ही तो नहीं है?"

ताईजीने उद्दीप्त होकर कहा—तुम्हारी अकेलेकी क्या बेटा, यह केवल तुम्हारी ही माता है। देखते नहीं हो कि माँ अपनी जबानसे कभी अपनी सन्तानसे कुछ नहीं माँगती। इसीलिए इतने लोगोंके रहते हुए भी उसका रोना किसीके कानों तक न पहुँच सका। लेकिन तुमने तो उसे यहाँ आते ही सुन लिया।

रमेशने फिर और कोई तर्क नहीं किया। वे थोड़ी देर तक शान्त भावसे बैठे रहे और तब चुपचाप अत्यन्त श्रद्धाके भावसे विश्वेश्वरीके चरणोंकी धूल अपने मस्तकसे लगाकर धीरे धीरे वहाँसे बाहर निकल आये।

भक्ति, करुणा और कर्त्तव्यकी एकान्त निष्ठासे हृदय परिपूर्ण करके रमेश अपने घर आये। उस समय सूर्योदय हो ही रहा था। उनकी कोठरीमें पूरबकी तरफ जो खिड़की थी, वह खुली हुई थी। उसीके सामने खड़े होकर वे स्तब्ध आकाशकी ओर देख रहे थे। सहसा शिशुकण्ठके आह्वानसे चौंक कर उन्होंने मुँह फिराते ही देखा कि रमाका छोटा भाई यतीन्द्र दरवाजेके बाहर खडा होकर पुकार रहा है 'छोटे भइया। छोटे भइया!' और लज्जासे उसका चेहरा लाल हो रहा है।

रमेशने पास जाकर हाथ पकड लिया और उसे अन्दर लाकर पूछा—यतीन्द्र, तुम किसे पुकारते थे?

"आपको।"

"मुझे? मुझे 'छोटे भइया' कहकर पुकारनेके लिए तुमसे किसने कहा?"

"बहनने।"

"बहनने? क्या उन्होंने तुम्हें मुझसे कुछ कहनेके लिए भेजा है?"

"यतीन्द्रने सिर हिलाकर कहा—नहीं बहनने कहा कि मुझे अपने साथ छोटे भइयाके यहाँ ले चलो। वह वहाँ खड़ी हैं।

यह कहकर यतीन्द्रने दरवाजेकी तरफ दिखा गया। रमेशने विस्मित और व्यस्त होकर देखा कि रमा एक खम्भेकी आड़में खड़ी है। उसके पास पहुँचकर उन्होंने विनयपूर्वक कहा—आज मेरा बडा सौभाग्य है। लेकिन तुमने मुझे ही क्यों न बुला भेजा और आप ही यहाँ तक आनेका कष्ट क्यों किया? आओ, अन्दर आओ।

रमाने पहले तो कुछ इधर उधर-किया और तब यतीन्द्रका हाथ पकड़कर वह रमेशके पीछे पीछे चलकर उनके कमरेकी चौखटके पास बैठ गई। फिर कहा—आज मैं एक चीजकी भिक्षा माँगनेके लिए आपके घर आई हूँ। कहिए, देंगे?

यह कहकर वह रमेशके मुखकी ओर स्थिर दृष्टिसे देखने लगी। उस दृष्टिसे रमेशके परिपूर्ण हृदयके सातों स्वर मानों अकस्मात् ही उन्मत्त होकर बज उठे और फिर एक ही बारमें टूट कर झड पड़े। कुछ ही क्षण पहले उनके मनमें

जो सब संकल्प, आशाएँ और आकांक्षाएँ अपूर्व दीप्तिसे नाचती फिरती थीं, वे सब एक दमसे बुझ गईं और अन्धकार छा गया। फिर भी पूछा—बतलाओ, क्या चाहती हो?

उनकी वह स्वाभाविक शुष्कता रमाकी दृष्टिसे छिपी न रही। उसने उनके मुखपर वैसे ही दृष्टि जमाये हुए कहा—आप पहले वचन दें।

रमेशने कुछ देर तक चुप रहनेके बाद सिर हिलाकर कहा—सो तो नहीं दे सकता। रमा, मुझमें तुमसे बिना कोई प्रश्न किये ही वचन देनेकी जो शक्ति थी, उसे तुमने अपने हाथोंसे नष्ट कर दिया है।

रमाने चकित होकर पूछा—मैंने?

रमेशने कहा—हाँ, वह शक्ति तुम्हें छोड़कर और किसीमें नहीं थी रमा। आज मैं तुमसे एक सत्य बात कहूँगा। तुम्हारा जी चाहे तो उसपर विश्वास करो, न जी चाहे मत करो। लेकिन अगर वह चीज मरकर बिलकुल निःशेष न हो गई होती, तो शायद मैं कभी तुम्हें यह बात न सुना सकता।

फिर कुछ देर तक चुप रहकर कहा—आज यह बात बतला देनेमें मेरे या तुम्हारे हानि-लाभकी जरा भी सम्भावना नहीं है; इसीलिए आज बतला रहा हूँ कि उस दिन तक मेरे पास कोई ऐसी चीज नहीं थी जो मैं तुम्हें न दे सकता। लेकिन तुम जानती हो क्यों?

रमाने सिर हिलाकर कह तो दिया कि, "नहीं।" लेकिन उसका अंतःकरण किसी लज्जाजनक आशंकासे कण्टकित हो उठा।

रमेशने कहा—लेकिन, सुनकर नाराज मत होना और लज्जित भी मत होना। तुम यही समझ लेना कि बहुत पुराने जमानेकी कोई कहानी सुन रही हो।

रमाने बीचमें ही रोकनेके लिए मन ही मन बहुत इच्छा की, लेकिन उसका सिर इस प्रकार झुक गया कि वह उसे उठाकर किसी तरह सीधा न कर सकी।

रमेशने फिर उसी प्रकार शान्त, कोमल और निर्लिप्त स्वरसे कहा—रमा, मैं तुम्हें प्यार करता था। आज ऐसा जान पड़ता है कि वैसा प्यार शायद कभी किसीने किसीको नहीं किया। लड़कपनमें मैं अपनी माँके मुँहसे सुना करता था कि हम लोगोंका ब्याह होगा। इसके बाद जिस दिन मेरी सारी आशा भंग हो गई, उस दिन मैं रो पड़ा था। उसकी याद मुझे आज भी हो आती है।

ये सब बातें पिघले और जलते हुए सीसेकी तरह रमाके दोनों कानोंमें प्रवेश करके जला डालने लगीं और नितान्त अपरिचित अनुभूतिकी असह्य तीव्र वेदना उसकी छातीको एक सिरेसे लेकर दूसरे सिरे तक काटकर टुकड़े टुकड़े करने लगी। लेकिन रोकनेका कोई उपाय भी उसे ढूँढे नहीं मिला; इसलिए वह नितान्त निरुपाय पत्थरकी मूरतकी तरह स्तब्ध होकर बैठी रही और रमेशकी विषाक्त मधुर बातें एक एक करके सुनने लगी। रमेश कहने लगे—तुम सोच रही हो कि तुम्हें यह सारी कहानी सुनाना अन्याय है। मेरे मनमें भी पहले यही सन्देह था; और इसीलिए उस दिन तारकेश्वरमें जब तुम्हारे केवल एक दिनके आदर-यत्नसे मेरे समस्त जीवनकी धारा बदल गई, तब भी मैं चुप रहा। लेकिन मेरे लिए वह चुप रहना सहज नहीं था।

अब रमासे किसी प्रकार सहन न हो सका। उसने कहा—तो फिर आज ही आप मुझे अपने मकानमें पाकर इस प्रकार अपमान क्यों कर रहे हैं?

रमेशने कहा—अपमान! बिलकुल नहीं। इसमें मान और अपमानकी कोई बात नहीं हैं। जिन लोगोंकी ये बातें है, उनमेंकी रमा भी तुम कभी नहीं थीं; और वह रमेश भी अब नहीं रहा। जो हो, सुनो। उस दिन जाने क्यों मुझे यह दृढ़ विश्वास हो गया था कि तुम चाहे जो कहो, चाहे जो करो; पर मेरा अमंगल किसी प्रकार सहन न कर सकोगी। मालूम होता है तब सोचा था कि उस लड़कपनमें एक दिन तुमने जो प्यार किया था, उसे शायद अब बिल्कुल भूल नहीं सकी होगी। इसीलिए सोचा था कि मैं कोई बात तुम्हे न बतलाकर तुम्हारी ही छायामें रहकर अपने समस्त जीवनके काम धीरे धीरे किये जाऊँगा। पर इसके बाद उस रोज रातको जब मैंने स्वयं अकबरके मुँहसे यह सुना कि तुमने स्वयं—। अरे, बाहर इतना हो-हल्ला काहेका हो रहा है?

इतनेमें बाहरसे गोपाल सरकारने बहुत ही घबराहटमें कहा—बाबूजी!

आवाज सुनते ही रमेश बाहर निकल आये।—बाबूजी, पुलिसवालोंने भजुआको गिरिफ्तार कर लिया है।

मारे भयके गोपाल सरकारके होठ काँप रहे थे। उसने जैसे तैसे कहा—परसों रातको राधानगरकी डकैतीमें वह शामिल बतलाया जाता है।

रमेशने कमरेकी तरफ देखकर कहा—रमा, अब तुम यहाँ एक क्षण भी मत ठहरो। खिड़कीके रास्तेसे बाहर चली जाओ। पुलिस बिना मकानकी तलाशी लिये न छोड़ेगी।

रमाका चेहरा नीला पड गया। उसने खड़े होकर कहा—तुम्हारे लिए तो कोई डरकी बात नहीं है न ?

रमेशने कहा—कह नहीं सकता। यह भी नहीं जानता कि मामला क्या है और कहाँ तक पहुँच गया है।

रमाके होंठ काँपने लगे। उसे याद आ गया कि उस दिन मैंने ही थानेमें इत्तला कराई थी। इसके बाद ही वह अचानक रोने लगी और बोली—मैं नहीं जाऊँगी !

रमेशने कुछ समय तक विस्मयसे अवाक् रहकर कहा—नहीं नहीं, रमा, तुम्हें अब यहाँ नहीं रहना चाहिए। यहाँसे जल्दी ही चली जाओ।

इतना कहकर रमाकी कोई बात सुने बिना ही यतीन्द्रका हाथ पकड़कर उन्होंने जबर्दस्ती दोनों भाई-बहनको खिड़कीके रास्ते बाहर करके दरवाजा बन्द कर दिया।

१३

दो महीने होने आये, कई डाकुओंके साथ भजुआ भी हवालतमें बन्द है। उस दिन तलाशीमें रमेशके घरसे कोई सन्देहजनक चीज नहीं मिली। भैरव आचार्यने गवाही दी कि उस रोज रातको भजुआ मेरे साथ मेरी लड़कीके लिए वर देखने गया था। लेकिन फिर भी भजुआ जमानतपर नहीं छोड़ा गया। वेणीने आकर कहा—बहन रमा, बहुतसे दाव-पेंच सोचकर काम करना होता है। नहीं तो क्या शत्रुको सहजमें नीचा दिखाया जा सकता है ! उस दिन अपने मालिकके हुकुमसे भजुआ जो लाठी हाथमें लेकर मछलीका हिस्सा लेनेके लिए घरपर चढ़ आया था उसकी रिपोर्ट अगर तुम थानेमें न लिखा चुकी होतीं तो क्या आज वह साला इस तरह हवालातमें बन्द कराया जा सकता ? और बहन, अगर तुम साथ साथ दो-चार बातें और बढ़ाकर रमेशका नाम भी शामिल कर देतीं, तब फिर देखतीं तमाशा ! लेकिन उस समय तो तुमने मेरी कोई बात ही नहीं सुनी !

रमाका चेहरा इतना म्लान हो गया कि वेणी उसे लक्ष्य करके बोला—नहीं नहीं, तुम्हें गवाही देने नहीं जाना पड़ेगा। और फिर अगर मान लो कि जाना भी पड़े तो इसमें हर्ज ही क्या है ! जमींदारी रखकर तो फिर किसी बातसे पीछे हटनेसे काम चलता नहीं।

रमाने कोई उत्तर नहीं दिया।

वेणी कहने लगे—लेकिन रमेश तो सहजमें काबूमें आ नहीं सकता। इस बार उसने भी कम चाल नहीं चली है। उसने जो यह नया स्कूल खोला है, उसके कारण हम लोगोंको बहुत कष्ट भोगना पड़ेगा। एक तो यों ही मुसलमान प्रजा हम लोगोंको अपना जमींदार नहीं मानना चाहती। तिसपर यदि वह लोग लिखना पढना सीख गये तो फिर जमींदारीका रहना न रहना दोनों बराबर समझ लो। यह बात मैं तुम्हें अभीसे बतलाये रखता हूँ।

जमीदारीके सब काम रमा वेणीके ही परामर्शके अनुसार करती थी। इस विषयमें दोनोंमें आज तक कभी मत-भेद नहीं हुआ। लेकिन आज पहले-पहल रमाने तर्क किया। उसने कहा—इससे स्वयं रमेश भइयाकी भी तो कुछ कम हानि नहीं होगी?

स्वयं वेणीको भी इस विषयमें कुछ कम खटका नहीं था। उन्होंने जो कुछ सोच-विचार कर स्थिर किया था वही इस समय वह बतलाने लगे। उन्होंने कहा—रमा, तुम ये सब बातें क्या जानो। उसके लिए तो यह अपनी हानिकी चिन्ता करनेका विषय ही नहीं। हम दोनों आदमी परेशान हुए कि बस वह खुश है। देख नहीं रही हो कि जबसे आया है, तबसे किस तरह रुपये लुटा रहा है। चारों तरफ़ छोटी जातिके लोगोंमें 'छोटे बाबू' के नामका शोर मच गया है। मानों वही एक आदमी है और हम दोनों कोई चीज ही नहीं हैं। लेकिन यह बहुत दिनों तक नहीं चलेगा। बहन, यह जो तुमने उसे पुलिसकी निगाहपर चढ़ा दिया है, सो इसीसे वह अन्तमें समाप्त हो जायगा, यह मैं बतलाये देता हूँ।

वेणीने मन ही मन बहुत ही विस्मित होकर देखा कि इस संवादसे रमाके मनमें जो उत्साह और उत्तेजना उत्पन्न होनी चाहिए उसका कहीं नाम भी नहीं है। बल्कि उन्हें मालूम हुआ कि अचानक रमाके चेहरेका रंग एकदम बदल गया है। रमाने पूछा—क्या रमेश भइयाको यह बात मालूम हो गई है कि मैंने थानेमें इत्तला कराई थी?

वेणीने कहा—ठीक तो नहीं जानता; लेकिन आखिर तो उसे इस बातका पता लग ही जायगा। भजुआके मुकदमेमें सभी बातें खुलेंगी।

इसपर रमाने और कुछ नहीं कहा। वह चुपचाप मन ही मन मानों किसी बहुत बड़े आघातसे अपने आपको सँभालनेका प्रयत्न करने लगी। रह रहकर

उसके मनमें यही आने लगा कि यह बात रमेशसे छिपी न रहेगी कि उन्हें विपत्तिमें डालनेवालोंमें मैं ही सबसे आगे हूँ। कुछ देर बाद उसने सिर उठाकर पूछा— क्यों बड़े भइया, आज-कल तो उनका नाम सभी लोगोंके मुँहसे सुनाई पड़ता है?

वेणीने कहा—सिर्फ हमारे ही गॉवमे नहीं, बल्कि, सुना है कि इसकी देखा-देखी और पॉच छः गाँवोमे भी स्कूल खोलने और रास्ते बनानेकी तैयारियॉ हो रही हैं। आज कल छोटी जातिके सभी लोग कह रहे हैं कि साहब लोगोंके देशमें हर एक गाँवमें एक-दो स्कूल होते हैं और इसीसे उन लोगोंकी इतनी उन्नति है। रमेशने चारो तरफ यह बात फैला दी है कि जिस जगह नया स्कूल खुलेगा, उस जगहके लिए मैं दो सौ रुपये दूँगा। चाचाजीसे जितने रुपये मिले हैं, वे सब वह इन्हीं कामोंमे खर्च कर डालेगा। मुसलमान तो उसे कोई पीर-पैगम्बर समझ बैठे हैं।

रमाकी छातीके भीतरसे यह बात एक बिजली-सी चमककर निकल गई कि अगर इसके साथ मेरा नाम भी शामिल होकर रह सकता! लेकिन केवल क्षण-भरके लिए। दूसरे ही क्षण उसका समस्त अन्तःकरण दूने अन्धकारसे आच्छन्न हो गया। वेणी कहने लगे—लेकिन मैं भी उसे सहजमें नहीं छोड़ूँगा। यह बात कोई स्वप्नमें भी न सोचे कि वह हम लोगोंकी सारी प्रजाको इस तरह सहजमें बिगाड डालेगा और हम जमींदार होकर भी चुपचाप ऑखें और मुँह बन्द करके देखते रहेंगे। यह साला भैरव आचार्य अबकी बार भजुआकी तरफसे गवाही दे आया है। अब वह किस तरह अपनी लड़कीका व्याह करता है, यह मैं देख लूँगा। एक और भी तरकीब है। पर जरा देखूँ कि गोविन्द चाचा क्या कहते हैं। देश-भरमें डाके तो पडते ही रहते हैं। अगर इस बार नौकरको जेल भेज सके, तो फिर किसी मामलेमें उसके मालिकको भी जेल भेजनेमें हम लोगोंको ज्यादा दिक्कत न होगी। रमा, तुमने तो पहले ही दिन कहा था कि दुश्मनी साधनेमें वह भी कमी नहीं करेंगे, लेकिन मैंने नहीं सोचा था कि तुम्हारी वह बात इतनी ठीक उतरेगी।

रमाने कुछ भी उत्तर न दिया। वेणीमें यह समझनेकी शक्ति नहीं थी कि अपनी प्रतिज्ञा और भविष्यद्वाणीको इस प्रकार अक्षरशः ठीक उतरनेकी खबर पाकर भी जिस स्त्रीका मुख अहंकारसे उज्ज्वल नहीं हो उठा, बल्कि घनी कालिमासे आच्छन्न हो गया, उसके मनकी अवस्था क्या होगी। भले ही

शक्ति न हो, फिर भी बात इतनी स्पष्ट थी कि किसीकी दृष्टिसे उसके बचनेकी सम्भावना नहीं थी। वेणीकी दृष्टिसे भी वह छिपी नहीं रही। इसपर उन्हें मन ही मन कुछ आश्चर्य भी हुआ। उन्होंने रसोई-घरमें जाकर मौसीसे भी दो-चार बातें कीं और जब वे अपने घर जा रहे थे तब रमाने हाथके इशारेसे अपने पास बुलाकर कोमल स्वरसे कहा—क्यों बड़े भइया, अगर छोटे भइया जेल चले जायँ, तो क्या यह हम लोगोंके लिए कलंककी बात न होगी?

वेणीने और भी अधिक आश्चर्यसे पूछा—क्यों?

"वे अपने आत्मीय जो हैं। अगर हम लोग न बचावेंगे तो दुनिया हम ही लोगोंके नामपर 'थू थू' न करेगी?"

"जो जैसा करेगा, वह उसका वैसा फल भोगेगा। हम लोगोंका उसमें क्या?"

रमाने फिर पहलेकी ही तरह कोमल स्वरसे कहा—लेकिन यह बात किसीसे छिपी तो रहेगी नहीं कि रमेश भइया सचमुच तो कहीं डाका डालते फिरते नहीं हैं। वह तो दूसरोंकी भलाईके लिए ही अपना सर्वस्व लगा रहे हैं। इसके सिवाय हम लोगोंको भी तो गाँवमें सब लोगोंके सामने अपना मुँह दिखलाना होगा।

वेणीने हीः हीः करके और खूब हँसकर कहा—बहन, आखिर आज तुम्हें हो क्या गया है!

रमाने एक बार मन ही मन इस आदमीके साथ रमेशके मुखका मिलान किया और फिर मानों वह सीधी तरहसे सिर ही न उठा सकी। उसने कहा—गाँवके लोग चाहे डरके मारे मुँहपर कुछ भी न कहें, पर पीठ पीछे तो कहेंगे ही। तुम कहोगे कि पीठ पीछे तो लोग राजाकी माँको भी डाइन कहते हैं, लेकिन भगवान भी तो हैं! यदि किसी निरपराधको झूठमूठ दण्ड दिलाया जायगा, तो वे तो हमें न छोड़ेंगे!

वेणीने बनावटी क्षोभ प्रकट करते हुए कहा—हायरे मेरा भाग्य! भला यह लौंडा ईश्वर या देवताको कुछ मानता भी है? शीतलाजीका मन्दिर गिर रहा है। उसकी मरम्मत करा देनेके लिए आदमी भेजा तो उसने उसे यह कहकर भगा दिया कि जिन लोगोंने तुम्हें भेजा है, उनसे जाकर कह दो कि फजूलके कामोंमें खरच करनेके लिए मेरे पास रुपया नहीं है। सुनी उसकी बात! यह उसके निकट फजूलका खरच था! और कामका खरच है मुसलमानोंके लिए स्कूल खोलना! और फिर ब्राह्मणका लड़का होकर भी सन्ध्या-वन्दन आदि कुछ नहीं करता। सुना है कि मुसलमानोंके हाथका पानी तक

पीता है ! चार पन्ने अँगरेजीके पढ़ लेनेसे अब क्या उसका कोई धर्म या जाति रह गई है बहन, बिल्कुल नहीं ! पर उसकी सजा गई कहाँ है, सब जमा हो रही है और यह एक दिन सब ही देखेंगे।

रमा और अधिक वाद-विवाद न करके चुप अवश्य हो रही परंतु रमेशके अनाचारकी और ईश्वर या देवताके प्रति अश्रद्धाकी बात स्मरण करके उसका मन फिर उनकी तरफसे विमुख हो उठा। वेणी अपने आप कुछ कहते कहते वहाँसे चल दिये। रमा पहले तो कुछ देर तक वैसी ही खड़ी रही और फिर अपनी कोठरीमें जाकर धमसे जमीनपर बैठ गई। उस दिन उसकी एकादशी थी। आज खाने-पीनेकी झंझट नहीं है, यह सोचकर उसे मानों बड़ी शान्ति हुई।

१४

बरसात बीत चुकी। आगामी दुर्गा-पूजाका आनन्द और मलेरियाका भय बंगालकी ग्राम्य जननीके आकाशमें, वायुमें और आलोकमें आ-कर झाँकने लगा। रमेशको भी बुखार आने लगा। पिछले साल तो वह इस राक्षसके आक्रमणकी उपेक्षा कर गये थे; पर इस साल न कर सके। लगातार तीन दिन तक बुखारमें पड़े रहनेके बाद आज वे सवेरे ही उठे और बहुत-सी कुनैन निगलकर खिड़कीके बाहरकी पीली धूपकी तरफ देखते हुए सोचने लगे कि गाँवके आसपास जो पानीके अनावश्यक गड्ढे भरे हैं और व्यर्थका झाड़ झंखाड़ जमा हो रहा है, इसके विरुद्ध गाँववालोंको सचेत किया जा सकता है या नहीं। इधर लगातार तीन दिन तक बुखारमें पड़े रहनेसे उनकी समझमें अच्छी तरह आ गया था कि इसके लिए कुछ न कुछ करना ही पड़ेगा। वह सोचते थे कि अगर मैं मनुष्य होकर भी चुपचाप बैठा रहूँगा और लोगोंको इसी तरह हर साल महीनों तक मलेरियाकी पीड़ा भोगने दूँगा तो भगवान इसके लिए मुझे क्षमा नहीं करेंगे। कई दिन पहले इस संबंधमें गाँववालोंके साथ बातचीत करके उन्होंने समझ लिया था कि गाँववाले भी इससे होनेवाली भीषण हानि और अपकारितासे बहुत कुछ परिचित हैं। लेकिन दूसरोंके गढ़े पाटने और झाड़-झंखाड़ काटनेके लिए कोई तैयार नहीं होता। इसे वे 'घरका खाकर वनके भैंसे भगाना' समझते हैं। जिन लोगोंकी अपनी जमीनोंमें गढ़े और झाड़-झंखाड़ थे वे लोग कहते थे कि यह सब हमारा किया हुआ तो है नहीं, यह तो हमारे बाप-दादोंके समयसे चला आ रहा है। इसलिए जिन लोगोंको गरज हो वे

इन गढोंको पाट दें और झाड़-झंखाड साफ कर दें; हमें कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन हम न तो इसके लिए पैसा ही खर्च कर सकते हैं और न परिश्रम ही कर सकते हैं। रमेशको पता लगानेपर मालूम हुआ कि पास ही पास बहुतेक ऐसे गॉव भी हैं जिनमेंसे एक गाँव तो मलेरियाके कारण उजड़ रहा है और उसके पासहीके दूसरे गाँवमें मलेरियाका प्रकोप प्रायः नहींके समान है। इसलिए अब वह सोचने लगे कि जरा तबीयतके सँभलते ही स्वयं अपनी ऑखों ऐसे गाँवोंको जाकर देखूँगा और वहाँकी हालतकी जॉच करूँगा और तब फिर इस सम्बन्धमें अपना कर्तव्य निश्चित करूँगा। उनकी यह निश्चित धारणा हो गई थी कि जिन गाँवोंमें मलेरिया नहीं है, उनमें पानीके निकासका अवश्य ही कोई स्वाभाविक मार्ग होगा। वह मार्ग चाहे यों साधारण रूपमें लोगोंकी दृष्टि अपनी ओर न आकृष्ट करता हो, परन्तु फिर भी यदि चेष्टा करके और लोगोंकी ऑखोंमें उँगली डालकर दिखाया जायगा तो वे अवश्य उसे देख सकेंगे। कमसे कम मेरे अत्यन्त अनुरक्त पीरपुर गॉवकी मुसलमान प्रजाकी ऑखें तो अवश्य ही खुल जायँगी। जब उन्हें इस बातका ध्यान आया कि मेरी इंजीनियरिंगकी शिक्षाका उपयोग इतने दिनों बाद एक बड़े भारी काममें होनेका अच्छा अवसर उपस्थित हुआ है, तब वे मन ही मन बहुत प्रसन्न हुए।

इतनेमें किसीने रोती हुई आवाजसे पुकारा—छोटे बाबू!

रमेश चौंक पड़े। उन्होंने घूमकर देखा तो भैरव आचार्य जमीनपर औंधे पड़े हैं और औरतोंकी तरह फूट फूट कर रो रहे हैं। उनकी सात-आठ बरसकी एक कन्या भी साथ थी। उसने भी बापके साथ मिलकर चीख-पुकारसे सारा घर भर दिया। देखते देखते घरके सभी लोग दरवाजेके पास आकर इकट्ठे हो गये और भीड लग गई। रमेश न जाने कैसे हतबुद्धिसे हो रहे। वे कुछ भी निश्चित न कर सके कि किससे पूछें कि इसका कौन मर गया है या क्या नुकसान हो गया है और किस तरह इसे चुप करावे। गोपाल सरकार भी अपना काम छोडकर दौड़े हुए आ पहुँचे। उन्होंने पास पहुँचकर ज्यो ही भैरवका हाथ पकड़कर जरा-सा खींचा, त्यो ही वह गोपालको दोनो बाँहोंमे जकडकर पहलेसे भी ज्यादा जोर जोरसे रोने लगा। रमेश यह स्मरण करके कि यह आदमी जरामें ही औरतोंकी तरह रोने लगता है, अधीर हो रहे थे कि गोपालकी बहुत-सी ढाढसकी बातोंसे अन्तमें आँखें पोंछकर वह कुछ

प्रकृतिस्थ होकर बैठ गया और अपने इस महाशोकका कारण बतलानेके लिए तैयार हुआ। विवरण सुनकर रमेश स्तब्ध हो गये। वे इस बातकी कल्पना भी न कर सके कि इतना बड़ा अत्याचार भी कभी कहीं हो सकता है। बात यह थी कि जब भैरवके गवाही देनेसे भजुआ छूट आया, तब उसे पुलिसकी स्नेहपूर्ण दृष्टिसे बचानेके लिए रमेशने उसे उसके देश भेज दिया। इस तरह आसामीका तो जैसे तैसे छुटकारा हो गया, पर अब गवाह जालमें फँस गया। जब भैरवको किसी तरह अपनी विपत्तिकी खबर मिली, तब वह कल ही दौड़ा हुआ सदर गया और वहाँ उसे पता लगा कि पाँच-छः दिन हुए, राधानगरके सनत मुकर्जीने, जो वेणीके चचिया ससुर थे, भैरवके नाम सूद और असल सब मिलाकर ग्यारह सौ छब्बीस रुपये सात आनेकी डिगरी करा ली है और अब एक दिनके अन्दर ही उसके रहनेका घर कुर्क करके नीलाम करा लिया जायगा! और यह कोई एक तरफा डिगरी नहीं हुई थी। नियमानुसार इसका सम्मन निकला, किसीने भैरवके नामसे दस्तखत करके वह सम्मन ले लिया और अपने आपको भैरव बतलाकर अदालतके सामने कह देना मंजूर भी कर आया। गरज यह कि कर्ज झूठा, मुद्दालह झूठा और मुद्दई भी झूठा। इस तरह इस सिरसे पैर तक भरे-हुए झूठकी सहायतासे एक सबल आदमीने एक दुर्बल आदमीका सर्वस्व हरण करके उसे दर दरका भिखारी बनानेका उद्योग किया और अब सरकारी अदालतमें इस अत्याचारका प्रतिकार करना भी कुछ सहज नहीं। जबतक डिगरीका सारा रुपया अदालतमें जमा न कर दिया जाय, तब तक वहाँ कोई बात कही ही नहीं जा सकती। अब सिर पटक कर मर जानेपर भी कोई सच बात नहीं सुनेगा। लेकिन दरिद्र भैरव इतने रुपये कहाँसे लावे जो अदालतमें जमा कराके इस महा अन्यायके विरुद्ध न्यायकी प्रार्थना करके अपनी जान-बचावे? तब राज्यके कानून, अदालत, जज, मजिस्ट्रेट आदि सबके सिरपर मौजूद रहते हुए भी एक दरिद्र प्रतिद्वन्द्वको चुपचाप मरना पड़ेगा। और इस बातमें किसीको कुछ भी सन्देह नहीं था कि यह सारी कार्रवाई वेणी और गोविन्द गाँगूलीकी है। इस अत्याचारके कारण भैरवकी चाहे कितनी ही अधिक दुर्गति क्यों न हो जाय और गाँवके सभी लोग अन्दर ही अन्दर इसके लिए चाहे कितनी ही काना-फूँसी क्यों न करते रहें, पर एक आदमी भी ऐसा नहीं निकलेगा जो सिर उठाकर प्रकट रूपसे इसका प्रतिवाद कर सके। कारण, वे लोग न तो

किसीके तीनमें रहते हैं और न किसीके तेरहमें और दूसरोंके मामलेमें कुछ कहना-सुनना उन्हें पसन्द भी नहीं। और चाहे जो हो, पर आज रमेशने निस्सन्देह रूपसे समझ लिया कि दरिद्र प्रजाके ऊपर निःसकोच भावसे अत्याचार करनेका साहस इन लोगोंको कहाँसे प्राप्त होता है और किस प्रकार देशके कानूनको भी ये लोग कसाईकी छुरीकी तरह काममें ला सकते हैं। एक तरफ अर्थ-बल और कूट-बुद्धि उन्हें जिस प्रकार राज्यके दंडसे बचा देती है, उसी प्रकार दूसरी ओर मृत समाज भी उन लोगोंके दुष्कर्मोंके लिए दंडका कोई विधान नहीं करता। इसी लिए ये लोग हजारों अन्याय करके भी सत्य-धर्म-विहीन मृत ग्राम्य समाजके सिरपर पैर रखकर इस प्रकार विना किसी उपद्रवके अपनी इच्छानुसार आचरण करते रहते हैं। आज उन्हे ताईजीकी बातें रह रहकर याद आने लगीं। उस दिन उन्होंने मर्मान्तक हँसी हँसते हुए कहा था—रमेश, चूल्हेमें जायँ जाति-पाँतिके ये विचार और भले-बुरेके झगड़े-टंटे बेटा, तुम केवल दीपक जला दो, केवल दीपक जला दो। गाँवोंके लोग अँधेरेमें अन्धे हो रहे हैं। बेटा, तुम एक बार ऐसा उपाय कर दो कि जिसमें ये लोग आँख खोलकर देख भर सकें। उस समय ये आप ही समझ लेंगे कि क्या काला है और क्या धौला—कौन-सी बात अच्छी है और कौन-सी बुरी। उन्होंने यह भी कहा था कि यदि तुम यहाँ आ ही गये हो बेटा, तो अब यहाँसे कहीं जाना मत। तुम लोग अपना मुँह फेरे रहते हो, इसी लिए तो अब तुम्हारी ग्राम्य जननीकी यह दुर्दशा है। सच तो है, मेरे चले जानेसे तो इसके प्रतिकारका लेश-मात्र भी उपाय न रह जाता!

रमेशने एक दीर्घ निःश्वास छोड़कर मन ही मन कहा—हाय! यही हमारे गर्वका धन—बंगालका शुद्ध, शान्त और न्याय-निष्ठ ग्राम्य समाज है! कोई वह दिन भी शायद रहा हो, जब कि इसमें प्राण थे। उस समय इसमें इतनी शक्ति थी कि यह दुष्टोंका शासन करता था और अपने आश्रित पुरुषों और स्त्रियोंको निर्विघ्न रूपसे ससारकी यात्रा करनेमें सहायता देता था। लेकिन आज यह मृत है। फिर भी अन्धे ग्रामवासी इस भारी और विकृत शवको नहीं छोड़ते और अपनी झूठी ममताके कारण इसे सिरपर लादे हुए दिनपर दिन क्लान्त, अवसन्न और निर्जीव होते जा रहे हैं, फिर भी किसी तरह आँखें खोलकर नहीं देखते। वह उसीको समाज मानते हैं जो आर्तोंकी रक्षा तो कर ही नहीं सकता, उलटे उन्हे और भी अधिक विपन्न करता है और उनका

वही महापाप उन्हें रसातलकी ओर खींचता हुआ ले जा रहा है। रमेश और भी कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहनेके बाद अचानक मानों एक धक्का खाकर उठ खड़े हुए और तुरन्त ही उन्होंने भैरवके देनेकी सारी रकमका एक चेक लिखकर गोपाल सरकारको देते हुए कहा—आप सब बातें पहले खूब अच्छी तरह समझ लीजिए और तब ये रुपये जमा करा दीजिए; और जिस तरह हो सके, अपीलका सारा प्रबन्ध करके आइए। ऐसा इन्तजाम हो कि फिर इस प्रकारका भयंकर अत्याचार करनेका उन्हें कभी साहस न हो सके।

गोपालने चेक हाथमें ले लिया। कुछ देर तक वह और भैरव दोनों ही विह्वलोंकी तरह देखते रहे। रमेशने फिर उन्हें अपना मतलब ठीक तरहसे समझाया। अब भैरवकी समझमें आ गया कि रमेश मेरे साथ दिल्लगी नहीं कर रहे हैं; इसलिए उन्होंने जल्दीसे आगे बढ़कर पागलोंकी तरह रमेशके दोनों पैर खूब जोरसे पकड़ लिये और रोते तथा चिल्लाते हुए आशीर्वाद दे देकर एक ऐसा बखेड़ा खड़ा कर दिया कि अगर उस समय रमेशके स्थानपर उनसे कोई कमजोर आदमी होता तो उसे अपने आपको छुड़ा लेना बहुत ही कठिन होता। इस बातको सारे गाँवमें फैलते अधिक देर न लगी। सभी लोगोंने समझ लिया कि अब वेणी और गोविन्दका सहजमें छुटकारा न हो सकेगा। सभी लोग कहने लगे कि छोटे बाबूने अपने पुराने दुश्मनसे बदला लेनेके लिए ही इतने रुपये दे डाले हैं! लेकिन इस बातकी कल्पना करना किसीके लिए सम्भव ही नहीं था कि दुर्बल भैरवके बदलेमें भगवानने यह भार एक ऐसे आदमीके सिर रख दिया है जो इस गम्भीर दुष्कृतिका भारी भार अच्छी तरह उठा सकेगा।

इसके बाद कोई एक महीना बीत गया। मलेरियाके विरुद्ध रमेश मन ही मन युद्धकी घोषणा कर चुके थे; इसलिए इधर महीने भरसे वे अपने सब यन्त्र आदि लेकर ऐसे उत्साहसे अनेक स्थानोंकी नाप-जोख कर रहे थे कि वह प्रायः भूल ही गये कि कल भैरवके मुकदमेकी तारीख है। आज सन्ध्याके समय अचानक रोशन-चौकीका स्वर सुनकर वह बात उन्हें याद हो आई। नौकरसे यह खबर पाकर वे चकित हो गये कि आज भैरव आचार्यके दौहित्रका अन्न-प्राशन है, फिर भी उन्हें उसका कुछ पता नहीं! उन्होंने सुना कि भैरवने कुछ मामूली तैयारी नहीं की है। उन्होंने गाँव-भरके सभी लोगोंको निमन्त्रण दिया है। लेकिन घरका कोई आदमी यह न बतला सका कि रमेशको भी

कोई निमन्त्रण देने आया या नहीं। सिर्फ यही नहीं, बल्कि अब उन्हें यह भी स्मरण हुआ कि सिरपर इतना बडा मुकद्दमा इतने नजदीक होनेपर भी भैरव आचार्य इधर बीस-पचीस दिनोंमें एक बार मिलने तकके लिए नही आया! मामला क्या है! लेकिन यह बात उनके मनमें आ आकर भी नहीं आई कि ससारके सारे आदमियोंमेंसे भैरव मुझे ही बाद कर सकता है। इसलिए अपनी इस अद्भुत आशंकासे वे खुद ही लज्जित हुए और तुरन्त एक दुपट्टा कन्धेपर डालकर सीधे भैरव आचार्यके घरकी तरफ जानेके लिए निकल पड़े। बाहरसे ही उन्होंने देखा कि बाड़ेके एक तरफ गाँवके दो-तीन कुत्ते जूठी पत्तलोंके लिए लड रहे हैं, पास ही रोशन-चौकीवाले आग सुलगाकर तमाखू पी रहे हैं और बाजे सेक रहे हैं। अन्दर पहुँचकर देखा कि ऑगनमें सैकड़ों जगहोंसे फटा हुआ एक शामियाना खडा है और गॉव भरमें जो पाँच-छः बहुत पुरानी मिट्टीके तेलकी लालटेनें हैं, वे मुकर्जी और घोषालके यहॉसे लाकर जलाई गई हैं। उनमेंसे रोशनी तो कम निकलती है और धुऑं अधिक, इससे वह सारा स्थान दुर्गन्धसे परिपूर्ण हो रहा है। खाना-पीना खतम हो चुका है और आदमी ज्यादा नही रह गये हैं। गॉवके बड़े-बूढे और सर-परस्त 'जाऊँ जाऊँ' कर रहे हैं। गोविन्द गॉगूली वहॅंसे कुछ दूर हटकर एक किसानके लडकेके साथ बहुत एकान्तमें बातचीत कर रहे हैं। ठीक उसी समय रमेश एक दुःस्वप्नकी भॉति सब लोगोंके सामने एकाएक ऑगनके बीच जा खड़े हुए। उन्हें देखते ही उन लोगोंके चेहरेपर जिस प्रकार क्षण-भरके लिए स्याही दौड गई, शत्रु-पक्षके लोगोंको इस प्रकार एकत्र देखकर रमेशका मुख भी कुछ उज्ज्वल नहीं हुआ। कोई भी उन्हें बैठनेके लिए अभ्यर्थना करने आगे नहीं बढा। यहॉ तक कि किसीने एक बात भी न की। भैरव स्वयं वहॉ नहीं था। थोड़ी देर बाद 'हॉ गोविन्द भइया ..' कहते हुए जब वह किसी कामसे बाहर आया, तब मानों उसे ऑगनमें एक भूत खडा हुआ दिखाई दिया; और वह तुरन्त लौटकर तेजीसे घरके अन्दर चला गया। जब रमेश सूखे हुए मुँहसे अकेले उस मकानसे बाहर निकल आये, तब मारे आश्चर्यके मानों काठ हो गये। इतनेमें उन्हें सुनाई पडा कि पीछेसे कोई पुकार रहा है—भइया रमेश!

रमेशने पीछे फिरकर देखा कि दीनू हॉफते हुए चले आ रहे हैं। पास पहुँच कर उन्होंने कहा—चलिए भइयाजी, घरमें चलिए।

रमेशने हँसनेकी चेष्टा की, पर उनके मुँहसे हँसी न निकली। चलते चलते दीनू कहने लगे—आपने उसका जो उपकार किया, वह उसके माँ बाप भी उसके साथ न करते। यह बात जानते तो सभी लोग हैं, लेकिन किया क्या जाय! उपाय जो नहीं है। बच्चे कच्चे लेकर ही तो हम लोगोंको गृहस्थी चलानी पड़ती है। इसलिए अगर आपको निमन्त्रण दिया जाता तो,—समझ गये न भइया,—बेचारे भैरवको भी ज्यादा दोष नहीं दिया सकता। तुम सब आज-कलके शहरके रहनेवाले लड़के ठहरे। जात-पाँत तो कुछ मानते-वानते नहीं। इसीलिए—समझ गये न भइया,—अब उसकी छोटी लड़की भी बारह बरसकी हो चली। दो दिन बाद उसे तो पार करना ही पड़ेगा। भइया, हम लोगोंके समाजका हाल जानते तो हो! समझ गये न भइया—।

रमेशने अधीर होकर कहा—जी हाँ, सब समझ गया।

रमेशके घरके सदर दरवाजेके पास खड़े होकर दीनूने प्रसन्न होकर कहा—हाँ भइया, समझोगे क्यों नहीं, कुछ नादान तो हो नहीं। उस ब्राह्मणको भी कैसे दोष दिया जाय—हम बुड्ढोंको अपने परकालकी चिन्ता—

रमेश यह कहते हुए जल्दीसे अपने घरके अन्दर चले गये—"जी हाँ, यह तो ठीक ही है।"

अब उनको यह समझना बाकी नहीं रहा कि गाँवके लोगोंने उन्हें जातिसे अलग कर दिया है। घर पहुँचनेपर मारे क्षोभ और क्रोधके उनकी आँखें जल उठीं। अब यह उन्हें सबसे ज्यादा खटका कि वेणी और गोविन्दको ही आज भैरव आदरपूर्वक बुला लाया है; और गाँवके सब लोगोंने सब बातें जानने और समझ लेनेके बाद भी भैरवको उसके इस व्यवहारके लिए केवल क्षमा ही नहीं कर दिया बल्कि समाजकी खातिर उसने जो मुझे बुलाया तक नहीं है, इसे भी प्रशंसाकी दृष्टिसे देखा।

रमेशने एक बड़ी चौकीपर बैठकर और लम्बी साँस छोड़कर कहा—हे भगवन्, इस कृतघ्न जातिके इस महापातकका प्रायश्चित्त किस तरह होगा! भगवान्, इतने बड़े निष्ठुर अपमानको तुम भी कैसे क्षमा कर सकोगे!

१५

यह बात नहीं थी कि रमेशके मनमें यह आशंका बिलकुल हुई ही न हो, फिर भी दूसरे दिन सन्ध्याके समय गोपाल सरकारने सदरसे लौटकर जब

सचमुच बतलाया कि भैरव आचार्यने हम लोगोंके माथेपर ही कटहल फोड़कर खाया है अर्थात् वह अदालतमें हाजिर ही नहीं हुआ, और मुकद्दमा एक तरफामें खारिज होकर हमारे द्वारा जमा किये हुए रुपये वेणी आदिके हाथ लग गये, तब क्षणभरके लिए रमेशके क्रोधकी ज्वाला उनकी एड़ीसे लेकर चोटीतक भभक उठी। उस दिन उन लोगोंकी जालसाजी और ठगीका दमन करनेके लिए ही रमेशने उस झूठे ऋणके रुपये भैरवकी तरफसे जमा कराये थे, परन्तु महा-पापिष्ठ भैरवने उन्हीं रुपयोंकी बदौलत अपनी जान बचा कर फिर वेणी बाबूके साथ मित्रता स्थापित कर ली। भैरवकी यह कृतघ्नता कलके अपमानसे बहुत ऊपर जाकर आज रमेशके माथेके भीतर प्रज्वलित होने लगी। वे जिस हालतमे थे, उसी हालतमें उठ खड़े हुए और बाहर जानेको तैयार हो गये। आत्मसंवरणकी बातका उन्हें खयाल भी न आया। मालिककी लाल आँखें देखकर गोपाल सरकार डर गये। उन्होंने धीरेसे पूछा—क्या आप कहीं जा रहे हैं ?

रमेश "अभी आता हूँ" कहकर तेजीसे चले गये। भैरवके मकानके बाहरी भागमें पहुँचकर देखा कि कोई नहीं है। तब वे अन्दर चले गये। उस समय आचार्यकी स्त्री दीपक हाथमें लेकर तुलसीके चौरेके पास आ रही थी। अचानक रमेशको सामने देखकर सन्न हो गई। जो कभी आये नहीं, वे आज क्यों आये, यह सोचते ही वह इतनी डरी कि उसका कलेजा मुँहको आने लगा। रमेशने उसीसे पूछा—आचार्यजी कहाँ हैं ?

स्त्रीने अव्यक्त स्वरसे जो कुछ कहा, वह तो नहीं सुनाई पड़ा फिर भी यह मालूम हो गया कि घरपर नहीं हैं। रमेशके बदनपर एक कुरता तक न था। सन्ध्याके अस्पष्ट प्रकाशमें उनका चेहरा भी अच्छी तरह दिखाई नहीं देता था। इतनेमें भैरवकी बड़ी लड़की लक्ष्मी एक छोटे लड़केको गोदमें लिये हुए बाहर निकली। एक अपरिचित आदमीको सामने देखकर उसने अपनी माँसे पूछा—माँ, यह कौन है ?

लेकिन उसकी माँ कोई परिचय न दे सकी। रमेश भी कुछ न बोले। लक्ष्मी डर गई और चिल्ला पड़ी—बाबूजी, न जाने यह कौन आदमी आँगनमें आकर खड़ा है और कुछ बोलता नहीं।

"कौन है ?" कहते हुए उसके पिता बाहर निकल आये और रमेशको

देखते ही मानो काठ हो गये। सन्ध्याकी उस म्लान छायामें भी उन्हे उस लम्बे-चौड़े और हृष्टपुष्ट शरीरको पहचानते देर न लगी। रमेशने कठोर स्वरसे कहा—यहाँ आइए और तत्काल ही खुद ही आगे बढ़कर वज्रमुष्टिसे उनका एक हाथ पकड लिया और पूछा—ऐसा काम क्यों किया ?

भैरव रो पडे।—अरे मार डाला रे ! लक्ष्मी, जल्दीसे जाकर वेणी बाबूको खबर कर दे।

साथ ही साथ घर-भरके लड़के-बच्चे जोर जोरसे रोने-चिल्लाने लगे और पलक मारते ही सन्ध्याकी उस नीरवताको भंग करनेवाले बहुतसे लोगोंके रोने-चिल्लानेके शब्दसे सारा मुहल्ला त्रस्त हो उठा। रमेशने उसे एक जोरका झटका देते हुए कहा—चुप रहो। पहले यह बतलाओ कि यह काम क्यो किया ?

भैरवने उनके प्रश्नका उत्तर देनेकी चेष्टा तक नहीं की। वह सिर्फ गला फाड फाडकर चिल्लाता रहा और रमेशके हाथोसे अपने आपको छुड़ानेके लिए खींचातानी करता रहा। देखते देखते गाँव-भरकी स्त्रियों और पुरुषोंसे आँगन भर गया। तमाशा देखनेके लिए और भी लोग इकट्ठे होकर अन्दर घुसनेके लिए धक्कमधक्का करने लगे। लेकिन क्रोधान्ध रमेशने उस ओर ध्यान ही न दिया। सैकड़ो आदमियोकी कुतूहलभरी दृष्टिके सामने खड़े होकर वह पागलोंकी तरह भैरवको पकड़े हुए वैसे ही झटकेपर झटके देने लगे। एक तो यों ही रमेशके शारीरिक बलकी अतिरजित होकर कहानियाँ बन गई थीं, तिसपर उनकी आँखोंकी तरफ देखकर इतने आदमियोंमेंसे किसीका भी साहस न हुआ कि अभागे भैरवको छुड़ा सके। गोविन्द तो घरमे आते ही भीडमें मिलकर गायब हो गये। वेणी दूरहीसे झाँककर खिसक जाना चाहते थे कि भैरव देखकर रो पड़ा—बड़े बाबू !—

लेकिन बड़े बाबूने उस ओर ध्यान न दिया और वे पलक मारते न मारते न जाने कहाँ गायब हो गये। सहसा उस भीडके बीचमेंसे कुछ रास्ता-सा हुआ और उसके बाद तुरन्त ही रमाने जल्दीसे वहाँ पहुँचकर रमेशका हाथ पकड लिया। कहा—बस हो चुका, अब छोड दो।

रमेशने उसकी ओर अग्निपूर्ण दृष्टिसे देखकर कहा—क्यो ?

रमाने दाँतोसे दाँत भींचकर अस्फुट और क्रुद्ध स्वरसे कहा—इतने आदमियोके बीचमें तुम्हें ऐसा करते लज्जा नहीं आती; लेकिन मै तो मारे लज्जाके मरी जा रही हूँ !

रमेशने आँगन-भरे लोगोंकी तरफ देखकर तत्काल ही भैरवका हाथ छोड़ दिया। तब रमाने कोमल स्वरसे कहा—अब घर जाओ।

रमेश बिना कुछ कहे वहाँसे बाहर हो गये। एकाएक मानों इन्द्रजालका एक खेल-सा हो गया। लेकिन उनके चले जानेपर रमाके प्रति उनकी इस अतिशय अनुगततासे सभी मानों विचित्र ढँगसे एक दूसरेके मुँहकी ओर देखने लगे और इतनी बड़ी बातका इतने आडम्बरसे आरम्भ होकर इस तरह खतम हो जाना मानों किसीको अच्छा न लगा।

लोग चले गये। अब गोविन्द गाँगूलीने प्रकट होकर एक उँगली उठाकर और अपना मुख जरूरतसे ज्यादा गम्भीर बनाकर कहा—अब पहले यह सलाह करो कि यह जो घरपर चढ़कर आया और इन्हें इस तरह अध-मरा कर गया, इसका क्या होना चाहिए?

भैरव दोनों घुटनोंमें अपना मुँह डालकर बैठा हुआ हाँफ रहा था। उसने निरुपाय भावसे वेणीके मुँहकी तरफ देखा। रमा तब भी गई नहीं थी। उसने वेणीके अभिप्रायका अनुमान करके जल्दीसे कहा—लेकिन बड़े भइया, इस तरफका दोष भी तो कुछ कम नहीं है। और फिर हुआ ही क्या है जिसके लिए कोई बखेड़ा खड़ा किया जाय?

वेणीने बहुत ही आश्चर्यसे कहा—रमा, तुम कैसी बातें करती हो।

भैरवकी बड़ी लड़की तब भी एक खम्भेके सहारे खडी रो रही थी। वह घायल नागिनकी तरह एकदमसे गरज उठी—रमा बहन, तुम तो उसकी तरफसे बोलोगी ही। पर यह तो बतलाओ कि अगर कोई इस तरह तुम्हारे घरमें घुसकर तुम्हारे बापको मार जाता तो तुम क्या करतीं?

पहले तो उसका गरजना सुनकर रमा चौंक पड़ी। वह अपने पिताके छुटकारेके लिए अगर कृतज्ञ न हो तो न सही। लेकिन उसकी इस तीव्रताके अन्दरसे कटु श्लेषकी ऐसी तेज आँच रमाको लगी कि वह दूसरे ही क्षण जल उठी। लेकिन फिर भी आत्म-संवरण करके बोली—हमारे बापमें और तुम्हारे बापमें बहुत फर्क है लक्ष्मी, इसलिए यह तुलना मत करो। लेकिन मैंने किसीकी तरफसे कोई बात नहीं कही, मैं तो भलेके लिए ही कहती थी।

लक्ष्मी देहातकी औरत थी, लड़ने-झगड़नेमें किसीसे कम नहीं। उसने झपटकर कहा—ठीक है! तुम्हें उसकी तरफसे लड़ाई करनेमें लज्जा नहीं आती? बड़े घरकी लड़की हो, इसलिए डरसे कोई कुछ नहीं कहता। और

नहीं तो कौन नहीं जानता ? तुम्हीं हो जो मुँह दिखा रही हो ! कोई दूसरी होती तो गलेमें फाँसी लगा लेती !

वेणीने लक्ष्मीको कुछ झिड़ककर कहा—लक्ष्मी, चुप रहो न ! उन सब बातोंके कहनेकी जरूरत क्या है ?

लक्ष्मीने कहा—जरूरत क्यों नहीं है ? जिसके कारण बाबूजीने इतना दुःख पाया, उसीकी तरफसे ये आकर लड़ाई करेंगी ? अगर आज बाबूजी मर जाते तो ?

दम-भरके लिए ही रमा स्तम्भित हो गई थी । पर वेणीके इस बनावटी क्रोधके स्वरने उसे फिरसे मानों प्रज्वलित कर दिया। उसने लक्ष्मीकी तरफ देखकर कहा—लक्ष्मी, ऐसे आदमीके हाथसे मृत्यु पाना भी बड़े भाग्यकी बात है । आज अगर तुम्हारे बाप मर जाते, तो स्वर्ग जा सकते !

लक्ष्मीने और भी जल भुनकर कहा—तभी तो रमा बहन तुम उसपर मरी हो !

रमाने उसे कोई उत्तर नहीं दिया और उसकी तरफसे मुँह फेरकर वेणीकी ओर घूमकर पूछा—लेकिन बड़े भइया, यह बात क्या है ? तुम्हीं बतलाओ न ?

इतना कहकर वह टक लगाकर उनकी तरफ देखती रही। उसकी दृष्टि मानो अन्धकारको भेदकर वेणीके हृदयके अन्दर तक देखने लगी । वेणीने क्षुब्ध होकर कहा—बहन, भला मैं क्या जानूँ ! लोग तो ऐसी बहुत-सी बातें कहते हैं । लेकिन उन बातोंकी तरफ ध्यान देनेसे काम नहीं चलता ।

रमाने पूछा—लोग क्या कहते हैं ?

वेणीने बहुत ही अवज्ञापूर्वक कहा—कहते हैं तो कहा करें। उनके कहनेसे बदनपर कुछ छाले तो पड़ ही नहीं जाते ।

इस कपट-सहानुभूतिको रमा समझ गई । उसने थोड़ी देर तक चुप रहनेके बाद कहा—तुम्हारे शरीरपर तो शायद किसी चीजसे भी छाले नहीं पड़ सकते । किन्तु सब लोगोंके शरीरपर तो तुम्हारी तरह गैंडेका चमड़ा है नहीं । लेकिन लोगोंसे ये सब बातें कहलाता कौन है ?—तुम ?

वेणीने कहा—मैं ?

रमाको अन्दर ही अन्दर बहुत क्रोध आ रहा था, पर वह अपनी पूरी शक्ति लगाकर उसे रोक रही थी। अब भी उसके स्वरसे वह क्रोध प्रकट नहीं हुआ। उसने कहा—तुम्हारे सिवा और कोई नहीं । संसारका कोई भी दुष्कर्म तुमसे बचा नहीं है । चोरी, फरेब, जाल, घरमें आग लगवाना, सभी कुछ हो चुका है । फिर यही क्यों बाकी रह जाय ?

वेणी हतबुद्धि होकर मुँहसे कोई बात ही नहीं कह सके। रमाने कहा—तुममें यह समझनेकी शक्ति नहीं कि स्त्रियोंके लिए इससे बढ़कर सर्वनाशकी बात और कोई नहीं हो सकती। लेकिन मैं पूछती हूँ कि यह बदनामी फैलानेमें तुम्हारा क्या लाभ है ?

वेणीने डरकर कहा—मेरा क्या लाभ होगा ! अगर लोग तुम्हें बड़े तड़के रमेशके घरसे निकलते हुए देखें, तो मैं क्या कर सकता हूँ !

रमाने इस बातपर बिना कोई ध्यान दिये कहा—मैं इतने आदमियोंके सामने और कुछ नहीं कहना चाहती। लेकिन बड़े भइया, तुम यह न समझना कि मुझे तुम्हारे मनका भाव मालूम नहीं है। लेकिन यह निश्चय समझ रखो कि मैं मरनेसे पहले तुम्हें भी जीता नहीं छोड़ जाऊँगी।

भैरवकी स्त्री अभी तक चुपचाप पास ही कहीं खड़ी थी। अब उसने आगे बढ़कर और रमाका हाथ पकड़कर घूँघटके अन्दरसे कोमल स्वरमें कहा—अरे बेटी, तुम पागल हुई हो। यहाँ कौन ऐसा है जो तुम्हें नहीं जानता !

इसके बाद उसने अपनी कन्यासे कहा—लक्ष्मी, तू औरत होकर औरतकी इस तरह बदनामी मत कर। धर्म यह सहन नहीं कर सकेगा। आज इन्होंने तुम्हारा जो उपकार किया है, अगर तुम आदमीकी बच्ची होती तो उसे समझतीं।

यह कहकर वह रमाको खींचती हुई कोठरीके अन्दर ले गई। अपने पतिके उद्देश्यसे उसके इस कठोर श्लेष और निरपेक्ष सत्यवादितासे सभी उपस्थित लोग मानो कुण्ठित होकर वहाँसे खिसक गये।

इस घटनाका कार्य-कारण सम्बन्ध चाहे जितना ही बड़ा और चाहे जो हो, परन्तु फिर भी अपने इस कदाकार असंयमके कारण रमेशका शिक्षित और भद्र अन्तःकरण लगातार दो दिन तक ऐसा संकुचित हो रहा कि वे घरसे बाहर निकल तक न सके। तो भी इतने लोगोंके बीचसे रमा जो अपनी इच्छासे उनकी लज्जाका अंश लेने आई थी उसका ध्यान रह-रहकर उनकी समस्त लज्जाके काले मेघपर दिगन्त-लुप्त बिजलीकी हल्की-सी चमककी तरह रह रह कर सौन्दर्य और माधुर्यकी दीप्त रेखा अंकित कर जाता था। इसी लिए उनकी ग्लानिमें भी परितृप्तिकी पीड़ा थी। इसी दुःख और सुखकी वेदनामें जब वे और भी कुछ दिनों तक अपने निर्जन घरमें अज्ञात-वास करनेका संकल्प कर रहे थे, तब उन्होंने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि उस समय

उन्हीको उपलक्ष्य करके बाहर एक और आदमीके सिरपर लगातार लज्जा और अपमानका पहाड़ टूट कर गिर रहा है।

लेकिन छिपकर बैठनेका सुयोग उन्हे नही मिला। आज सन्ध्याको पीर-पुरकी मुसलमान प्रजाकी पंचायतकी बैठक होनेको थी; इसलिए उसमें उपस्थित होनेके लिए कुछ लोग उन्हें बुलाने आये। स्वयं रमेशने ही कुछ दिन पहले इस बैठकका आयोजन किया था। इसी लिए जब वे यह खबर दे गये कि आज वे लोग इकट्टे होकर छोटे बाबूकी ही प्रतीक्षा कर रहे हैं, तब उन्हे जानेके लिए उठना पडा।

पता लगानेपर रमेशको मालूम हुआ था कि हर गॉवके कृषकोमें दरिद्रोंकी सख्या बहुत अधिक है। बहुतसे लोग ऐसे हैं जिनके पास एक टुकडा भी जमीन नहीं है। वे लगान देकर दूसरोकी जमीनपर रहते हैं और दूसरोकी ही जमीनोमें मजदूरी करके अपना पेट पालते हैं। यदि दो दिन काम नहीं मिला या बीमार पड जानेसे कामपर न जा सके तो फिर उन्हें सपरिवार उपवास करना पडता है। खोज करनेपर यह भी मालूम हुआ कि किसी समय उनमेंसे बहुतोंकी हालत अच्छी थी लेकिन कर्जके फेरमें उनका सब कुछ चला गया। कर्जकी व्यवस्था भी सीधी नहीं है। महाजन लोग जमीन रेहन रखकर कर्ज देते हैं, लेकिन अक्सर सूद नहीं लेते और फसलका हिस्सा लेना चाहते हैं। सूदका हिसाब लगानेपर इस हिस्सेका मूल्य कभी कभी असलके लगभग पहुॅच जाता है। इसीलिए जब एक वार कोई कृषक, चाहे सामाजिक क्रिया-कर्मके लिए हो और चाहे अनावृष्टि आदिके कारण हो, कुछ ऋण लेनेको विवश होता है, तो फिर सॅभलकर खडा नहीं हो सकता। हर साल ही उसे उसी महाजनके दरवाजेपर जाकर हाथ पसारना पड़ता है। इस विषयमें हिन्दू और मुसलमान दोनोकी एक ही अवस्था है। कारण, महाजन प्रायः हिन्दू हैं। रमेशने शहरमें रहनेके समय किताबें पढ़कर इस विषयमे जो कुछ जाना था, उसका वस्तविक रूप जब उन्होंने गॉवमे आकर देखा, तब दंग रह गये। उनके बहुतसे रुपये बैकमें पड़े थे। उन रुपयोंसे और कुछ रुपये और भी संग्रह करके वह महाजनोके हाथसे इन अभागोका उद्धार करनेके लिए कमर कसने लगे। लेकिन एक-दो जगह लेन-देन करके और उसमें नुकसान उठाकर उन्होंने देखा कि इन दरिद्रोंको जो इतना अधिक असहाय और कृपापात्र सोचा था, सो सर्वत्र ही ठीक नहीं है। ये लोग दरिद्र, निरुपाय और

अल्पबुद्धि-जीवी अवश्य है, लेकिन बदजाती और बदमाशीमें भी कम नहीं हैं। उधार लेकर उसे न चुकानेकी प्रवृत्ति इन लोगोंमें खूब प्रबल है। अधिकांश क्षेत्रोंमें ये सरल भी नहीं है और साधु भी नहीं हैं। झूठ बोलनेसे इनका सिर नीचा नहीं होता और धोखा देना खूब जानते हैं। अपने पड़ोसियोंकी स्त्रियों और कन्याओंके सौंदर्यकी चर्चा करनेका शौक भी इनमें कम नहीं है। पुरुषोंका विवाह होना बहुत कठिन हो गया है; साथ ही भिन्न भिन्न अवस्थाओंकी विधवाओंके बोझसे हरएक गृहस्थ दबा जा रहा है। इसीलिए इनके नैतिक स्वास्थ्यकी भी बहुत बुरी हालत है। इन लोगोंका समाज भी है और उसका शासन भी कम नहीं हैं। लेकिन पुलिसके साथ चोरोंका जो सम्बन्ध है, समाजके साथ इन लोगोंने भी ठीक वही सम्बन्ध स्थापित कर कर रखा है। फिर भी सब मिलाकर ये लोग इतने पीडित, इतने दुर्बल और इतने निर्धन हैं कि इनसे नाराज होकर चुपचाप बैठ रहना भी असम्भव है। विद्रोही और कुमार्गपर चलनेवाली सन्तानके प्रति पिताका जो मनोभाव होता है, रमेशका हृदय भी ठीक वैसा ही हो रहा था: और इसीलिए आज सन्ध्याको रमेशने पीरपुरके नये स्कूलमे पंचायत बुलाई थी।

अभी थोडी देर हुई, सन्ध्याका अन्धकार दूर करके दशमीकी ज्योत्स्ना खिड़कीके बाहर खुले मैदानमें चारों तरफ भर गई थी। रमेश उसी ओर देखते हुए, जानेके लिए तैयार होकर भी नहीं जा रहे थे। उसी समय रमा आकर उनके दरवाजेके पास खड़ी हो गई। वहाँ रोशनी नहीं थी, इसलिए रमेशने घरकी दासी समझकर कहा—क्या चाहती हो?

"क्या आप बाहर जा रहे हैं?"

रमेश चौंक पड़े। "कौन रमा? इस समय कैसे आई?"

जिस कारण उसे सन्ध्याका आश्रय लेना पडा था, उसके कहनेकी तो जरूरत नहीं थी परतु जिस कामके लिए वह आई थी, उसके सम्बन्धकी बहुत-सी बातें कहनी थीं; इसलिए उसकी समझमें नहीं आया कि मैं अपनी बात किस प्रकार आरम्भ करूँ। वह स्थिर हो रही। रमेश भी कुछ न कह सके। थोड़ी देर चुप रहनेके बाद रमाने पूछा—अब आपका शरीर कैसा है?

रमेशने कहा—अच्छा नहीं है। अब फिर रोज रातको बुखार हो आता है।

रमाने कहा—तब तो कुछ दिनोंके लिए बाहर घूम आना अच्छा होगा।

रमेशने हँसकर कहा—जानता तो हूँ कि अच्छा होगा। लेकिन जाऊँ कैसे?

उनकी हँसी देखकर रमा नाराज हुई। उसने कहा—आप कहेंगे कि आपको बहुत-से काम हैं। लेकिन ऐसा कौन-सा काम है जो अपने शरीरसे भी बढ़कर है?

रमेशने पहलेकी ही तरह हँसकर उत्तर दिया—मैं यह नहीं कहता कि अपना शरीर कोई छोटी चीज है। लेकिन आदमीके लिए ऐसे भी काम हैं जो इस शरीरसे भी बहुत बढ़कर हैं। लेकिन, रमा, वह तो तुम न समझोगी।

रमाने सिर हिलाकर कहा—मैं समझना भी नहीं चाहती। लेकिन आपको और कहीं जाना ही होगा। आप अपने सरकार (गुमाश्ते) से कह जायँ; मैं उनके काम-काजकी देख-भाल कर दूँगी।

रमेशने चकित होकर कहा—तुम मेरे काम-काजकी देख-भाल करोगी? लेकिन—

"लेकिन क्या?"

"रमा, क्या तुम जानती हो कि मैं तुम्हारा विश्वास कर सकूँगा?"

रमाने तुरन्त ही निस्संकोच भावसे कहा—इतर लोग न कर सकें, लेकिन आप कर सकेंगे।

उसके दृढ़ कण्ठकी इस अचिन्तनीय उक्तिसे रमेश विस्मयसे स्तब्ध हो गये। लेकिन क्षण-भर चुप रहनेके बाद बोले—अच्छा, सोचूँगा।

रमाने सिर हिलाकर कहा—नहीं, सोचने विचारनेका समय नहीं है। आज ही आपको और कहीं जाना होगा। अगर नहीं जायँगे तो—

यह कहते कहते ही रमाने स्पष्ट अनुभव किया कि रमेश विचलित हो उठे हैं। क्योंकि अचानक इस तरह पलायन न करनेसे क्या विपत्ति आ सकती है, यह अनुमान करना कठिन नहीं था। रमेशने ठीक ही अनुमान किया। लेकिन आत्मसंरक्षण करके कहा—अच्छा, मान लो कि मैं चला गया, तो इससे तुम्हारा क्या लाभ होगा? मुझे विपत्तिमें डालनेके लिए तुमने स्वयं भी तो कुछ कम चेष्टा नहीं की है, जो आज एक और विपत्तिसे सचेत करने आई हो। वे सब घटनायें अभी इतनी पुरानी नही हो गई हैं कि तुम्हें याद न हों। बल्कि साफ साफ बतला दो कि मेरे चले जानेसे तुम्हारे लिए क्या सुभीता होगा। तब शायद मैं जानेके लिए राजी भी हो सकता हूँ।

यह कहकर वे उत्तर पानेकी आशासे रमाके अस्पष्ट मुखकी ओर देखने लगे, पर उन्हें कोई उत्तर न मिला। उन्हें इस बातका भी पता नहीं लगा कि

कितना बड़ा अभिमान रमाकी छातीमें उच्छ्वसित हो उठा। उस अँधेरेमें यह भी न दिखाई दिया कि इस निष्ठुर तानेके आघातसे रमाका चेहरा कितना विवर्ण हो गया है। थोड़ी देरतक स्थिर रहकर रमाने अपने आपको सँभाल लिया और तब कहा—अच्छा, साफ साफ ही कहती हूँ। आपके चले जानेसे मेरा लाभ तो कुछ भी नहीं है। लेकिन न जानेसे हानि बहुत है। मुझे गवाही देनी पड़ेगी।

रमेशने शुष्क भावसे कहा—यह बात है! लेकिन गवाही न दो तो?

रमाने फिर कुछ रुककर कहा—न दूँगी तो दो दिन बाद हमारे यहाँ महा-मायाकी पूजामें कोई भी नहीं आयगा और यतीन्द्रके यज्ञोपवीतके समय कोई भोजन न करेगा। मेरा वार-व्रत—।

इस प्रकारकी दुर्घटनाकी सम्भावना मात्रसे ही रमा मानो सिहर उठी।

आगे कुछ और न सुननेसे भी काम चल जाता। लेकिन उनसे रहा न गया, पूछा—उसके बाद?

रमाने व्याकुल होकर कहा—उसके भी बाद? नहीं, तुम चले जाओ। रमेश भइया, मैं तुमसे प्रार्थना करती हूँ, तुम मुझे सब तरफसे चौपट मत करो; तुम जाओ, इस देशसे चले जाओ।

दोनों ही कुछ देर तक चुप रहे। इससे पहले चाहे जहाँ, चाहे जिस अवस्थामें हो, रमाको देखते ही रमेशके हृदयका रक्त अशान्त हो उठता था। मन ही मन सैकड़ों युक्तियोंका प्रयोग करके और अपने अन्तःकरणको अनेक कटु बातें सुना कर भी वे उसे शान्त नहीं कर पाते थे। हृदयकी इस नीरव विरुद्धतासे वे दुःख पाते, लज्जाका अनुभव करते और क्रुद्ध भी हो उठते थे, लेकिन किसी तरह उसे वशमें नहीं ला सकते थे। विशेषतः आज इस समय अपने घरमें उसी रमाको अचानक अकेली उपस्थित होती देखकर कलकी बातका स्मरण करते ही उनके हृदयकी चंचलता एकदम उद्दाम हो उठी थी। लेकिन रमाकी अन्तिम बातसे आज इतने दिनोंके बाद उनका वह हृदय स्थिर हो गया। रमाके इस भय-व्याकुल आग्रहमें अखंड स्वार्थपरताका चेहरा इतना अधिक स्पष्ट था कि आज उनके अन्धे हृदयकी भी आँखें खुल गईं। रमेशने एक गहरी साँस छोड़कर कहा—अच्छा, ऐसा ही होगा। लेकिन आज तो अब समय नहीं है। मेरे यहाँसे भाग जानेका कारण तुम्हारे लिए कितना ही बड़ा क्यों न

हो, आजकी रात मेरे लिए उससे भी कहीं बढ़कर है। तुम अपनी दासीको बुलाओ। मुझे इसी समय बाहर जाना होगा।

रमाने धीरेसे पूछा—क्या आज किसी तरह जाना नहीं हो सकता?

"नहीं। तुम्हारी दासी कहाँ गई?"

"मेरे साथ कोई नहीं आया है।"

रमेश अवाक् हो गये। "यह कैसी बात है? तुम्हें यहाँ अकेले आनेका साहस कैसे हुआ? अपने साथ एक दासी तक लेकर नहीं आई?"

रमाने उसी प्रकार कोमल स्वरसे कहा, "उससे भी क्या होता? जो आती, वह भी तो तुम्हारे हाथसे मेरी रक्षा नहीं कर सकती।"

रमेशने कहा—भले ही न कर सके। लेकिन झूठी बदनामीसे तो बच सकतीं। रानी, रात भी तो कुछ कम नहीं हुई!

वही बहुत दिनोंका भूला हुआ नाम! अचानक न जाने क्या कहनेके लिए रमाको अत्यन्त आवेग हो आया, पर उसने उसे रोक लिया। इसके बाद केवल यही कहा—रमेश भइया, उसका भी कोई फल न होता। अँधेरी रात नहीं है। मैं मजेमें चली जाऊँगी।

इतना कहकर बिना किसी और बातकी अपेक्षा किये रमा धीरे धीरे वहाँसे बाहर हो गई।

१६

रमा हर साल बहुत ठाठसे दुर्गा-पूजाका उत्सव किया करती थी और पूजाके पहले ही दिन अर्थात् सप्तमीके दिन गाँवके सभी गरीबों और किसानोंको खूब जी भरकर खिलाती थी। ब्राह्मण-घरमें माताका प्रसाद पानेके लिए ऐसी धूम मच जाती थी कि रात एक प्रहर तक पत्तल पुरवे और जूठे मीठेकी भरमारसे घरमें पैर रखनेको भी जगह नहीं रह जाती थी। केवल हिन्दू ही नहीं, पीरपुरकी मुसलमान प्रजा भी भीड़ लगानेमें कमी नहीं करती थी। इस बार भी यद्यपि वह स्वयं बीमार थी, उसने यह आयोजन करनेमें त्रुटि नहीं की थी। चंडीमंडपमें प्रतिमा और पूजाका साज-सरंजाम रहता था। नीचे उत्सवके लिए लम्बा-चौड़ा आँगन था। सप्तमीकी पूजा यथासमय समाप्त हो गई है। धीरे धीरे दो पहर और फिर तीसरा प्रहर होकर वह भी शेष होने लगा। आकाशमें सप्तमीका खंड चन्द्रमा धीरे धीरे निकलने लगा। लेकिन मुकर्जीके

मकानका बड़ा आँगन कुछ थोड़ेसे भले आदमियोंको छोड़कर बिल्कुल शून्य भाँय भाँय कर रहा है। अन्दर भातका विराट् स्तूप धीरे धीरे जमकर कठिन होने लगा। व्यंजनोंके ढेर सूखकर विवर्ण होने लगे। लेकिन अभी तक एक भी किसानने माताका प्रसाद लेनेके लिए घरमें पैर नहीं रखा। अरे ये छोटी जातिके आदमी खाने पीनेका इतना सामान नष्ट कर रहे हैं! इन लोगोंका हौसला इतना बढ गया! वेणी बाबू हाथमें हुक्का लिये कभी अन्दर जाते, कभी बाहर आते और चिखते-चिल्लाते जोरसे पैर पटकते फिरते थे। सालोंको अच्छी तरह सिखलाऊँगा। घरके छप्पर उजड़वा दूँगा, यह करूँगा, वह करूँगा। आदि आदि। गोविंद, धर्मदास और हालदार आदि बहुत नाराज होकर घूम घूम कर अन्दाज लगाने लगे कि किस सालेकी कारिस्तानीसे ऐसा हो रहा है। और यह भी बड़ा आश्चर्य है कि हिन्दू और मुसलमान दोनों एक-मत हो गये हैं। उधर अन्दर मौसी भी बिल्कुल बौखला उठी है। यह भी एक विकट व्यापार है! इस भारी हंगामेमें सिर्फ एक आदमी चुप है: और वह है स्वयं रमा। उसने किसीके विरुद्ध एक बात भी नहीं कही,—किसीको दोष नहीं दिया। अभी तक उसके मुँहसे आक्षेप या अभियोगका एक वाक्य भी नहीं निकला। यह क्या वही रमा है? इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि वह बहुत ही बीमार है। लेकिन वह इसे स्वीकार नहीं करती,—हँसकर उड़ा देती है। रोग रूपको नष्ट कर देता है, सो उसे तो जाने दो। पर उसमें वह अभिमान नहीं, वह क्रोध नहीं, वह जिद नहीं। उसकी आँखें मानो व्यथा और करुणासे भरी हुई हैं। जरा-सा ध्यान देनेसे ही जान पड़ता है कि मानो इन दोनो उज्जल आवरणोंके नीचे रुदनका समुद्र दबा हुआ है, जो मुक्ति पानेपर सारे ससारको बहा दे सकता है! चंडी-मंडपके अन्दरवाले दरवाजेमें आकर रमा देवीकी प्रतिमाके पास खड़ी हो गई। उसे देखते ही शुभाकांक्षियोंका दल खूब जोर जोरसे छोटी जातिके लोगोंके चौदह पुरखोंके नाम ले लेकर गाली-गलौज करने लगा। सुनकर रमा सिर्फ जरा-सी मुस्कराई। उसकी यह मुस्कराहट ठीक उसी तरहकी थी, जिस तरहकी मुस्कराहट उस फूलकी होती है जिसे आदमी डालमेंसे तोड़कर अपने हाथमें ले लेता है। उससे राग द्वेष, आशा-निराशा, भलाई-बुराई कुछ भी प्रकट नहीं हुई। और यह भी कौन जाने कि वह हँसी सार्थक थी या निरर्थक!

वेणीने बिगड़कर कहा—नहीं, नहीं, यह हँसीकी बात नहीं है। यह बड़े

भारी सर्वनाशकी बात है। जब जानूँगा कि इसका मूल कौन है तो उसे (दोनो हाथोंकी हथेलियाँ मिलाकर) इस तरहसे मसल दूँगा।'

रमा मन ही मन कॉप उठी। वेणी फिर कहने लगे—वे हरामज़ादे साले यह नहीं जानते कि जिसके जोरपर इतना जोर करते हैं, वह रमेश आप ही जेलमे पड़ा घानी चला रहा है। फिर भला तुम लोगोंको मारनेमें मुझे कितनी-सी देर लगेगी?

रमाने कुछ भी न कहा। वह जिस कामके लिए आई थी, उसे पूरा करके चुपचाप चली गई।

आज प्रायः डेढ़ महीना हुआ रमेश इस अपराधमे जेल काट रहे हैं कि उन्होंने अवैध रूपसे भैरवके घरमें प्रवेश करके उन्हें छुरीसे मारना चाहा था। मुकद्दमेमे मुद्दईको विशेष परिश्रम नहीं करना पड़ा। नये मजिस्ट्रेट साहबको न जाने किस तरह पहले ही मालूम हो गया था कि आसामीके लिए इस प्रकारके अपराध करना बहुत ही सम्भव और स्वाभाविक है! इस विषयमें भी उन्हें यथेष्ट सन्देह था कि डकैती आदिके साथ भी आसामीका सम्बन्ध है। थानेके रजिस्टरसे भी उन्हें विशेष सहायता मिली। उसमें लिखा है कि रमेशने ठीक इसी तरहके कई अपराध पहले भी किये हैं; और उनके सम्बन्धमें इस तरहकी और भी बहुत-सी सन्देहजनक बातें कही जाती हैं। मजिस्ट्रेट साहबने अपने फैसलेमें अपना यह मन्तव्य प्रकट करनेमें भी कसर नहीं की कि भविष्यमें पुलिसको उसपर खास तौरपर नजर रखनी चाहिए। अधिक गवाहियोंकी भी आवश्यकता नहीं पड़ी, पर रमाको गवाही देनी पड़ी थी। उसने कहा था—भैरव आचार्यके मकानमें घुसकर रमेश उन्हें मारने आये थे, इतना मैं जानती हूँ। मगर छुरी मारी थी या नहीं, नहीं जानती। यह भी मुझे याद नहीं आता कि उनके हाथमें छुरी थी या नहीं।

लेकिन क्या यही सच था? जिलेकी अदालतमे तो हलफ लेकर रमा यह सच बात कह आइ, लेकिन जिस अदालतमें हलफ लेनेकी प्रथा नहीं है, उसमें वह क्या जवाब देगी? भला उससे बढ़कर और कौन आदमी निस्सन्देह रूपसे यह जानता है कि रमेशने छुरी नहीं चलाई और उसके हाथमें अस्त्र होना तो दूर रहा, एक तिनका तक नहीं था? उस बड़ी अदालतमें तो यह उससे कोई पूछेगा तक नहीं कि वह कौन-सी बात स्मरण कर सकती है और कौन-सी नहीं। लेकिन यहाँकी अदालतमें उसके पास सच बोलनेके लिए

कोई रास्ता ही नहीं था। वेणी आदिके हाथका ग्राम्य-समाज सत्य नहीं चाहता। यह बात वह निस्सन्देह रूपसे जानती थी कि अगर वह सच बोलेगी तो उसके बदलेमें उसे झूठे अपवादकी गहरी कालिख अपने मुँहपर लगाकर समाजके बाहर निकल जाना पड़ेगा; और इस प्रकार बहुतोंको निकलना भी पड़ा है। इसके सिवा रमाने स्वप्नमें भी इस बातकी कल्पना नहीं की थी कि रमेशको इतनी भारी सजा दी जायगी। वह यही समझती थी कि बहुत होगा तो सौ दो सौ रुपया जुरमाना हो जायगा। बल्कि जब बार बार सचेत कर देनेपर भी रमेशने अपना काम छोड़कर किसी तरह वहाँसे भाग जाना मंजूर न किया, तब उसने नाराज होकर मन ही मन यह कामना भी की थी कि जुरमाना हो जाय तो अच्छा ही है, एक बार शिक्षा तो मिल जायगी। लेकिन उसने यह नहीं सोचा था कि रमेशको इस प्रकार शिक्षा मिलेगी, उनका रोगसे दुर्बल और पीला पड़ा हुआ चेहरा देखकर भी मजिस्ट्रेटको दया नहीं आवेगी; और वह एक दमसे छः महीनेकी कड़ी सजा सुना देगा। उस समय रमा स्वयं रमेशके मुँहकी ओर नहीं देख सकी थी। पर, दूसरोंके मुँहसे उसने सुना कि उस समय रमेश बराबर टक लगाकर उसीके मुँहकी तरफ देख रहे थे; और जेलका हुक्म हो जानेपर जब गोपाल सरकारने अपीलके लिए प्रार्थना की तो उसके उत्तरमें उन्होंने सिर हिलाकर कह, दिया, "नहीं। अगर मजिस्ट्रेट सारी उमर जेलमें रहनेका हुकुम दे दे, तो भी मैं अपील करके छूटना नहीं चाहता। मुझे ऐसा मालूम होता है कि जेल इससे कहीं अच्छा है।"

अच्छा ही तो है! उन लोगोंके चिरानुगत भैरव आचार्यने जब झूठी फरियाद करके उनका ऋण अदा किया और जब रमा इजलासपर खड़ी होकर यह स्मरण न कर सकी कि उसके हाथमें छुरी थी या नहीं, तब वे अपील करके छुटकारा चाहें किसके लिए?

उनकी वह दुर्जय घृणा भारी पत्थरकी तरह रमाकी छातीपर खूब जमकर बैठ गई है और वह उसे हटाकर कहीं भी रखनेको जगह नहीं पा रही है! आह! वह भार कितना भारी है! यह कैफियत तो उसके अन्तर्यामीने किसी भी तरह मंजूर नहीं की कि मैं अदालतमें झूठ बोलकर नहीं आई हूँ। वह झूठ भले ही न बोली हो, पर सच बात भी उसने नहीं कही। क्या अच्छा होता यदि उस समय वह यह जान सकती कि सचको छिपानेका अपराध इतना बड़ा है और वह उसे इस तरह दिन-रात जलाता रहेगा! रह रहकर

उसे यही खयाल आता था कि भैरवके जिस अपराधके कारण रमेश आपेसे बाहर हो गये थे वह अपराध कितना बड़ा था ! फिर भी वे मेरी सिर्फ एक बातपर उसे माफ करके और बिना कुछ कहे-सुने चले गये थे ! मेरी इच्छाको इस प्रकार शिरोधार्य करके आज तक कब किसने मुझे इतना सम्मानित किया था ? वह अन्दर ही अन्दर जल-कर आज-कल मानो एक सत्यको देख रही थी। जिस समाजके भयसे मैंने इतना बड़ा गर्हित काम कर डाला, वह समाज कहाँ है ? वेणी आदि कुछ समाजपतियोंके स्वार्थ और क्रूर हिंसाके बाहर भी कहीं उस समाजका कोई अस्तित्व है ? गोविन्दकी विधवा भौजाईकी बात कौन नहीं जानता ? वेणीके साथ उसके सम्बन्धकी बात गाँव-भरमें किसीसे छिपी नहीं हैं। लेकिन फिर भी वह समाजके आश्रयमें निष्कण्टक होकर बैठी है और यह वेणी ही समाजपति है ! उसीकी सामाजिक शृंखलासे अपने सर्वांगको सैकड़ों लपेटे देकर जकड़े रखना ही चरम सार्थकता है और यही हिन्दुत्व है ! किन्तु रमा अपनी तरफ देखकर उस भैरवपर भी क्रोध नहीं कर सकी जो इतने अनर्थोंकी जड़ था। उसकी लड़की बारह बरसकी हो गई है। अगर जल्दी ही वह उसका व्याह न कर सकेगा, तो उसे जातिसे बाहर होना पड़ेगा,—घर-भरके सब लोगोंकी जाति चली जायगी ! इस प्रमादकी आशंका-मात्रसे ही तो हिन्दुओंके हाथ पैर उनके पेटमें घुस जाते हैं। सब तरहका सुभीता होनेपर भी वह स्वयं जिस समाजका भय नहीं छोड़ सकी उसे भला गरीब भैरव किस तरह छोड़ देता ? यह बात तो वह किसी तरह अस्वीकृत नहीं कर सकी कि वेणीके विरुद्ध जाना उसके लिए कितना अधिक घातक था !

बूढ़ा सनातन हाजरा घरके सामनेसे जा रहा था। गोविन्दने उसे देखते ही पहले तो पुकारा, फिर मिन्नत खुशामद की; और तब अन्तमें एक प्रकारसे जबरदस्ती ही हाथ पकड़कर उसे वेणी बाबूके सामने लाकर हाजिर कर दिया। वेणीने गरम होकर कहा—क्यों सनातन, तुम लोगोंका इतना दिमाग कबसे चढ़ गया है ? क्या तुम लोगोंके कन्धोंपर एक और सिर निकल आया है ?

सनातनने कहा—बड़े बाबू, भला दो सिर किसके हो सकते हैं ! जब आप जैसे लोगोंके दो सिर नहीं, तब हमारे जैसे गरीबोंके कैसे होंगे !

"क्या कहता है बे !"

कहकर और चिल्लाकर वेणी बाबू मारे क्रोधके निर्वाक् हो गये। अभी कुछ दिन पहले सनातनका सर्वस्व वेणी बाबूके यहाँ रेहन पड़ा था। उस समय यही

सनातन सवेरे-सन्ध्या दोनों समय आ आकर उनके पैरों पड़ता था। आज उसीके मुँहसे यह बात !

सनातनने कहा—बड़े बाबू, मैंने तो खाली यही कहा है कि दो सिर किसीके नहीं होते। और तो कुछ कहा नहीं।

गोविन्दने चढ़ाते हुए कहा—हम लोग तो सिर्फ यही देख रहे हैं कि तुम लोगोंकी छाती कितनी मजबूत है। भला बतलाओ तो कि तुम लोग माताका प्रसाद तक लेनेके लिए क्यों नहीं आये ?

बूढेने हँसकर कहा—हमारी छातीकी मजबूती ! जो कुछ करना था, सो तो हमारा आप कर ही चुके। लेकिन उसे जाने दीजिए। किन्तु चाहे माताका प्रसाद हो और चाहे जो हो, अब कोई कैवर्त किसी ब्राह्मणके घर खाने न आवेगा। हम लोग तो आपसमें यही कहते हैं कि इतना बड़ा पाप माता वसुन्धरा सहती कैसे हैं !

इतना कहकर हाजरोंने एक निःश्वास डालकर और रमाकी तरफ देखकर कहा—बहिन, आप जरा सावधान रहा करें। पीरपुरके मुसल्मान लौंडे एकदम पागल-से हो रहे हैं। छोटे बाबूके लौट आनेपर क्या होगा, यह तो दुर्गा माई ही जानें। पर अभी इसी बीचमें वह लोग दो-तीन बार बड़े बाबूके घरका चक्कर लगा गये हैं। वह तो खैरियत हुई कि बड़े बाबूका सामना नहीं हुआ।

इतना कहकर सनातनने वेणीकी तरफ देखा। पलक मारते ही वेणीका क्रुद्ध मुख मारे भयके विवर्ण हो गया। सनातन फिर कहने लगा—बड़े बाबू, मैं दुर्गा माईके सामने झूठ नहीं कहता; आप जरा सँभलकर रहिएगा। रात-बिरात बाहर मत निकलिएगा। न जाने कब कौन कहाँ घातमें बैठा हो !

वेणी कुछ कहना चाहते थे, लेकिन उनके मुँहसे बात ही नहीं निकली। शायद उनके जैसा डरपोक आदमी दुनिया-भरमें न होगा।

इतनी देर बाद रमा बोली। उसने स्नेहपूर्ण और करुण स्वरसे पूछा—क्यों सनातन, छोटे बाबूके कारण ही तुम लोग शायद इतने नाराज हो ?

सनातनने एक बार दुर्गाकी प्रतिमाकी ओर देखकर कहा—झूठ बोलकर नरकमें क्यों जाऊँ बहिन ! यही बात है। लेकिन मुसल्मानोंका गुस्सा ही सबसे ज्यादा है। यह लोग छोटे बाबूको हिंदुओंका पैगम्बर मानते हैं। और आप लोग उसका सबूत भी देख लीजिए। जिस जाफरअलीसे कभी कोई एक पैसा

भी वसूल नही कर सका, उसीने छोटे बाबूके जेल जानेके दिन उनके स्कूलके लिए एक हजार रुपये दान दे दिये ! मैं तो सुनता हूँ कि मसजिदमें छोटे बाबूके नामकी नमाज तक पढ़ी जाती है !

रमाका सूखा और म्लान मुख अव्यक्त आनन्दसे चमक उठा। वह चुपचाप अपनी प्रदीप्त और निनिमेष आँखोंसे सनातनके मुँहकी तरफ देखती रही। वेणीने एकाएक सनातनका हाथ पकड़कर कहा—सनातन, तुम्हें जरा दारोगाजीके पास चलकर यह बात कहनी पड़ेगी। तुम जो माँगोगे, मैं वही तुम्हें दूँगा। अगर दो बीघे जमीन भी लेना चाहोगे, तो वह भी तुम्हे मिल जायगी। मैं देवताके सामने कसम खाता हूँ सनातन, तुम ब्राह्मणकी बात मान लो।

सनातन विस्मित होकर कुछ देर तक वेणीके मुँहकी तरफ देखता रहा। फिर बोला—बड़े बाबू, अब भला मुझे कितने दिन जीना है ! अगर मैं लालचमें पड़कर यह काम करके मरूँ, तो मेरा मुरदा उठाना तो दूर रहा, कोई पैरसे भी न छूएगा। अब वह जमाना नहीं रहा बड़े बाबू, अब वह जमाना नहीं रहा। छोटे बाबू सब उलट पुलट कर गये हैं।

गोविन्दने पूछा—तो फिर ब्राह्मणकी बात नहीं रखेगा ? क्यों ?

सनातनने सिर हिलाकर कहा—नहीं। गाँगूलीजी, मैं कहूँगा तो तुम नाराज हो जाओगे, लेकिन उस दिन पीरपुरके नये स्कूलमें छोटे बाबूने कहा था—गलेमें दो-चार सूतके धागे डाल लेनेसे ही कोई ब्राह्मण नहीं हो जाता। मैं कोई आजका तो हूँ नही, मैं सब जानता हूँ। जो कुछ आप करते फिरते हैं, वह क्या ब्राह्मणोंका काम है ? बहिन, मैं तुमसे ही पूछता हूँ, तुम्हीं कहो।

रमाने बिना कोई उत्तर दिये सिर झुका लिया। सनातन और भी उत्साहित होकर अपने मनका गुबार निकालता हुआ कहने लगा—और खास करके यह लौंडोंका दल ! जिस दिनसे छोटे बाबू जेल गये हैं, उसी दिनसे दोनों गाँवोंके सभी लौंडे सन्ध्याके बाद जाकर जाफरअलीके घर एकट्ठे होते हैं। वे तो चारों तरफ खुले आम कहते फिरते हैं कि जमींदार तो छोटे बाबू हैं, बाकी सब चोर और डाकू हैं। इसके सिवाय हम लोग लगान दे कर रहते हैं, किसीसे डरेंगे नहीं। और अगर वह ब्राह्मणकी तरह रहें, तो ब्राह्मण हैं, नहीं तो जैसे हम हैं वैसे वह।

वेणीने आतंकित होकर सूखे हुए मुँहसे पूछा—क्यों सनातन, तुम यह बतला सकते हो कि हमपर ही उनका इतना क्रोध क्यों है ?

सनातनने कहा—बड़े बाबू, आप नाराज न हों, किन्तु उन लोगोंको यह जानना बाकी नहीं रहा है कि सारे अनर्थोंकी जड़ आप ही हैं।

वेणी चुपचाप बैठे रहे और छोटी जातिके सनातनके मुँहसे इस तरहकी बातें सुनकर भी नाराज नहीं हुए। कारण, उस समय उनके मनकी अवस्था नाराज़ होने जैसी नहीं थी। मारे डरके उनकी छाती धड़क रही थी।

गोविन्दने पूछा—तो फिर उन लोगोंका अड्डा जाफरके घरमें है? तुम बतला सकते हो कि वहाँ वे सब क्या किया करते हैं?

सनातन पहले तो उनके मुँहकी ओर देखकर मानों कुछ सोचने लगा। फिर बोला—क्या किया करते हैं, सो तो नहीं जानता। लेकिन महाराज, अगर भला चाहते हो, तो कोई मतलब गाँठनेके फेरमें न पड़ना। वहाँ हिन्दू-मुसलमानोंने आपसमें भाई-चारा स्थापित कर लिया है। दोनों एक मन और एक प्राण हैं। छोटे बाबूके जेल जानेके बादसे सब मारे क्रोधके बारूदके ढेर हो रहे हैं, उनके बीच चकमक रगड़कर आग लगाने मत जाना महाराज!

सनातन चला गया। बहुत देर तक कोई कुछ बात न कर सका। जब रमा उठकर जाने लगी, तब वेणीने कहा—रमा, सब हाल सुन लिया न?

रमा मुस्कराकर रह गई, कुछ बोली नहीं। इस मुस्कराहटसे वेणीके शरीरमें आग लग गई। उसने कहा—इस साले भैरवके लिए ही यह सब हुआ। अगर उस दिन तुम वहाँ पहुँचकर उसे न छुडा देतीं तो यह सब कुछ भी न होता। रमा, तुम तो हँसोगी ही, औरत ठहरीं। तुम्हें घरसे बाहर तो निकलना ही नहीं पडता। लेकिन भला बतलाओ कि अब हम लोगोंका क्या होगा? अगर सचमुच किसी दिन कोई सिर फोड दे तो? औरतोंके साथ कोई काम करनेमें यही दगा होती है!

इतना कहकर वेणी मारे क्रोध, भय और ज्वालाके न जाने कैसा मुँह बनाकर बैठे रहे। रमा स्तंभित हो गई। वेणीको वह अच्छी तरह पहचानती थी लेकिन इस प्रकारके निर्लज्जतापूर्ण अभियोगकी वह उससे भी आशा नहीं कर सकती थी। थोड़ी देर तक खडी रहनेके बाद बिना कोई उत्तर दिये वहाँसे चली गई। इसके बाद वेणीने हाँक लगाई और अपने साथ दो लालटेनें और पाँच-छः आदमी बुलाकर चारों ओर सतर्क दृष्टिसे देखते हुए, घबराये और डरे हुए, वहाँसे चल दिये।

१७

विश्वेश्वरीने कमरेके अन्दर पहुँचकर और आँखोंमें आँसू भरकर भर्राई आवाजसे पूछा—बेटी रमा, आज कैसी तबीयत है ?

रमाने उनके मुँहकी ओर देखकर और कुछ हँसकर कहा—ताईजी, आज ठीक है।

विश्वेश्वरी आकर उसके सिरहाने बैठ गई और चुपचाप उसके सिर और मुँहपर हाथ फेरने लगीं। आज तीन महीनेसे रमा बिछौनेपर पड़ी है। उसे जोरकी खाँसी है और मलेरियाका जहर उसके सारे शरीरमें व्याप्त हो गया है। गाँवके बूढ़े कविराज जी-जानसे व्यर्थ चिकित्सा करके मरे जा रहे हैं। बूढ़ेको मालूम न था कि किस चीजके अविश्रान्त आक्रमणसे रमाकी नस नस जलकर राख होती जा रही है। केवल विश्वेश्वरीके मनमें एक संशयकी छाया धीरे धीरे गहरी हो रही थी। वे रमाको अपनी कन्याकी ही तरह प्यार करती थीं, उसमें कोई वंचना न थी। इसीलिए, उस अत्यन्त स्नेहने ही रमाके सम्बन्धमें उनकी सत्य दृष्टिको असामान्य रूपसे तीक्ष्ण कर दिया था। और लोग, जब भ्रमसे गलत समझकर गलत आशा करके, गलत व्यवस्था करने लगे, तब विश्वेश्वरीका कलेजा फटने लगा। वह देख रही थी कि रमाकी दोनों आँखें दिनपर दिन गढ़ेमें धँसी जा रही हैं; किन्तु दृष्टि बहुत ही तीव्र है। ऐसा जान पड़ता था कि बहुत दूरकी किसी चीजको अपने बहुत ही पास लाकर देखनेकी एकाग्र वासनासे यह ऐसी असाधारण हो उठी है। विश्वेश्वरीने धीरेसे पुकारा—रमा !

रमाने कहा—क्यों ताईजी ?

"रमा, मैं तो तुम्हारी माँकी तरह हूँ—"

रमाने बीचमें ही रोककर कहा—माँकी तरह क्यों हो ताईजी, तुम तो मेरी माँ ही हो।

विश्वेश्वरीने झुककर रमाका मस्तक चूम लिया और कहा—तो फिर बेटी, सच सच बतलाओ कि तुम्हें क्या हुआ है ?

रमाने कहा—ताईजी, बीमारी है।

विश्वेश्वरीने देखा कि रमाका पीला पड़ा हुआ चेहरा क्षण-भरके लिए मानों लाल हो गया। तब उन्होंने बहुत ही स्नेहपूर्वक उसके रूखे बालोंपर एक बार हाथ फेरकर कहा—हाँ बेटी, यह तो इन चमड़ेकी आँखोंसे भी दिखाई

देता है। लेकिन जो इनसे नहीं दिखता, ऐसा अगर कुछ हो, तो वह इस समय मुझसे मत छिपाना। छुपानेसे तो बीमारी अच्छी होगी नहीं।

खिड़कीके बाहर अभी तक सवेरेकी धूप तेज नहीं हुई थी और मृदु-मन्द वायु शीत-कालका आभास दे रही थी। उसी तरफ देखकर रमा चुप रह गई। थोड़ी देर बाद उसने पूछा—ताईजी, अब बड़े भइया कैसे हैं?

विश्वेश्वरीने कहा, "अच्छा है। सिरका घाव भरनेमें अभी कुछ देर लगेगी, लेकिन पाँच-छः दिनके अन्दर ही अस्पतालसे घर आ जायगा।" फिर रमाके मुखपर वेदनाके चिह्न देखकर कहा, "बेटी, दुःख मत करो। उसे इसकी जरूरत थी। इससे उसका भला ही होगा।"

रमाके मुखपर विस्मयका आभास देखकर फिर कहा—तुम यह सोच रही हो कि माँ होकर भी मैं अपनी सन्तानकी इतनी बड़ी दुर्घटनाके बारेमें इस तरहकी बात कैसे कह रही हूँ? लेकिन बेटी, मैं तुमसे ठीक कहती हूँ कि मैं यह नहीं जानती कि इससे मुझे कष्ट अधिक हुआ है या आनन्द। क्योंकि मैं जानती हूँ कि जो लोग अधर्मसे नहीं डरते और जिन लोगोंको लोक-लज्जाका भय नहीं होता, उन लोगोंको अगर अपने प्राणोंका इतना अधिक भय न हो, तो फिर सारा संसार ही जलकर राख हो जाय। इसलिए रमा, मुझे तो बस यही मालूम होता है कि यह कल्लूका लड़का वेणीका जो उपकार कर गया है, वह संसारमें दूसरा कोई आत्मीय बन्धु भी नहीं कर सकता था। बेटी, कोयलेको धोनेसे उसका रंग नहीं बदला जा सकता, उसे आगमें जलाना पड़ता है।

रमाने पूछा – क्या घरपर उस समय कोई नहीं था?

विश्वेश्वरीने कहा—थे क्यों नहीं, सभी लोग थे। लेकिन वह कुछ यों ही तो मार नहीं बैठा था। वह तो जेल जानेका निश्चय करके ही तेल बेचने आया था। बेटी, उसे निजके सम्बन्धका तो जरा भी क्रोध न था। इसीलिए जब उसकी बाँकके एक ही घावसे वेणी बेहोश होकर गिर पड़ा, तब वह चुपचाप खड़ा रहा। फिर उसने और वार नहीं किया। इसके सिवा वह चलते समय यह भी कह गया कि अगर अब भी वेणी सावधान न होंगे, तो मैं चाहे कभी लौटूँ या न लौटूँ, लेकिन वे समझ रक्खें कि यही मार आखिरी मार नहीं होगी।

रमाने धीरेसे कहा—तो इसका मतलब यह हुआ कि अभी और भी आदमी

भइयाके पीछे लगे हैं। लेकिन ताईजी, हमारे यहाँके छोटी जातिके लोगोंमें पहले तो इतना साहस नहीं था। अब यह कहाँसे आ गया?

विश्वेश्वरीने कुछ हँसकर कहा, वेटी, क्या तुम स्वयं नहीं जानती हो कि छोटी जातिके इन लोगोंका इतना हौसला किसने बढ़ा दिया है? रमा, जब आग जल उठती है तब यों ही नहीं बुझ जाती है। मेरा वह वेटा लौट आवे, दीर्घजीवी हो और फिर जहाँ उसकी खुशी हो, वहाँ जाय। वेणीकी बात याद करके मैं कभी लम्बी साँस न छोड़ूँगी।

लेकिन मुँहसे इस तरह कहनेपर भी विश्वेश्वरीने एक निःश्वासको जबर्दस्ती दबा दिया। रमा इसे ताड़ गई। थोड़ी देरमें अपने आपको सँभालकर विश्वेश्वरीने फिर कहा—रमा, यह केवल माँ ही जानती है कि अकेली एक सन्तान कैसी होती है। जब वेणीको वेहोशीकी हालतमें लोग उठाकर और पालकीमें लेटाकर अस्पताल ले गये, तब मेरी जो हालत हुई थी, वह मैं तुम्हें नहीं बतला सकती। लेकिन फिर भी वेटी, मैंने किसीको न कोसा और न मैं किसीको दोष ही दे सकी। इस बातको मैं न भूल सकी वेटी, कि अकेली सन्तान समझकर धर्मका दंड तो माताके मुँहको देखकर चुपचाप वैठा नहीं रहेगा!

रमाने कुछ सोचकर कहा—ताईजी, मैं तुमसे बहस तो नहीं करती, लेकिन अगर यही बात है तो फिर रमेश भइया किस पापके कारण इतना दुःख भोग रहे हैं? हम लोग ही प्रयत्न करके उन्हें जेल भेज आये हैं, यह तो किसीसे छुपा नहीं है।

ताईजीने कहा—नहीं वेटी, यह बात नहीं है। छुपा नहीं है, इसीलिए तो आज वेणी अस्पतालमें है। और तुम्हारा—।

इतना कहकर वह सहसा रुक गईं और जो बात उनकी जबान तक आ चुकी थी, उसे जबरदस्ती अन्दर ढकेलकर वोलीं—जानती हो वेटी, कोई काम कभी यों ही शून्यमें नहीं मिल जाता। उसकी शक्ति कहीं न कहीं जाकर काम करती रहती है। लेकिन हर समय यह समझमें नहीं आता कि वह कैसे करती है। इसी लिए आज तक इस समस्याकी कोई मीमांसा नहीं हो सकी है कि एक आदमीके पापका प्रायश्चित्त दूसरेको क्यों करना पड़ता है। लेकिन रमा, इस बातमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि प्रायश्चित्त करना अवश्य पड़ता है।

रमाने अपने व्यवहारका स्मरण करके चुपचाप एक साँस छोड़ दी। विश्वेश्वरी कहने लगीं—रमा, इससे मेरी भी आँखें खुल गई हैं। हम भला करेंगे, कहनेसे ही किसीका भला नहीं किया जा सकता। शुरूकी बहुत-सी छोटी-बड़ी सीढ़ियाँ पार करनेका धैर्य होना चाहिए। एक दिन रमेश हताश होकर मुझसे कहने आया था कि ताईजी, इन लोगोंकी भलाई मेरे किये न हो सकेगी; इसलिए अब मैं जहाँसे आया हूँ, वहीं चला जाऊँगा। उस समय मैंने उसे रोककर कहा था कि नहीं बेटा, अगर तुमने काम शुरू किया है तो उसे छोड़कर भागना मत। मेरी बात तो वह किसी तरह टाल नहीं सकता। इसीलिए, जिस दिन मैंने सुना कि उसे जेलका हुक्म हो गया है, उस दिन मुझे ऐसा मालूम हुआ कि मानों मैंने ही उसे जबरदस्ती धर-पकड़कर यह सजा दी है। लेकिन इसके बाद जिस दिन लोग वेणीको अस्पताल ले गये, उस दिन पहले पहल मालूम हुआ कि नहीं, उसे भी जेल जानेकी जरूरत थी। और फिर बेटी, यह तो जानती न थी कि बाहरसे दौड़े आकर भलाई करने जानेमें भी इतनी विडम्बना है और वह काम इतना कठिन है! यह बात तो कभी सोची ही नहीं थी कि पहले सबमें मिल जाना चाहिए। जब तक भले और बुरे सभी कामोंमें मिलकर आदमी एक न हो जाय, तब तक वह किसी तरह भलाई नहीं कर सकता। वह आरम्भसे ही अपनी शिक्षा, संस्कार, शारीरिक बल और उच्च हृदय लेकर इतनी ऊँचाईपर आ खड़ा हुआ था कि आखीर तक कोई उस तक पहुँच ही न सका। लेकिन बेटी, यह तो मैं देख नहीं सकी। मैंने उसे जाने भी न दिया और मैं उसे रख भी न सकी।

रमाने कुछ कहना चाहा, पर दबा गई। विश्वेश्वरीने उसका अनुमान करके कहा—नहीं रमा, मैं इसके लिए नहीं पछताती हूँ। लेकिन बेटी, तुम सुनकर नाराज मत होना। इस बार जो तुम लोगोंने उसे उस ऊँचाईसे नीचे उतारकर सब लोगोंके साथ मिला दिया, इसमें तुम लोगोंने चाहे कितना ही अधर्म क्यों न किया हो, पर फिर भी मैं जोर देकर कहे जाती हूँ कि इस बार जब वह लौटकर आवेगा, तब उसे यथार्थ सत्यका दर्शन होगा।

रमाकी समझमें यह बात नहीं आई। उसने पूछा—लेकिन ताईजी, इससे वह नीचे क्यों उतर आवेंगे? हम लोगोंके अन्याय और अधर्मके कारण उन्हें चाहे कितनी ही अधिक यातनाएँ क्यों न भोगनी पड़ें, परन्तु हम लोगोंके

दुष्कर्म तो हम ही लोगोंको नरकके अँधेरे कुएँमें ढकेलेंगे। उन्हें हमारे दुष्कर्म क्यों स्पर्श करने लगे?

विश्वेश्वरीने म्लान भावसे कुछ हँसकर कहा—बेटी, करेंगे क्यों नहीं? नहीं तो फिर पाप इतना भयंकर क्यों है? यदि उपकारके बदलेमें कोई प्रत्युपकार न करे, बल्कि उलटा अपकार ही करे, तो उससे भी क्या आता-जाता है, यदि उसकी कृतघ्नता दाताको नीचे न घसीट लावे? बेटी, क्या तुम यह समझती हो कि रमेश जब लौटकर आवेगा, तब तुम्हारा कुआँपुर गाँव उसको फिर पहले ही जैसा पावेगा? नहीं, जब वह लौटकर आवेगा तब तुम स्पष्ट देखोगी कि वह जिस हाथसे लोगोंको दान देता फिरता था उसका वह हाथ भैरवने मरोड़कर तोड डाला है। (कुछ ठहरकर) लेकिन कौन जाने; हो सकता है कि यह भी अच्छा ही हुआ हो। उसके बलिष्ठ और पूरे हाथका अपरिमित दान ग्रहण करनेकी शक्ति जब इस गाँवके लोगोंमें नहीं थी, तब शायद उसका यह टूटा हुआ हाथ अबकी बार उन लोगोंके सचमुचके काम आये।

यह कहकर विश्वेश्वरीने एक लम्बी साँस छोड़ी। रमा कुछ देर तक उनका हाथ चुपचाप इधर उधर हिलाती रही और फिर धीरे धीरे बहुत ही करुण स्वरमें बोली—अच्छा ताईजी, झूठी गवाही देकर किसी निरपराधको दंड दिलानेवालेकी क्या सजा है?

विश्वेश्वरीने खिड़कीकी तरफ देखते हुए रमाके बिखरे बालोंमें हाथ फेरते फेरते हठात् देखा कि रमाकी बन्द आँखोंके किनारोंसे आँसू बह बह कर ढुलक रहे हैं। उन्होंने स्नेहपूर्वक उन्हें पोंछते हुए कहा—लेकिन बेटी, इसमें तुम्हारा तो कोई हाथ था नहीं। जिन कायरोंने स्त्री-जातिके इतने बड़े कलंकका भय दिखलाकर तुमपर यह अत्याचार किया है, इस गुरु दण्डका सारा बोझा उनके ही सिर है। बेटी, तुम्हें तो उसका कुछ भी बोझ न उठाना पड़ेगा।

यह कहकर विश्वेश्वरीने फिर रमाके आँसू पोंछ दिये। लेकिन इतने आश्वासनसे ही रमाके रुके हुए आँसू झरनेकी नाईं बह पड़े। कुछ देर बाद उसने कहा—लेकिन, वे लोग तो उनके शत्रु ठहरे। वे तो कहते हैं कि चाहे जिस तरह हो, शत्रुको मार गिरानेमें दोष नहीं है। लेकिन ताईजी, मैं तो यह कैफियत नहीं दे सकती!

ताईजीने पूछा—क्यों बेटी, तुम क्यों नहीं दे सकतीं?

इतना पूछकर ज्यों ही ताईजीने दृष्टि कुछ नीचे की, त्यों ही अचानक

उनकी आँखोंके आगे मानों बिजली खेल गई। इतने दिनों तक जो सन्देह मुँह ढककर उनके मनमें अकारण ही आता-जाता रहता था, वह मानों आज अपना मुखौटा फेंककर एकदम सीधा सामने आकर खड़ा हो गया। आज उसे पहचानकर विश्वेश्वरी कुछ देरके लिए वेदना और विस्मयसे स्तम्भित हो गई। अब रमाके हृदयकी व्यथा उनसे और छिपी न रही। रमाने आँखें बन्द कर रक्खी थीं, इसलिए वह विश्वेश्वरीके मुखका भाव न देख सकी। उसने पुकारा—ताईजी।

ताईजीने चकित होकर उसका सिरा जरा सा हिलाया और कहा—कहो, क्या है?

रमाने कहा,—ताईजी, आज मैं तुम्हारे आगे एक बात स्वीकार करूँगी। पीरपुरके जाफरअलीके घरमें सन्ध्याके बाद गाँवके सब लड़के मिलकर रमेश भइयाके कहनेके अनुसार अच्छी बातोंपर विचार किया करते थे। लेकिन यहाँ यह साजिश चल रही थी कि उन्हें बदमाशोंका दल कहकर पुलिसके हाथ दे दिया जाय। इसपर मैंने अपना आदमी भेजकर उन लोगोंको सावधान कर दिया था। पुलिस तो यह चाहती ही है। एक बार हाथमें पानेपर फिर तो वह उन्हें छोड़ती नहीं।

विश्वेश्वरी यह बात सुनकर सिहर उठी। बोली—है! यह तुम क्या कहती हो? क्या वेणीने गाँवमें पुलिसका इस तरहका उत्पात झूठे ही बुलाना चाहा था?

रमाने कहा—मैं तो समझती हूँ कि बड़े भइयाको जो यह दंड मिला है, सो उसीका फल है। पर ताईजी, क्या तुम इसके लिए मुझे माफ कर सकोगी?

विश्वेश्वरीने झुककर रमाका ललाट चूम लिया और कहा - रमा, अगर उसकी माँ होनेके कारण मैं तुम्हें इसके लिए माफ न कर सकूँगी तो और कौन कर सकेगा? मैं तो आशीर्वाद देती हूँ, भगवान तुम्हें इसका पुरस्कार दे।

रमाने अपने हाथसे आँखें पोंछकर कहा ताईजी, मुझे तो सिर्फ इसी बातकी सान्त्वना है कि वे लौट आकर देखेंगे कि उनके कुलका क्षेत्र प्रस्तुत हो गया है। वह जो चाहते थे, वह हो गया— उनके देशके गरीब किसानोंकी नींद टूट गई और वे उठ बैठे हैं। उन्हें पहचान गये हैं और उनसे प्रेम भी करने लगे हैं। ताईजी, इस प्रेमके आनन्दमें क्या वे मेरे अपराधको भूल न सकेंगे?

विश्वेश्वरी कुछ कह न सकीं, सिर्फ उनकी आँखोंसे एक बूँद और लुढ़ककर रमाके कपालपर जा पड़ा। इसके बाद दोनों बहुत देर तक चुप रहीं। रमाने पुकारा—ताईजी।

विश्वेश्वरीने पूछा—क्या है बेटी!

रमाने कहा—सिर्फ एक ही जगह हम दोनों एक दूसरेसे दूर न हो सके। अर्थात् तुमको हम दोनों ही जनोंने प्यार किया।

विश्वेश्वरीने फिर झुककर उसका ललाट चूम लिया। रमाने कहा—उसीके जोरपर मैं तुमसे एक बात कह जाऊँगी। जिस समय मैं नहीं रहूँगी, उस समय भी यदि वे मुझे क्षमा न कर सकें, तो ताईजी, तुम मेरी तरफसे उनसे सिर्फ इतना ही कह देना कि वे मुझे जितनी बुरी समझे थे, मैं उतनी बुरी नहीं थी। और मैंने उन्हें जितना दुःख दिया है, उससे कहीं अधिक दुःख मैंने भी पाया है। तुम्हारे मुँहसे सुनकर शायद वे इस बातपर अविश्वास न कर सकेंगे।

विश्वेश्वरीने औंधे पड़कर रमाको जोरसे छातीसे चिमटा लिया और रो दिया। कहा—चलो बेटी, हम लोग किसी तीर्थमें चलकर रहें जहाँ न वेणी हो, न रमेश हो; और जहाँ आँखें उठाते ही भगवानके मन्दिरके शिखर दिखाई पड़े—वहीं चलें। मैं सब समझ गई हूँ रमा। बेटी, अगर तेरा इस लोकसे चले जानेका दिन पास आ गया हो, तो फिर यह विष छातीमें रखे जलते-भुनते रहकर वहाँ न जाया जा सकेगा। हम लोग ब्राह्मणकी सन्तान ठहरीं। वहाँ जानेके दिन हमें इसके अनुरूप ही जाकर उपस्थित होना होगा।

बहुत देर तक चुप रहनेके बाद रमाने एक उच्छ्वसित दीर्घ श्वासको रोकते हुए केवल इतना ही कहा—ताईजी, मैं भी उसी तरह जाना चाहती हूँ।

१८

शायद रमेशके लिए अपने उन्मत्त विकारमें भी इस बातकी आशा करना संभव नहीं था कि जेलखानेकी दीवारोंके बाहर भगवानने उनके समस्त दुःखोंको इस प्रकार सार्थक करनेका आयोजन कर रखा है। छः महीनेकी कडी सजा भोगनेके बाद जब वह छूटकर बाहर निकले, तब उन्हे एक ऐसी बात दिखाई दी जिसकी वे कभी कल्पना भी न कर सके थे। स्वय वेणी घोषाल सिरपर चादर लपेटे सबके आगे खड़े हैं। उनके पीछे दोनो स्कूलोंके मास्टर, पण्डित, विद्यार्थी-दल और उनके पीछे बहुत-से हिन्दू और मुसलमान।

वेणीने रमेशको खूब जोरसे गले लगाकर प्रायः रोते रोते कहा—भइया रमेश, अब जाकर मुझे पता चला है कि रक्तका आकर्षण कैसा होता है! उस समय मैंने यह बात जानकर भी नहीं जाननी चाही कि यदु मुकर्जीकी लड़की उस हरामजादे आचार्यको अपने हाथमें करके इस तरहकी शत्रुता करेगी; और लाज-शरम छोड़कर स्वयं अदालतमें झूठी गवाही देकर तुम्हें इतना दुःख देगी। भगवानने मुझे इसका दण्ड अच्छी तरहसे दिया है। भाई रमेश, बल्कि जेलमें तुम्हीं अच्छे थे। मैं तो बाहर रहने पर भी इन छः महीनोंमें भूसेकी आगमें जलता रहा हूँ।

रमेशकी समझमें ही नहीं आता था कि क्या कहें और क्या न कहें, इसलिए वह हक्के-बक्के होकर देखते रहे। हेडमास्टर पंडितजीने जमीनपर लेट कर साष्टांग दण्डवत करके उनके चरणोंकी धूल लेकर मस्तकपर लगाई। उनके पीछे जो लोग थे, उनमेंसे कोई आगे बढ़कर आशीर्वाद देता था, कोई सलाम करता था और कोई प्रणाम करता था। वेणीकी रुलाई किसी तरह रुकती ही नहीं थी। उन्होंने गद्गद स्वरसे कहा—भाई, अब अपने बड़े भइयापर रूठे न रहो और घर चलो। माँ तो रोती रोती अन्धी हुई जा रही हैं।

सामने घोड़ा-गाड़ी तैयार खड़ी थी। रमेश बिना कुछ बोले-चाले उसपर सवार हो गये। वेणीने उनके सामनेवाली जगहपर बैठकर अपने सिरपरकी चादर उतार डाली। घाव सूख जानेपर भी चोटके निशान बहुत साफ दिखाई देते थे। रमेशने चकित होकर पूछा—बड़े भइया, यह क्या हुआ?

वेणीने एक लम्बी साँस छोड़कर दाहिना हाथ उलट कर कहा—भाई दोष किसे दूँ, यह सब मेरे ही कर्मोंका फल है और मेरे ही पापोंका भोग है। लेकिन अब उसे सुनकर क्या करोगे?

वेणी अपने चेहरेपर गंभीर वेदनाकी झलक लाकर चुप हो गये। स्वयं उन्हींके मुँहसे निकली हुई इस प्रकारकी सरल स्वीकारोक्तियोंने रमेशका चित्त आर्द्र हो गया। उन्होंने समझ लिया कि कोई बात तो जरूर हुई है। लेकिन उन्होंने उसे जाननेके लिए अधिक आग्रह नहीं किया। तब वेणीने देखा कि जिसके लिए यह भूमिका बाँधी गई, वह बात यों ही दब जाना चाहती है, तब वे मन ही मन छटपटाने लगे। एक-दो मिनट चुप रहनेके बाद उन्होंने फिर एक प्रबल निःश्वासके द्वारा रमेशका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया और तब धीरे धीरे कहना शुरू किया—जन्मसे ही मुझमें यह दोष है कि मैं

मनमें कोई और बात रखकर मुँहसे कोई और बात नहीं कह सकता,—दूसरे लोगोंकी तरह अपने मनका भाव छिपाकर नहीं रख सकता; इसीलिए मुझे न जाने कितनी सजा भोगनी पड़ती है; लेकिन फिर भी होश नहीं आता।

जब वेणीने देखा कि रमेश सब बातें चुपचाप ही सुन रहे हैं, तब यह अपना स्वर और भी कोमल तथा गम्भीर बनाकर कहने लगे—मेरा दोष यही था कि उस दिन मैं अपने मनका कष्ट किसी तरह दबा न सका; और रोते रोते कह बैठा कि रमा, आखिर हम लोगोंने ऐसा-कौन सा अपराध किया था जो तुमने इस तरह हम लोगोका सर्वनाश कर डाला? जब माँ सुनेंगी कि रमेशको सजा हो गई, तब वे तो जान ही दे देंगीं। हम लोग भाई भाई जमीन-जायदादके लिए चाहे झगड़ा करें और चाहे और करें, फिर भी वह मेरा भाई तो है। लेकिन तुमने तो एक ही आघातसे मेरे भाईको भी मारा और माँको भी मारा। लेकिन निर्दोषके भगवान हैं!

इतना कहकर वेणीने गाड़ीके बाहर सिर निकालकर और आकाशकी ओर देखकर मानों फिर एक बार भगवानके सामने अपनी फरियाद की। रमेश उनकी इस फरियादमें शामिल तो नहीं हुए, पर हाँ, मन लगाकर सुनने लगे। वेणीने कुछ रुककर कहा—रमेश, उस समयकी रमाकी उग्र मूर्तिका ध्यान आनेसे अब भी मेरा कलेजा काँप उठता है। उसने दाँत पीसकर कहा, क्या रमेशके बाप मेरे बाबूजीको जेल नहीं भेजना चाहते थे? और अगर वह भेज सकते तो क्या छोड़ देते? चूँ कि औरत-जातका इतना दर्प सहा नहीं जाता, इसलिए मैंने भी गुस्सेमें आकर कह डाला कि अच्छा, रमेश जेलसे आ जाय, उसके बाद इसका विचार होगा!

अभी तक वेणीकी सब बातें रमेश अच्छी तरह अपने मनमें ग्रहण नहीं कर रहे थे। उन्हे यह नहीं मालूम था कि कब मेरे पिताने रमाके पिताको जेल भेजनेका आयोजन किया था। अब उन्हें याद आगया कि ज्यों ही मैं यहाँ आया था, त्यों ही ठीक यही बात रमाकी मौसीके मुँहसे सुनी थी। इसीलिए आगेका हाल सुननेको वे उत्कर्ण हो उठे। वेणीने इसपर लक्ष्य करके कहा—खून-खराबी करनेका तो उसे अभ्यास ही ठहरा! क्या तुम्हें याद नहीं है कि उसने ही अकबर लठैतको भेजा था? लेकिन तुमसे तो उसकी चालाकी चली नहीं, बल्कि, उलटे तुम्हींने उसे सबक सिखा दिया। लेकिन मुझे तो तुम देख ही रहे हो दुबला-पतला आदमी—

इसके बाद वेणीने कुछ सोचकर कल्लूके लड़केका कल्पित विवरण अपने अन्धकारपूर्ण हृदयसे बाहर निकालकर और अपनी भाषामें ग्रथित करके विवृत कर दिया, कह सुनाया।

रमेशने निःश्वास रोककर कहा—उसके बाद ?

वेणीने मलिन मुखसे कुछ हँसकर कहा—उसके बाद जो कछ हुआ, वह क्या मुझे याद है भइया ! मैं कुछ भी नहीं जानता कि कौन किस तरह मुझे अस्पताल ले गया, वहाँ पहुँचनेपर क्या हुआ और किसने मुझे देखा-सुना। दस दिन बाद जब होश आया, तब देखा कि मैं पड़ा हूँ। रमेश, इस बार जो मेरी जान बच गई है, वह केवल माँके पुण्यसे। भला ऐसी माँ और किसकी है रमेश!

रमेश एक भी बात न कह सके। काठकी मूरतकी तरह सख्त होकर बैठे रहे। हाँ, उनके दोनों हाथोंकी दसों उँगलियाँ इकट्ठी होकर वज्रके समान कठोर मुट्ठीके रूपमें परिणत हो गईं। उनके दिमागमें क्रोध और घृणाकी जो भीषण आग जलने लगी, उसका परिमाण जानना भी उनके सामर्थ्यमें न रह गया। वह जानते थे कि वेणी कितना बुरा आदमी है। उन्हें यह भी मालूम था कि ऐसा कोई काम नहीं है जो यह न कर सकता हो। लेकिन फिर भी उनकी अभिज्ञता ऐसी नहीं थी जो वे यह कल्पना कर सकते कि संसारमें कभी कोई आदमी इतना झूठ इस प्रकार निस्संकोच होकर ऐसे अनर्गल भावसे कह सकता है। इसीलिए, रमाके सारे ही अपराध उन्होंने ठीक मान लिये।

उनके लौट आनेसे सारे गाँवमें एक उत्सव-सा शुरू हो गया। रोज सवेरे दोपहर और सन्ध्याको बहुतसे लोग उनके पास आते थे और तरह तरहकी बातें करके उनके साथ बहुत अधिक आत्मीयता दिखलाते थे। अपने जेलमें रहनेके सम्बन्धमें उनके मनमें जो ग्लानि अब तक बच रही थी, वह सब देखते देखते हवा हो गई। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि उनकी अनुपस्थितिमें आस पासके सभी गाँवोंमें एक बहुत बड़ा सामाजिक स्रोत बह गया था। लेकिन जब वह इस बातपर विचार करने लगे कि इन कुछ महीनोंमें ही इतना बड़ा परिवर्तन कैसे हो गया, तब उन्हें मालूम हुआ कि वेणीकी प्रतिकूलताके कारण जो शक्ति पगपगपर प्रतिहत होकर अपना काम ठीक तरहसे नहीं कर सकती थी और इसीलिए जो संचित होती रही थी, वही अब उनकी अनुकूलताके कारण दूने वेगसे प्रवाहित हो रही है। आज वेणीको

उन्होंने कुछ और भी अच्छी तरहसे पहचाना। इस आदमीको इस प्रकार अनिष्टकारी जानकर भी गाँवके सभी लोग उसके कितने कहेमें हैं, यह बात उन्होंने जितने स्पष्ट रूपसे आज देखी, वैसी किसी दिन नहीं देखी थी। अब उसके विरोधसे परित्राण पाकर रमेशने मन ही मन शान्तिकी साँस ली। सिर्फ यही नहीं, एक एक करके सभी लोग उन्हें यह भी बतला गये कि उनके ऊपर जो अन्याय और अत्याचार हुआ है, उसके लिए गाँवके सभी लोगोंको चोट लगी है। इन सब लोगोंकी सहानुभूति प्राप्त करके और वेणीको अपने पक्षमें पाकर आनन्द और उत्साहसे उनकी छाती फूल गई। छः महीने पहले जिन सब आरम्भ किये हुए कामोंको यों ही छोड़कर चले जाना पड़ा था, अब फिर पूरी शक्तिसे उसमें लगनेका संकल्प करके रमेश स्वयं भी इन सब आमोद आह्लादोंमें पड़ गये, सर्वत्र आने-जाने लगे और सभी बातोंमें लोगोंकी खोज-खबर लेनेमें अपना समय बिताने लगे। केवल एक ही विषय ऐसा था जिससे वह पूरा पूरा प्रयत्न करके अपने आपको बिलकुल अलग रखते थे; और वह था रमाका प्रसंग। उन्होंने रास्तेमें ही सुन लिया था कि रमा बीमार है। लेकिन उन्होंने यह कभी न जानना चाहा कि उसे क्या बीमारी है और वह बढ़कर कहाँतक पहुँच गई है। उनकी यही धारणा थी कि मैंने रमाके सभी सम्बन्धोंसे अपने आपको हमेशाके लिए छुड़ाकर अलग कर लिया है। गाँवमें आते ही उन्होंने लोगोंके मुँहसे सुन लिया था कि अकेली रमा ही उनके सब दुःखोंका मूल है, और इसे सभी जानते हैं। इसलिए अब इस विषयमें भी उन्हें सन्देह नहीं रह गया कि इस बारेमें वेणीने जो कुछ कहा, वह झूठ नहीं है।

पाँच-छह दिन बाद वेणीने आकर रमेशको घेरा। पीरपुरकी एक बड़ी जायदादके बँटवारेके बारेमें रमाके साथ बहुत दिनोंसे उनका प्रच्छन्न मन-मुटाव चला आ रहा था। इस उत्तम अवसरपर उस जायदादको हाथमें कर लेना उसका उद्देश था। वेणी ऊपरसे चाहे जो कहे, पर मन ही मन रमासे डरते थे। लेकिन अब वह बीमार पड़ी है, मामला मुकदमा कर न सकेगी और फिर वहाँकी मुसल्मान प्रजा भी रमेशकी बात न टाल सकेगी। इसलिए आगे चलकर चाहे जो हो, पर इस समय बेदखल करनेका इससे अच्छा अवसर फिर नहीं मिलेगा, इस खयालसे वे रमेशसे जिद कर बैठे। जब रमेशने चकित होकर ऐसा करना ना-मंजूर किया, तब वेणीने तरह तरहकी युक्तियाँ देनेके बाद अन्तमें कहा—तुमसे यह काम होगा क्यों नहीं? उसने मुट्ठीमें पाकर

कब तुम्हारे साथ रियायत की है जो आज तुम यह सोचते हो कि वह बीमार पड़ी है ? जब उसने तुम्हें जेल भेजा था, तब तुम भी क्या कम बीमार थे ?

बात बिल्कुल ठीक थी, इसे रमेश अस्वीकार न कर सके। लेकिन फिर भी न जाने क्यों उनका मन रमाके विपक्षमें जानेके लिए राजी न हुआ। वेणीकी हजारों कटु उत्तेजनाओंपर भी ज्यों ही उन्हें यह ध्यान आता था कि रमा इस समय असहाय अवस्थामें बीमार पड़ी है, त्यों ही उनका सारा विरोधी भाव संकुचित होकर एक छोटेसे बिन्दुके समान हो जाता था और इसका स्पष्ट कारण स्वयं उन्हें ही ढूँढे नहीं मिलता था। रमेश चुप रह गये। काम होता है, यह जाननेपर धैर्य धारण करना भी वेणी जानते थे। इसलिए उस समय और अधिक आग्रह न करके वे चले गये।

इस बार एक चीजने रमेशकी दृष्टिको बहुत आकृष्ट किया। यह वह पहलेसे जानते थे कि विश्वेश्वरीके मनमें कभी संसारके प्रति विशेष आसक्ति नहीं थी; लेकिन इस बार जेलसे लौटनेपर उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि उनकी अनासक्ति मानों वितृष्णामें परिणत हो गई है। जिस दिन जेलसे छूटनेपर वे वेणीके साथ उनके घर गये थे, उस दिन विश्वेश्वरीने आनन्द प्रकट किया था, और गद्‌गद् स्वरसे अनेकानेक आशीर्वाद दिये थे; लेकिन फिर भी न जाने इन सबमें कौन-सी ऐसी बात थी जिससे उन्हें कुछ कष्ट ही हुआ था। आज अचानक बातों बातोंमें उन्होंने सुना कि विश्वेश्वरी काशीवास करनेका संकल्प करके जा रही हैं और अब लौटेंगी नहीं। यह सुनकर वह चौंक पड़े। कहाँ, मैं तो कुछ नहीं जानता ! इधर पाँच छः दिनसे बहुत-से कामोंमें फँसे रहनेके कारण उनसे भेंट नहीं हुई थी लेकिन जिस दिन हुई थी, उस दिन तो उन्होंने कोई बात नहीं कही ! यद्यपि वे जानते थे कि अपनी ओरसे अपनी या पराई चर्चा-आलोचना करनेसे उन्हें प्रेम नहीं है, लेकिन जब उन्होंने आजके इस समाचारके साथ अपनी उस दिनकी स्मृतिको पास पास आँखोंके सामने रखकर मिलाया तब उन्हें विश्वेश्वरीके इस एकान्त-वैराग्यका अर्थ मालूम हो गया। अब उन्हें इस बातमें कुछ भी सन्देह न रह गया कि ताईजी सचमुच ही विदा ले रही हैं। जब उन्होंने यह सोचा कि ताईजीका यहाँ न रहना कितना बड़ा अभाव होगा तब उनकी आँखोंमें आँसू भर आये। अब

वह क्षण-भरका भी विलम्ब किये विना उनके यहाँ जा पहुँचे। उस समय कोई नौ-दस बजे होंगे। घरमे प्रवेश करते ही दासीने बताया कि वह मुकर्जी-बाड़ी गई हैं। रमेशने चकित होकर पूछा—इस समय?

दासी बहुत दिनोंकी पुरानी थी। उसने मुस्कराकर कहा—भला माँजीके लिए समय और असमय क्या! और फिर आज रमाके छोटे भाईका जनेऊ जो है!

यतीन्द्रका जनेऊ? रमेशने और भी चकित होकर कहा—हैं! यह तो कोई जानता ही नहीं।

दासीने कहा—उन्होंने किसीसे कहा ही नहीं है। और कहा भी होता तो कोई उनके यहाँ खाने नहीं जाता। रमा बहनको मालिकोंने जातिसे अलग जो कर रखा है।

रमेशके आश्चर्यकी सीमा न रह गई। कुछ देरतक चुप रहनेके बाद उन्होंने इसका कारण पूछा, तो दासीने लज्जासे गरदन घुमाकर कहा—क्या जाने छोटे बाबू, रमा बहनकी इधर बहुत भद्दी बदनामी हुई है न! हम लोग गरीब आदमी ठहरे। इन सब बातोंको क्या जानें!

कहते कहते दासी वहाँसे खिसक गई। कुछ देर तक चुपचाप खड़े रहनेके बाद रमेश अपने घर लौट आये। यह तो उन्होंने बिना पूछे ही समझ लिया कि यह क्रुद्ध वेणीका बदला है। लेकिन इसका ठीक ठीक अनुमान करना भी उनके लिए संभव नहीं था कि उनका क्रोध किस बातके लिए है और किस बातकी प्रतिहिंसाकी कामनासे किस विशेष कदर्य धारामें उन्होंने रमाकी कु-ख्याति को प्रवाहित कर दिया है।

१९

उसी दिन तीसरे प्रहर एक अचिन्तनीय घटना हो गई। अदालतके फैसलेकी उपेक्षा करके कैलास हज्जाम और शेख मोतीलाल दोनों अपने सब कागज और सबूत लेकर रमेशकी शरणमें आये। रमेशने अकृत्रिम विस्मयके साथ पूछा—भाई, हमारा फैसला तुम लोग मानोगे भी?

वादी और प्रतिवादी दोनोंने उत्तर दिया—मानेंगे क्यों नहीं बाबूजी! भला हाकिमसे आपकी विद्या या बुद्धि किस बातमें कम है! और फिर हाकिम और

अफसर जो कुछ होते हैं, वह सब आप ही जैसे भले आदमियोंमेंसे तो होते हैं। कलको अगर आप सरकारी नौकरी करके हाकिम हो जायँ और हम लोगोंके मुकद्दमेका फैसला करने लगें, तो आपका वह फैसला भी तो हम लोगोंको मानना पड़ेगा। उस समय तो यह कहनेसे काम चलेगा नहीं, कि आपका फैसला नहीं मानेंगे।

यह सुनकर रमेशका हृदय मारे अभिमान और आनन्दके भर गया। कैलासने कहा—आपको तो हम दोनों ही आदमी अपनी अपनी बात अच्छी तरह समझा सकेंगे। लेकिन अदालतमें ऐसा हो नहीं सकेगा। और फिर बाबूजी, एक बात यह भी तो है कि जब तक वहाँ वकीलोंको गाँठसे निकालकर मुट्ठीभर रुपये न दिये जायँ, तब तक कोई काम ही नहीं हो सकता। यहाँ एक पैसेका भी खर्च नहीं। न तो वकीलोंकी खुशामद करना पड़ेगी और न अदालत तक दौड़ कर अपने पैर तोड़ने पड़ेंगे। सो बाबूजी, आप जो कुछ हुकुम दे देंगे, वह चाहे अच्छा हो और चाहे बुरा, हम लोग मान लेंगे, और आपके चरणोंकी धूल अपने सिरसे लगाकर अपने अपने घर चले जायँगे। भगवानने हम लोगोंको अच्छी बुद्धि दे दी; इसीलिए अदालतसे लौटकर आपकी शरणमें आये हैं।

एक छोटेसे नालेके सम्बन्धमें इन लोगोंका झगड़ा था। उस विषयके जो कुछ मामूलीसे दस्तावेज और दूसरे कागज थे, वे सब उन्होंने रमेशको दे दिये और दूसरे दिन सवेरे आनेकी कहकर चले गये। रमेश स्थिर होकर बैठे रहे। यह घटना उनकी कल्पनाके बाहरकी थी। उन्होंने सुदूर भविष्यमें भी इतनी बड़ी आशाको अपने मनमें स्थान नहीं दिया था। उनका निर्णय चाहे मानें और चाहे न मानें, परन्तु आज ये लोग सरकारी अदालतके बाहर झगड़ा निबटानेके अभिप्रायसे रास्तेसे लौटकर मेरे पास आये हैं, इसी एक बातने उनके हृदयमें आनन्दका स्रोत बहा दिया। यद्यपि यह कोई बड़ी बात नहीं थी, गाँवके साधारणसे दो आदमियोंका बहुत ही तुच्छ-सा झगड़ा था, लेकिन फिर भी इस तुच्छ-सी बातके आधारपर उनके मनमें अनन्त सम्भावनाओंके आकाश-कुसुम खिलने लगे। अपनी इस अभागिनी जन्म-भूमिके लिए भविष्यमें वे क्या क्या न कर सकेंगे, इसका मानों कहीं कोई हिसाब या कूल-किनारा ही वे न पा सके। बाहर वसन्त ऋतुकी ज्योत्स्नासे सारा आकाश भर रहा था। उस तरफ देखते ही अचानक उन्हें रमा याद आ गई। और कोई दिन होता तो साथ ही साथ

उनके सारे शरीरमें आग-सी लग जाती। परन्तु आज आग लगना तो दूर रहा, उन्होंने जरा-सी चिनगारीके अस्तित्वका भी अनुभव नहीं किया। उन्होंने मन ही मन कुछ हँसकर उसके उद्देश्यसे कहा—रमा, अगर तुम यह जानती होतीं कि तुम्हारे हाथसे भगवान् मुझे इस प्रकार सार्थक करेंगे और तुम्हारा विष मेरे भाग्यसे इस तरह अमृत बन जायगा, तो मैं समझता हूँ कि तुम कभी मुझे जेल न भेजना चाहतीं। कौन है?

"छोटे बाबू, मैं हूँ राधा। रमा बहनने आपसे एक बार भेंट कर जानेके लिए कहलाया है।"

रमाने भेंट करनेके लिए कहने दासी भेजी है! रमेश अवाक् होकर देखते रह गये। आज न जाने यह कौन नष्ट-बुद्धि देवता मेरे साथ इस तरहके अनोखे अनोखे मजाक कर रहा है! दासीने कहा—छोटे बाबू, अगर आप दया करके—।

"वह कहाँ हैं?"

दासीने कहा—घरमें ही पड़ी हैं। (कुछ ठहरकर) कल तो फिर समय नहीं मिलेगा। इसलिए अगर इसी समय—।

"अच्छा, चलो चलता हूँ।" कहकर रमेश उठ खड़े हुए।

रमेशको बुलानेके लिए दासी भेजकर रमा एक तरहसे चौकन्नी होकर बिछौनेपर पड़ी थी। दासीके बतलानेके अनुसार रमेशने कमरेमें प्रवेश किया। उनके एक चौकी खींचकर बैठते ही रमाने मानों केवल अपने मनके जोरसे ही अपने आपको खींचकर रमेशके पैरोंके पास डाल दिया। कमरेके एक कोनेमें एक दीया टिमटिमा रहा था। रमेश उसके मन्द प्रकाशमें रमाका जो कुछ अस्पष्ट आकार देख सके उससे उसकी शारीरिक अवस्थाके सम्बन्धमें उन्हें कुछ भी मालूम न हो सका। अभी रास्तेमें आते आते उन्होंने मन ही मन जो संकल्प ठीक किये थे, रमाके सामने बैठते ही वे सब आदिसे अन्त बे-ठीक हो गये। थोड़ी देरतक चुप रहनेके बाद उन्होंने कोमल स्वरसे पूछा—अब कैसी हो रानी?

रमा उनके पैरोंके पाससे खिसककर कुछ पीछे हटकर बैठ गई और बोली—आप मुझे रमा कहकर ही पुकारा करें।

मानों किसीने रमेशकी पीठपर चाबुक मार दिया। उन्होंने तुरन्त ही कुछ कठोर होकर कहा—अच्छी बात है। सुना था कि तुम बीमार हो। इसलिए पूछ रहा था कि अब कैसी हो! नहीं तो नाम तुम्हारा चाहे जो हो, उस नामसे पुकारनेकी मेरी इच्छा भी नहीं है और न आवश्यकता।

रमाने सब समझ लिया। थोडी देर स्थिर रहकर उसने धीरे धीरे कहा, "अब मैं अच्छी हूँ।" फिर कहा, "मैंने जो आपको बुला भेजा, इससे शायद आपको बहुत आश्चर्य हुआ होगा। लेकिन—"

रमेश बीचमें ही तीव्र स्वरसे बोल उठे—नहीं, आश्चर्य नहीं हुआ। अब तुम्हारे किसी कामसे चकित होनेके मेरे दिन निकल गये। लेकिन बताओ कि बुलवाया किस लिए है?

इस बातने रमाके हृदयपर कितना भारी आघात किया, यह रमेश न जान सके। थोडी देरतक चुपचाप सिर झुकाकर बैठे रहनेके बाद रमाने कहा—रमेश भइया, आज मैंने दो कामोंके लिए आपको कष्ट दिया है। मैंने आपका कितना अपराध किया है, यह तो मै ही जानती हूँ। लेकिन फिर भी यह मुझे निश्चय मालूम था कि आप आवेंगे और मेरे इन दो अन्तिम अनुरोधोंको अस्वीकार न करेंगे।

सहसा आँसुओंके भारसे उसका स्वर भंग हो गया। वह इतना स्पष्ट था कि रमेशको पता चल गया और पलक मारते ही उनका पुराना स्नेह उमड़ पडा। आज जब उन्हें निश्चित रूपसे इस बातका अनुभव हुआ कि इतने घात-प्रतिघात होनेपर भी वह स्नेह आजतक भी मरा नहीं है, केवल निर्जीव और अचेत होकर पडा था, तो उन्हें स्वयं भी आश्चर्य हुआ। थोड़ी देरतक चुप रहनेके बाद उन्होंने पूछा—तुम्हारा क्या अनुरोध है?

रमाने चकितकी तरह सिर उठाकर फिर नीचा कर लिया। कहा—बडे भइया आपकी सहायतासे जिस जायदादपर दखल करना चाहते हैं, वह मेरी निजकी है, अर्थात् उसमें पन्द्रह आना हिस्सा मेरा है और एक आना हिस्सा आप लोगोंका। उसे मैं आपके हाथ दे जाना चाहती हूँ।

रमेश फिर कुछ गरम हो गये और बोले—तुम डरो मत। चोरी करनेमें मैंने पहले भी किसीकी सहायता नहीं की और अब भी नहीं करूँगा। और

अगर दान ही करना चाहती हो तो उसके लिए और बहुतसे लोग है। मैं दान नही लेता।

पहले होता तो रमा तुरन्त कह बैठती कि मुकर्जी-वंशका दान लेनेसे घोषालोका अपमान नहीं होता। लेकिन आज उसके मुँहसे यह बात नहीं निकली। उसने विनीत भावसे कहा— रमेश भइया, मैं जानती हूँ कि आप चोरी करनेमें सहायता नहीं देंगे। और यह भी जानती हूँ कि अगर दान लेगे भी, तो अपने लिए नही लेगे। लेकिन बात यह नही है। यदि कोई दोष करता है तो उसे दण्ड मिलता है। मैंने जो अनेक अपराध किये हैं उन्हींके दण्डके रूपमें इसे क्यो नहीं ले लेते?

रमेशने थोड़ी देरतक चुप रहकर कहा—और तुम्हारा दूसरा अनुरोध क्या है?

रमाने कहा—मैं अपने यतीन्द्रको आपके हाथ सौंपती हूँ। उसे अपने ही जैसा 'मनुष्य' बनाना, जिससे बडा होनेपर वह आपकी तरह हँसते हँसते स्वार्थ-त्याग कर सके।

अब रमेशके मनकी सारी कठोरता गल गई। रमाने आँचलसे अपने आँसू पोछकर कहा—यह अपनी आँखोंसे तो नहीं देख पाऊँगी, लेकिन मैं निश्चित रूपसे जानती हूँ कि यतीन्द्रके शरीरमे उसके पूर्व-पुरुषोका रक्त है। त्याग करनेकी शक्ति उसकी अस्थि-मज्जामें मिली हुई है। शिक्षा देनेसे, सभव है, वह भी एक दिन आपकी ही तरह सिर ऊँचा करके खडा हो सके।

रमेशने तत्काल ही उसका उत्तर न दिया। वह खिड़कीके बाहर चाँदनीसे भरे हुए आकाशकी ओर देखते रहें। उनके मनमे एक ऐसी व्यथा भरती जा रही थी, जिसका परिचय उन्हें आजसे पहले और कभी नहीं मिला था। बहुत देर तक चुप रहने बाद रमेशने मुँह फिरा कर कहा—देखो, इन सब बातोंमें अब मुझे मत घसीटो। मैं अनेक दुःखो और कष्टोंके बाद प्रकाशकी एक शिखा प्रज्वलित कर सका हूँ। इससे मुझे डर लगता है कि कहीं वह फिर न बुझ जाय।

रमाने कहा—नहीं रमेश भइया, अब डर नहीं है। आपका यह प्रकाश अब नहीं बुझेगा। ताईजीने कहा था कि आपने बहुत दूरसे आकर और बहुत ऊँचा-

ईंपर बैठकर काम करना चाहा था। इसीसे उसमें इतनी बाधाएँ और इतने विघ्न आये। अब हम लोगोंने अपने दुष्कर्मोंके भारसे आपको नीचे झुकाकर ठीक स्थानपर ही प्रतिष्ठित कर दिया है। अब आप हम ही लोगोंके बीचमें आकर खड़े हो गये हैं, इसीलिए आपको डर लगता है। पहले होता तो यह आशंका मनमें स्थान ही न पाती। उस समय आप हमारे ग्राम्य समाजके बाहर थे; पर अब उसीके एक व्यक्ति हो गये हैं। इसीलिए अब आपका यह प्रकाश मद्धिम नहीं होगा। अब तो वह दिनपर दिन उज्ज्वल ही होता जायगा।

अचानक ताईजीके नामसे रमेश उद्दीप्त हो उठे। बोले—क्यों रमा, तुम ठीक तरहसे जानती हो कि अब मेरी जलाई हुई यह दीप-शिखा नहीं बुझेगी?

रमाने दृढ़ स्वरसे कहा—हाँ, मैं ठीक तरहसे जानती हूँ। यह उन्हीं ताईजीके मुँहकी बात है जो सब कुछ जानती हैं। यह काम आपका ही है। रमेश भइया, मेरे यतीन्द्रको अपने हाथमें लेकर और मेरे अपराध क्षमा करके आज आप मुझे आशीर्वाद देकर विदा कर दें, जिससे मैं निश्चिन्त होकर अपने स्वामीके पास जा सकूँ।

रमेशका हृदय वज्र-गर्भ मेघकी तरह रहरह कर चमकने लगा। लेकिन वह सिर नीचा करके चुपचाप बैठे रहे।

रमाने कहा—मेरी एक बात और आपको माननी पड़ेगी। बतलाइए मानिएगा?

रमेशने कोमल स्वरसे पूछा—कौन-सी बात?

रमाने कहा—मेरी किसी बातको लेकर कभी आप बड़े भइयाके साथ झगड़ा न करना।

रमेश समझे नहीं, उन्होंने पूछा—इसका मतलब?

रमाने कहा—इसका मतलब यदि कभी सुन पाओ, तो उस दिन सिर्फ यही याद कर लेना कि मैं किस तरह चुपचाप सब कुछ सहन करके चली गई हूँ, किसी एक भी बातका प्रतिवाद किये बिना। एक दिन जब बहुत ही असह्य मालूम हुआ था तब ताइजीने आकर कहा था कि बेटी, मिथ्याको बार बार हिला-डुलाकर सचेत करते रहनेसे उसकी आयु बढ़ जाती है। अपनी असहिष्णुतासे उस मिथ्याकी आयु और बढ़ा देनेके समान कोई दूसरा पाप नहीं है। उनका यही उपदेश याद रखकर मैं अपने सारे दुःख दुर्भाग्यको काट सकी हूँ। और रमेश भइया, तुम भी यह बात कभी न भूलना।

रमेश चुपचाप उसकी ओर देखते रहे। रमाने थोड़ी देर बाद कहा— रमेश भइया, आज तुम यह खयाल करके अपने मनमें दुःख न करना कि तुम मुझे क्षमा नहीं कर सकते हो। मैं निश्चय जानती हूँ कि आज जो बात कठिन जान पड़ती है, वही किसी दिन सीधी और सहज हो जायगी। मेरे मनमे इसी लिए अब कोई क्लेश नहीं है कि उस दिन तुम मेरे सभी अपराध सहज ही क्षमा कर दोगे। मैं कल जाती हूँ।

रमेशने चकित होकर पूछा — कल? कहाँ जाओगी?

रमाने कहा—जहाँ ताईजी मुझे ले जायँगी वहीं।

रमेशने कहा—लेकिन मैंने तो सुना है कि अब वह लौटकर नहीं आवेगी।

रमाने धीरेसे कहा—मैं भी नहीं आऊँगी। मैं भी तुम्हारे चरणोंसे अब सदाके लिए विदा लेती हूँ।

इतना कहकर रमाने झुककर धरतीमे माथा टेक दिया। रमेशने कुछ देर तक सोचनेके बाद एक लम्बा साँस और छोड दिया और खड़े होकर कहा— अच्छा, जाओ। लेकिन क्या मैं यह भी नहीं जान सकूँगा कि क्यों विदा ले रही हो?

रमा चुप हो रही। रमेशने फिर कहा—तुम क्यों अपनी सब बातें इस तरह छिपा रखकर चली जा रही हो, यह तो तुम्ही जानो; लेकिन अब मैं भी अपने सारे शरीर और मनसे भगवानसे प्रार्थना करता हूँ कि वह दिन आवे, जब मैं तुम्हें अपने समस्त अन्तःकरणसे क्षमा कर सकूँ। तुम्हे क्षमा न कर सकनेके कारण मुझे जो कष्ट हो रहा है, उसे केवल मेरे अन्तर्यामी ही जानते हैं।

रमाकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी। परन्तु उस अत्यन्त मन्द प्रकाशमें रमेश उसे न देख सके।

रमाने चुपचाप दूरसे फिर एक बार प्रणाम किया और उसके बाद रमेश तुरन्त ही वहाँसे बाहर निकल गये। रास्तेमें चलते चलते उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि मेरा सारा भविष्य और काम-काज करनेका सारा उत्साह मानो पलक मारते ही इसी चाँदनीकी तरह अस्पष्ट छायामय हो गया है।

दूसरे दिन सवेरे जब रमेश ताईजीके घर पहुँचे, तब देखा कि विश्वेश्वरी घरसे निकलकर पाल्कीमें बैठ रही हैं। रमेशने दरवाजेके पास मुँह ले जाकर और आँखोंमें आँसू भरकर कहा—ताईजी, हम लोगोंसे ऐसा कौन-सा अपराध हुआ, जिससे तुम हमें इतनी जल्दी छोड़कर चली जा रही हो?

विश्वेश्वरीने अपना दाहिना हाथ बढ़ाकर रमेशके सिरपर रखा और कहा। "बेटा, अपराधोंकी बात कहने जाऊँगी तो वह कभी समाप्त न होगी। इसलिए उसकी जरूरत नहीं।" उसके बाद कहा, "रमेश, अगर मै यहाँ मरूँगी तो वेणी ही मेरे मुँहमे आग देगा। उस दशामें मेरी किसी तरह मुक्ति नहीं होगी, बेटा, मेरा इह-काल तो जलते ही जलते बीता। अब कहीं पर-काल भी इसी तरह जलते जलते न बिताना पड़े, बस इसी डरसे मैं यहाँसे भाग रही हूँ।"

रमेश इस प्रकार स्तम्भित हो गये, मानों उनपर वज्र आ टूटा हो। आज ताईजीकी इस एक ही बातसे रमेशको जितनी अच्छी तरह मालूम हो गया कि उनके हृदयमे माताकी ज्वाला किस तरह जल रही है, उतनी अच्छी तरहसे पहले कभी नहीं मालूम हुआ था। कुछ देरतक स्थिर रहकर उन्होंने पूछा—ताईजी, रमा क्यो जा रही है?

विश्वेश्वरीने एक प्रबल निःश्वास रोककर और गला साफ करके कहा—बेटा, ससारमे उसके लिए कोई स्थान नही है; इसीलिए मैं उसे भगवानके चरणोंमे लिये जा रही हूँ। मै नहीं कह सकती कि वहाँ जानेपर भी वह बचेगी या नही। लेकिन अगर किसी तरह जीती रही तो मैं उससे जीवन-भर इसी बातकी मीमासा करनेका अनुरोध करूँगी कि भगवानने उसे इतना रूप, इतना गुण और इतना बडा हृदय देकर क्यों इस संसारमें भेजा था और फिर क्यों विना किसी दोप या अपराधके इस तरह उसके सिरपर दुःखका बोझ लादकर उसे संसारके बाहर फेक दिया। इसमें भगवानका ही कोई अर्थ-पूर्ण और मंगल-जनक अभिप्राय छिपा हुआ है या यह केवल हम लोगोंके समाजके ही खयालोंका खेल है! भइया रमेश, संसारमें उससे बढ़कर दुःखिनी शायद और कोई नहीं है।

इतना कहते कहते ताईजीका गला भर आया। उन्हें इतनी अधिक व्याकुलता प्रकट करते हुए आज तक किसीने न देखा था। रमेश स्तब्ध हो रहे। विश्वेश्वरीने कुछ देर बाद ही कहा—रमेश, तुम्हारे लिए मेरा यही आदेश रहा कि तुम कभी उसको गलत न समझना। चलते समय मैं किसीकी शिकायत नहीं करना चाहती। लेकिन तुम कभी भूलकर भी मेरी इस बातपर अविश्वास न करना कि तुम्हारी उससे अधिक मगलाकांक्षिणी और कोई नहीं है।

रमेशने कहा—लेकिन ताईजी—

ताईजीने जल्दीसे उन्हें बीचमें ही रोककर कहा—रमेश, इसमें लेकिन-वेकिन कुछ भी नहीं हैं। तुमने जो कुछ सुना है वह सब झूठ है; और जो कुछ जाना है, सब गलत है। लेकिन अब इस अभियोगकी यहीं समाप्ति ही जानी चाहिए। उसका अन्तिम अनुरोध यही है कि तुम समस्त अन्यायों और सब प्रकारके हिंसा-द्वेषोंको बिलकुल तुच्छ करके अपने काम सदा इसी तरह खूब जोरोंसे चलाते रहना। इसीलिए उसने अपना मुँह बन्द रखकर सब कुछ सहन किया है। रमेश उसके प्राणोंपर आ बनी है; फिर भी उसने मुँहसे एक बात भी नहीं निकाली।

ठीक इसी समय रमेशको कल रातको रमाके मुँहसे निकली हुई और भी एक-दो बातें याद हो आई जिनसे दुर्जय रुलाईका वेग मानों उनके ओठों तक आ गया। उन्होंने जल्दीसे सिर नीचा करके और शरीरकी सारी शक्ति लगाकर कह डाला—ताईजी, उससे कह देना कि ऐसा ही होगा।

इसके बाद रमेशने हाथ बढ़ाकर किसी तरह उनके चरणोंकी धूल लेकर सिरसे लगाई और वे तेजीसे बाहर निकल गये।

शरत्-साहित्यमें वृद्धि

छह नये भाग और प्रकाशित हुए, अब तीस भाग हो गये

[शरत्साहित्यके २४ भागोंके बाद छह भाग और प्रकाशित हुए। कई कारणोंसे १० वर्ष तक एक भी भाग प्रकाशित नहीं हुआ था। अब फिरसे प्रकाशन–कार्य प्रारंभ किया गया है और आशा है कि आगे भी यह काम चालू रहेगा और इस पुस्तक-मालामें पूरा शरत्साहित्य प्रकाशित हो जायगा।]

२५ शरत्-पत्रावली

स्व० शरच्चन्द्र चट्टोपाध्यायने अपने मित्रों, साहित्यिकों और लेखकोंको समय समयपर जो छोटे बड़े पत्र लिखे थे, उन सबका संग्रह इसमें किया गया है। इन पत्रोंमें शरत् बाबूके अन्तरंगका, उनके उदार विचारोंका, और साहित्यमें उनकी गहरी पैठका आश्चर्यजनक परिचय मिलता है। अपने समयके लेखकोंको उन्होंने किस तरह लेखन-कार्यका मर्म समझाया है और शिक्षा दी है, वह प्रत्येक लेखकके समझने लायक है। उनकी रचनाओंपर उस समय जो अनुकूल प्रतिकूल चर्चायें हुई थीं, वे भी बड़ी महत्त्वकी हैं। शरत्साहित्यका अध्ययन मनन करनेवालोंके लिए इन चिट्ठियोंका बहुत उपयोग है। अनेक पत्र-सम्पादकोंने इस भागकी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की है। अनुवादकर्त्ता—डॉ० महादेव साहा। पृष्ठ संख्या १७६। मूल्य १॥)

२६ जागरण अरक्षणीया आदि

इस भागके शुरूके ११० पृष्ठोंमें शरत्बाबूके जागरण, आगामीकाल, आनेकी आशामें, रस-चक्र और भला बुरा ये पाँच अधूरे उपन्यास प्रकाशित किये गये हैं। बड़े ही सुन्दर हैं, खयाल आता है कि यदि ये पूरे हो जाते तो कितना अच्छा होता! क्या कोई इन्हें अपनी कल्पनासे पूरा नहीं कर सकता? अन्तके ६६ पृष्ठोंमें ‘अरक्षणीया’ नामक सम्पूर्ण और अतिशय करुण उपन्यास दिया गया है। इस भागका अनुवाद भी डॉ० महादेव साहाने किया है। पृ० सं० १७६। मू० १॥)

२७–२९ चरित्रहीन

शरच्चन्द्र चटर्जीका महान् कलापूर्ण उपन्यास। यह दो स्थानोंसे निकल चुका है फिर भी इसे शरत्साहित्यके प्रेमियोंके आग्रहसे सुलभ-साहित्य-मालामें प्रकाशित किया गया है। माधुरीसम्पादक पं० रूपनारायणका किया हुआ यह अतिशय प्रामाणिक और सुन्दर अनुवाद बिल्कुल मौलिक-सा मालूम होता है। इसका एक एक वाक्य मूलसे मिलाकर शुद्ध किया गया है। पृ० सं० ४८८ मूल्य ४॥)

इसके विषयमें शरत्बाबूने एक पत्र-सम्पादकको लिखा था, "केवल नाम और प्रारभको देखकर ही इसे 'चरित्र-हीन' मत समझ बैठना। मैं नीति-शास्त्रका एक विद्यार्थी हूँ, सच्चा विद्यार्थी हूँ। नीतिशास्त्र समझता हूँ और किसीसे कम समझता हूँ, ऐसा मेरा खयाल नहीं है।" एक दूसरे पत्र-सम्पादकको लिखा था, "यह सुनीतिसञ्चारिणी सभाके लिए भी नहीं है और स्कूलपाठ्य भी नहीं है। अगर वे टाल्स्टायके 'रिजरेक्शन' को एक बार भी पढ़ते हैं तो चरित्रहीनके विषयमें कहनेको कुछ भी नहीं रहेगा। जो कलाके तौरपर महान् पुस्तक है, उसमे दुश्चरित्रकी अवतारणा होगी ही। क्या कृष्णकान्तके वसीयतनामेमें नहीं है? ..अंग्रेजी साहित्यमें जो कुछ वास्तवमें अच्छा है, उसमे इससे कहीं अधिक अनैतिक घटनाओंकी सहायता ली गई है।"

३०–विराज बहू

भारतीय स्त्रियोंके स्वभाव और अनन्त अटूट पति-प्रेमका चित्रण करनेवाला अनोखा उपन्यास। अनुवादकर्त्ता पं० रूपनारायण पाण्डेय। (प्रेसमें)